स्त्री-समाज

(स्त्रियों की शिक्षा पर आधुनिक ढंग से प्रस्तुत महान-पुस्तक)

लेखिका—
श्रीमती ज्योतिर्मयी ठाकुर

प्रकाशक—
हिन्दी-प्रचारक पुस्तकालय
पो० बक्स नं० ७०
ज्ञानवापी बनारस सिटी

प्रथमबार]   १९४९   [मूल्य २।।)

प्रकाशक—
श्रीकृष्णचन्द्र बेरी
हिन्दी-प्रचारक पुस्तकालय
पो० बक्स नं० ७०
ज्ञानवापी बनारस सिटी

चित्रकार—
आर० मल्लिक

परिचय

पुस्तक के आरम्भ में, पुस्तक का परिचय देना लेखक के लिए कुछ आवश्यक-सा हो गया है उसी आधार पर, मुझे यहाँ पर कुछ लिखना है। पुस्तक का परिचय तो वास्तव में पुस्तक ही देती है।

इस पुस्तक का नाम मैंने स्त्री-समाज रखा है और उसके प्रत्येक पन्ने में, मैंने स्त्री-जीवन की कमजोरियों को खोजने, उन पर प्रकाश डालने एवम् उनके दूर करने के लिए, बार-बार स्त्रियों से प्रार्थना की है। मैं जानती हूं आज का स्त्री-समाज पहले का समाज नहीं है। स्त्रियों की निर्बलता, दिन-पर-दिन, स्त्रियों का साथ छोड़ रही है। शिक्षा का प्रचार और प्रसार स्त्री-जाति की सहायता कर रहा है।

जीवन को उन्नत बनाने के लिए, सब से सीधा मार्ग पुस्तकों का अध्ययन है। इसके बिना कोई भी समाज, कभी अपनी उन्नति नहीं कर सका। स्त्रिों के लिये भी इसी की जरूरत है। प्रसन्नता की बात यह है कि इस ओर स्त्रियों का ध्यान गया है और वे उस की आवश्यकता को अनुभव करने लगी हैं। उनकी यह प्रवृत्ति स्त्री-जीवन के शुभ भविष्य की सूचना देती है।

मेरे जीवन का यह एक सुख पूर्ण कार्य है कि मैं अपनी तथा अपने देश की बहनों के जीवन की त्रुटियों को समझने की चेष्टा करूं और उस निर्णय पर पहुँचूं, जिससे स्त्री-जाति

का हित हो सकता है। इसी उद्देश्य को लेकर मैंने स्वयम् अध्ययन किया है और जो कुछ मुझे मिला है, उसे एकत्रित करके पुस्तक के पन्नों में भरने की मैंने चेष्टा की है।

स्त्री-जाति के प्रति मेरे जीवन की ये सेवायें हैं। इनके द्वारा स्त्री-समाज का कितना कल्याण होगा, इसे मैं नहीं जानती। मैं तो केवल इतना ही जानती हूं कि सेवा के इस कार्य से मुझे सुख और सतोष मिलता है। यदि शिक्षित स्त्रियों और लड़कियों ने इसी मार्ग का अनुसरण किया तो स्त्री-जाति का भविष्य, अविलम्ब ही उज्ज्वल बन सकेगा, इसमे सन्देह नहीं।

कमलिनी कार्यालय, कानपुर
२४ अक्टूबर १६४७

—ज्योतिर्मयी ठाकुर

विषय-सूची

स्त्री-समाज

छोटे और बड़े की झूठी विवेचना

समाजमें स्त्री-जीवन को लेकर जो प्राय: आलोचना होती है, उसमे स्त्रियों की ओर अंधकार फैला रखा है। पुराने विचारोंके समर्थक पुरुष बिलकुल निराधार बातें करते है। न उनमें सत्य होता है और न उनसे समाज का कल्याण। स्पष्ट बात यह है कि इस प्रकार की बातोंसे न केवल स्त्रियोंकी हानि होती है, बल्कि समाज भी निर्बल बनता है।

स्त्री-पुरुषोंसे मिलकर समाज बना है। दोनों ही उसके अंग हैं। समाजके अस्तित्वको सुरक्षित बनाये रखनेके लिये दोनों स्तम्भ हैं। इनमें एक के भी निर्बल होनेसे समाज सुदृढ़ नहीं रह सकता। यह बहुत साधारण बात है। इस अवस्थामे, यह सोचना कि स्त्रियां निर्बल और अयोग्य होती हैं, न केवल अनावश्यक है वरन् समाज को निर्बल बनाना है।

स्त्रियोंके विरुद्ध, पुरुषों की आलोचनायें मैंने बहुत सुनी हैं। जो कुछ सुना है, उससे मैंने यह भी समझा है कि साधारण अवस्थाके पुरुष ही इस प्रकार की झूठी विवेचना अधिक करते हैं। इसका कारण है। मनुष्य समाज की व्यवस्था कब हुई, इसका सहज ही निर्णय नहीं हो सकता। बहुत पुरानी बात है। उसकी छान बीनमें पड़ने का कोई

अर्थ भी नहीं है। सत्य यह है कि समाज को सुदृढ़ और शांतिपूर्ण बनाने के लिये किसी प्राचीन युगमें समाज को नियमोंमें बांधा गया था और समझा गया था कि इस व्यवस्था द्वारा स्त्री और पुरुष अपने जीवन में शान्ति और सुख की रचना कर सकेंगे। यही हुआ भी। समाज सदा-सर्वदा के लिये, समाज बन सका। प्रत्येक स्त्री-पुरुषको नियमित जीवन पालन करने की आवश्यता हुई और दोनों को उसके नियम अनिवार्य रूपसे मानने पड़े।

इतना सब होने पर भी एक त्रुटि समाज में चलती रही। पुरुषों का स्थान, स्त्रियों की अपेक्षा अधिक सम्मानपूर्ण बना। फल यह हुआ कि समाज की व्यवस्था का कार्य पुरुषों के ही हाथ में रहा। उसमें स्त्रियोंके न होने से जो नियम और उपनियम बने, उन्होंने पुरुषों को ही विशेषता दी। परिणाम यह हुआ कि स्त्री और पुरुषके बीच एक दीवार खड़ी हो गयी। उस दीवार में अनेक अर्थों में, एक दूसरे को, एक दूसरे से दूर करने का काम किया। जिस आदर्श भावना को लेकर मानव समाज की रचना हुई थी, वह पूर्ण रूपसे सफल न हो सकी।

जीवन की कटुता स्त्री को कुछ भी बना दे, यह दूसरी बात है किन्तु तथ्य यह है कि स्त्री स्वभावतः शिष्ट और अत्यन्त विनम्र है। प्रकृति ने इस प्रकार के गुण स्त्री-जीवन में उत्पन्न किये हैं। इसी लिये स्त्री-समाज विरुद्ध वातावरण के प्रति प्राचीन काल में विद्रोह नहीं कर सका। फल यह हुआ कि समाज उसके प्रति दिन-पर-दिन निर्दय होता चला गया। शासन के भूखे पुरुषों ने इसमें अपना गौरव समझा। उनके विचार और व्यवहार सत्य के विरुद्ध चलते रहे। हुआ यह

कि उन्होंने समाज को जैसा चाहा, चलाया और उसके जीवन को तोड़ा और मरोड़ा। समाज के मूल उद्देश्योंका उनको ज्ञान न रहा। परिणाम यह हुआ कि जिस सुख और शांति की व्यवस्था होनी थी, उसका अभाव बराबर बढ़ता रहा।

इस अभाव के कितने ही दुष्परिणाम उत्पन्न हुए, जो आज तक सभी के सामने हैं। क्या कारण है कि हमारे घरोंमें शांति नहीं है? अविवाहित स्त्री-पुरुषों में अशान्ति और असन्तोष और विवाहितों मे, विवाह के प्रति विद्रोह है! सामाजिक व्यवस्था के नाम पर अवहेलना और कहीं-कहीं पर घृणा है! यदि मनुष्य-जीवन को ठीक-ठीक समझने का प्रयत्न किया जाय तो सहज ही स्वीकार करना पड़ेगा कि समाज में शान्ति और संतोष नहीं है। यह अवस्था किसी एक स्त्री-पुरुष की नहीं है, किसी एक परिवार की बात नहीं है। प्रत्येक मनुष्य, प्रत्येक घर और प्रत्येक परिवार इस अशान्ति के साथ है। अब प्रश्न यह है कि इस अवस्था में समाज चल कैसे रहा है- उसे सभी जानते हैं। कितनी स्त्रियां मिलेंगी, जिनको अपने जीवन पर सन्तोष होगा और कितने पुरुष मिलेंगे, जिनके हृदयों के भीतर विद्रोह काम न करता होगा? फिर भी समाज चल रहा है—जीवन के दिन बीत रहे हैं।

ऊपर यह लिखा जा चुका है कि समाज के दोनों ही अङ्ग हैं—स्त्री और पुरुष मिलकर, समाज की रचना करते हैं। समाज की उन्नति के लिये, इन दोनों स्तम्भों को उन्नति तथा शक्तिपूर्ण होना चाहिए। एक का भी निर्बल होना, समाज के हित में अच्छा नहीं है। साथ ही यह भी स्मरण

है कि एक स्तम्भ के निर्बल हो जाने पर, दूसरे की अवस्था भी अच्छी रह नहीं सकती। जब दोनों ही अंग निर्बल बनेंगे तो समाज की अवस्था क्या होगी, इसे सहज ही समझा जा सकता है।

इसका भयानक परिणाम हमारे घरेलू और पारिवारिक जीवन पर जो पड़ा है, उसका थोड़ा सा प्रकाश ऊपर की पंक्तियों मे मैंने दिया है। उसका फल यहीं तक नहीं है। अनेक रूपमें वह समाज के सामने है। समझदार आदमियों से यह बात छिपी नहीं है कि जिस परिवार, जाति अथवा देश में स्त्री-समाज निर्बल और अयोग्य बन जाता है, वह परिवार, जाति और देश निर्बल और अयोग्य हो जाता है और स्त्रियों की निर्बलता एवम् अयोग्यता ही उस परिवार, जाति और देश की निर्बलता बन जाती है।

आज संसार में छोटे-से-छोटे देश अपनी महान उन्नति कर सके है। अपने बल और सामर्थ के आगे उन्होंने किसी बड़े-से-बड़े देश की परवाह नहीं की। दूसरी ओर समझने की बात यह है कि संसार की अनेक विशाल जातियां और विस्तृत देश, जैसे भारतवर्ष और चीन, को अपनी निर्बलता, पग-पग पर अनुभव करनी पड़ रही है। जातियों और देशों मे परस्पर संघर्ष है और एक दूसरे को मिटा देने की चेष्टा में है, इसलिए प्रत्येक जाति और राष्ट्र का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अपनी रक्षा करे। रक्षा का प्रश्न शक्ति पर निर्भर है। सामाजिक निर्बलता के कारण न कोई जाति बलवान हो सकती है और न कोई देश शक्तिशाली हो सकता है। इसका फल यह होता है कि पर्वत के समान विस्तृत और महान जातियों और देशों को छोटे-छोटे किन्तु शक्ति-

शाली देशों के सामने न केवल सिर झुकाना पड़ता है, बल्कि परतंत्र होकर रहना पड़ता है।

इसका कारण है, समाज की निर्बलता। समाज में दो टुकड़े हैं। एक टुकड़ा है स्त्रियों का और दूसरा है, पुरुषों का ये दोनो ही जब एक दूसरे के साथ संघर्ष करते हैं और सत्य तथा न्याय को भुला देते हैं तो समाज निर्बल बन जाता है। इसका बुरा परिणाम जीवन में भोगना ही पड़ता है। समाज की इस परिस्थिति को विद्वानों ने भली भांति अनुभव किया है। उन्होंने समझा है कि इसको बिना मिटाये काम नहीं चलता। समाज के शुभचिन्तकों ने इसके बदलने का कार्य आरम्भ कर दिया है। प्रत्येक देश में समाजवादी संस्थायें काम कर रही हैं। समाज का सस्कार ही उनका उद्देश्य है। मनुष्य-जाति को वे नवीन रूप से संगठित करना चाहते हैं और इस नवीन रचना में वे प्रत्येक मनुष्य को समान अधिकार देना चाहते हैं। वे जानते हैं कि इसी में समाज का कल्याण है।

इस पंक्तियों के लिखते समय एक शिक्षित पुरुष की बातों की याद आ रही है। यों तो प्रायः इस प्रकार की बातों के सुनने का अवसर मिलता है, किन्तु जिनका मैं उल्लेख करना चाहती हूं, वह केवल दो चार दिन पहले की बात है। एक अत्यन्त शिक्षित और समझदार पुरुष ने मेरे यहा बैठे हुए कहा:—

स्त्रियों के पक्ष में आप जो कुछ कहती हैं, मैं उनका विरोध नहीं करना चाहता, परन्तु मैं तो अपने ही घर में जो कुछ देखता हूं, उससे स्त्रियों के संबंध में एक कड़वा अनुभव होता है। आप जानती हैं, भोजन और कपड़े की राशनिंग ने

मनुष्य जीवन को कितना भयानक बना रखा है। फिर भी मेरी पत्नी अच्छे वस्त्रों के लिये प्रायः मुझसे लड़ा करती है। उनको समय का ज्ञान नहीं है और न वे परिस्थितियों के अनुसार चलना जानती हैं।

उनकी बात को सुन कर मैंने कहा:—आप शिक्षित हैं। जीवन की सभी परिस्थितियों का अनुभव करते हैं; अपनी पत्नि की बात को लेकर जो आप कड़ुवा अनुभव रखते हैं, उसका कारण क्या है, मैं नहीं जानती, आप उसे कभी सोचते हैं या नहीं।

वे मेरी बातों को सावधानी से सुन रहे थे। मैंने फिर कहा:—स्त्रियों में जिस अभाव को आप अनुभव करते हैं-उनका कारण है, उनके जीवन की परिस्थिति, जीवन की कठिनाई और संघर्ष से आपने उन्हें दूर कर रखा है, इसलिये यदि वे उसे नहीं अनुभव करतीं और नहीं जानतीं तो इसमें आश्चर्य क्या है। यदि आप उनके स्थान पर होते तो आप भी वही करते, जैसा वे कर रही हैं।

उन्होंने मेरी बात को स्वीकार किया और पूछा—अच्छा इन बातों का सुधार कैसे हो सकता है ?

मैंने कहा:—जब तक स्त्रियां स्वयम् संघर्ष में नहीं आती, उस समय तक वे वास्तविक जीवन से दूर हैं। उनकी अयोग्यता और निर्बलता का कारण, उनके जीवन की परिस्थितियां हैं, जिनको समाज ने और विशेष कर पुरुष समाज ने उत्पन्न किया है।

थोड़ी देर की बातों के बाद उन्होंने सभी बातों को स्वीकार किया। यहाँ पर, इस प्रकार की बातों का अधिक उल्लेख करके, मैं अनावश्यकता में नहीं जाना चाहती। बहुत स्पष्ट

बात यह है कि समाज में स्त्रियों का वही स्थान है, जो पुरुषों का। जीवन की परिस्थितियों में दोनों को समान रूप में अधिकार है। यह अधिकार व्यवहारिक रूप में यदि दोनों में काम नहीं करते तो उसका फल स्त्रियों के लिये जितना भयानक है, उतना ही पुरुषों के लिये भी। समाज का कल्याण इसी में है कि उसके ये दोनों अंग पूर्ण स्वतंत्रता के साथ जीवन में आगे बढ़ें। इसी में उनका और समाज का कल्याण है।

स्त्री-जीवन में नवीन विचारों का प्रभाव

मनुष्य जीवन आज बदल रहा है। धर्म, समाज और राजनीति की परिभाषा ही कुछ-की-कुछ हो गयी है। शिक्षा और सभ्यता का नया प्रकाश इस परिवर्तन का कारण हुआ है। स्त्री-समाज भी इसमे पीछे नहीं रहा। नवीन विचारों ने उसकी रूप-रेखा ही दूसरी कर दी है।

जो पुराने हैं, वे पुराने विचारों के साथ हैं। नवीन नवीन विचारों का आश्रय ले रहे हैं। यह स्वभाविक भी है, पुराने विचारोंके अनुयायी नये संसस्कारोंका विरोधकर रहे हैं,वे आज नहीं समझ सके और भविष्य में भी न समझ सकेंगे। अनेक प्रकार के विरोध होने पर भी नवीनता को आश्रय मिल रहा है। जीवन की स्वभाविकता अपना रंग दिखा रही है। जो परिवर्तन के विरोधी हैं, यदि उनके ऊपर दृष्टि डाली जाय और उनको समझाने का उद्योग किया जाय तो यह कहना पड़ता है कि सत्य, सत्य होकर रहता है। प्रकाश पर परदा नहीं डाला जा सकता।

परिवर्त्तन की आवश्यकता उसी समय होती है, जब पुरानी बातें मानव जीवन की सहायक नहीं बन पातीं।पुराना

मकान छोड़ कर उसके निवासी किसी नये घर में उसी समय जाते हैं, जब वे पहले घर को कष्ट पूर्ण समझ लेते हैं। एक नौकर किसी नये कार्य की खोज उसी अवस्था में करता है, जब पुराने मालिकसे उसका काम नहीं चलता। पुराने वस्त्रों को हटाकर नये वस्त्र उसी दशा में पहने जाते हैं, जब पुराने कामके नहीं रह जाते। जीवन की सभी बातों में यही सत्य काम करता है। समाज के परिवर्त्तन का भी यही एक मुख्य कारण है। यहाँ पर इस बात पर विचार करना है कि स्त्री-जीवन में नवीन विचारों का किस प्रकार प्रभाव पड़ा है और यह भी देखना है कि वह प्रभाव क्यों आवश्यक हो गया है।

यह तो ठीक ही है कि वर्त्तमान शिक्षा ने एक नवीन सभ्यता की सृष्टि की है। उसके द्वारा स्त्रियों के जीवन में बड़े-से-बड़े परिवर्त्तन हो रहे हैं। यह परिवर्त्तन तो सभी स्वीकार करते हैं किन्तु स्वीकार करने में कुछ मतभेद है। जो लोग परिवर्त्तन के पक्षपाती नहीं हैं, वे समाज के परिवर्त्तन को देख कर कुढ़ते हैं और कोसने के बाद भी, उन्हे स्वीकार करना पड़ता है कि स्त्रियों का परिवर्त्तन कुछ पढ़ी-लिखी लड़कियों में हुआ है।

बात केवल इतनी ही नहीं है। परिवर्त्तन के विरोधी अधिक स्वीकार न करें, यह दूसरी बात है, परन्तु सत्य कुछ और है। यदि वास्तव में देखा जाय तो परिवर्त्तन का कार्य समूचे समाज में दिखायी पड़ेगा। कहीं कम है और कहीं अधिक। लेकिन है, सर्वत्र। कुछ देश इस परिवर्त्तन मे बहुत आगे बढ़ गये है और कुछ देश अभी बहुत पीछे है, परन्तु हैं वे भी परिवर्त्तन के साथ। इस परिवर्त्तन के सम्बन्ध में जो कुछ कहा जा सकता है, उसमें सब से पहली बात यह है

कि वर्त्तमान काल की उन्नति इस परिवर्त्तन के साथ-साथ चल रही है। जहां परिवर्त्तन नहीं है, वहाँ उन्नति नहीं है। जीवन का प्रकाश भी वहाँ पर नहीं पाया जाता। परिवर्त्तन के विरोधियों में अंधकार है, अविश्वास है और जीवन का असंतोष है। यह सब अंधकार के कारण है। परिवर्त्तन के प्रकाश मे आशा और संतोष की वृद्धि हुई है।

मेरा अभिप्राय केवल स्त्री-समाज और उसके परिवर्त्तन से है। मैंने सदा परिवर्त्तन को ही जीवन समझा है और उसी पर विश्वास किया है। यही कारण है कि स्त्रियों के बदलते हुए जीवन को मैंने आदर के साथ देखा है। मैंने सदा विश्वास किया है कि यह परिवर्त्तन मनुष्य-जीवन को सत्य की ओर ले जा रहा है। फिर वे चाहे स्त्रियाँ हों अथवा पुरुष। प्रकृति की इच्छा के बिना कोई भी परिवर्त्तन नहीं हो सकता। प्रकृति स्वयम हमारी भूलों का संशोधन करती है। यदि हम उसके परिवर्त्तन को स्वीकार न करें तो अनेक प्रकार के विरोधी वातावरण का हमें सामना करना पड़ता है। प्रत्येक अवस्था में परिवर्त्तन निश्चित् है, इसीलिये मैंने सदा उसको आदर से देखा है।

स्त्रियों का यह परिवर्त्तन स्वभाविक है। उनका पुराना जीवन सभी प्रकार अयोग्य साबित हुआ है। जो लोग पुरानी शिक्षा और सभ्यता के पक्षपाती हैं, वे इन बातों को कभी स्वीकार न करेंगे। उनके न स्वीकार करने से क्या होता है। बिना आवश्यकता के कोई परिवर्त्तन नहीं हुआ करता। स्त्रियोंमें भी यह परिवर्त्तन आवश्यकता के कारन ही हुआ है। पुराने आदर्शों ने उनके मार्गों मे अड़ंगा डालने का काम किया है। जीवन की अनेक आवश्यक बातें उनसे अलग

रखी गयी थीं। इतना ही नहीं। कुछ अर्थों में वे जीवन के उत्कर्ष से वंचित भी बनायी गयी थीं। इसी लिये मानव जीवन के कुछ गुणों का विकास उनमें न होसका था। यही अभाव विद्रोह के कारण बने और वर्त्तमान काल में इन्हीं के कारण स्त्री-जीवन में परिवर्त्तन आरंभ हुए।

हमारे शरीर में जब विषैले कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं तो प्रकृति हमारे शरीरों से उनके निकालने का कार्य करती है। उसमें हमें कष्ट भी होता है और कुछ दिनोंके लिये हमें रोगी हो जाना पड़ता है। रोग के इन दिनों में प्रकृति शरीर से उस विष को निकालने का काम करती है, जिसके न निकलने से शरीर को बहुत बड़ी क्षति उठानी पड़ती।

ठीक यही अवस्था हमारे सामाजिक जीवन की भी है। समाज की परिस्थितियाँ जब हमको योग्य बनाने के स्थान पर अयोग्य बनाने लगती हैं तो इस बात का परिचय मिलता है कि उनके स्थान पर दूसरी परिस्थितियों को आकर अपना घर बनाना चाहिए। ऐसा ही होता भी है और इसी को परिवर्त्तन कहते हैं। यह परिवर्त्तन इतना शक्तिशाली होता है कि उसके सामने न तो समाजका विरोध कुछ काम करता है और न उसको दबाने में राज-सत्ताको ही सफलता मिलती है। प्रकृति जिस परिवर्त्तन की इच्छा करती है वह होकर रहता है।

हमारे देश में परिवर्त्तन का कार्य अधिक पुराना नहीं है। जन-संख्याके अनुसार देश अभी बहुत बड़ा है, छोटे देशों और राष्ट्रों में परिवर्त्तनका कार्य जल्दी समाप्त हो जाता है। परन्तु बड़े देशोंमें उसको अधिक समय लगता है। इसे देखते हुए जो कुछ परिवर्त्तन हुआ है, वह कम नहीं है। पुरानी विचारधारा बहुत बातों में बदल गयी है। जीवन के अनेक

अंगोंमें, उसके बदलने का कार्य हो रहा है। जहाँ एक बड़ी संख्या अभी बहुत पीछे है, वहाँ एक दूसरी संख्या बहुत आगे भी जा रही है। जो स्त्रियाँ शिक्षित नहीं भी हैं, वे भी परिवर्त्तन चाहती हैं और अपने जीवन में उसका परिचय देती हैं। यह अवस्था पूरे समाज में काम करती है, जिससे कोई इन्कार नहीं कर सकता।

इस परिवर्त्तन के सम्बन्ध में सबसे पहले स्त्री-समाज में जिसे स्थान मिला है, वह है, उनके जीवन की निर्भीकता। आत्म-बल और आत्म-विश्वास हमारे जीवन के ये पहले गुण हैं। दूसरे पर आश्रित होकर रहना हमारे जीवन का सबसे बड़ा अवगुण है। यह निर्बलता दूसरे के बन्धनों के कारण ही पैदा होती है। प्रकृति ने अपने नियमों में इसको कभी नहीं रखा। स्वावलम्बन उसने सभी में उत्पन्न किया है। स्त्री-समाज में इसके अभावका कारण समाज के बन्धन हुए हैं। जिन परिस्थितियों में उनको अनेक युग बिताने पड़े हैं, उन्होंने स्त्रियों को एक मात्र विवश और परवश बना दिया था। यह अभाव उनके जीवन से धीरे-धीरे निकल रहा है। आज की शिक्षा और सभ्यता इसमें हमारा साथ दे रही है।

जीवन की निर्भीकता ने स्त्रियों को आगे बढ़ाया है। वे अपने जीवन के महत्व को समझने लगी हैं। हृदयके अस्वभाविक भय को उन्हों ने निकाल कर बाहर फेंकने की चेष्टा की है। सभी बातों को आज वे समझना और जानना चाहती हैं। जीवन के संघर्षसे दूर रहने की उनकी इच्छा नहीं है। कठिनाइयों का सामना करना ही वास्तव में जीवन है। इसीलिये उन्होंने आज घरों के बाहर कदम रखा है। अनेक प्रकार के कार्यांको उन्हों ने अपने हाथ में लिया है।

और सफलता पूर्वक जीवन-क्षेत्रमें वे आगे बढ़ रही हैं। उनकी निर्वलता उनसे दूर हो रही है।

स्त्रियों की वेश-भूषा भी आज बदल रही है। पुराने वस्त्र और आभूषण उनकी आंखोंमें केवल घृणित ही नहीं बने, वरन् उनको उन्होंने अपने जीवन का आज एक बन्धन स्वीकार किया है। इसीलिये आंख फैलाकर देखने पर उनमें एक बड़ा परिवर्त्तन दिखायी देता है। जीवन-क्षेत्रमें वे आज स्वतंत्रता पूर्वक विचरण करना चाहती हैं। उन्हें अब मिट्टी की मूर्त्तियां बनकर रहना पसन्द नहीं है। वे अपने आपको मनुष्य समझती हैं और इसीलिये वे मनुष्यों का सा जीवन विताना चाहती हैं।

योरप में होने वाले राष्ट्रीय युद्धोंने स्त्रियों की जागृति का एक बड़ा मार्ग खोला है। उन युद्धों मे, उन उन्नत देशों की स्त्रियों ने जो काम किया है, उससे स्त्री-समाज की शक्तियों का पता चलता है। रक्तसे परिपूर्ण मोर्चों में उन्होंने सभी प्रकार के कार्य किये हैं। और अपनी शक्तियों का परिचय देते हुए, उन्होंने अपने देशों की मान-मर्यादा की रक्षा करने के लिए जो काम किया है, उससे उनके देशों की और उनकी मर्यादा की वृद्धि हुई है। उनके इन कार्यों के फल स्वरूप समाजमें उनका स्थान आदर पूर्ण बन सका है।

देश के इन कार्योंमें हमारे देश की बहनें भी पीछे नहीं रहीं। देश की स्वतंत्रता की लड़ाई मे उन्होंने खुलकर देश का साथ दिया है और उनके मार्ग में जो कठिनाइयाँ पड़ी हैं, उनका उन्होंने हर्षपूर्वक सामना किया है। कांग्रेस के इतिहास से जो लोग परिचित हैं, वे लोग जानते हैं कि छोटे-से-छोटे कार्य्यों से लेकर बड़े-से-बड़े कार्यों तक सभी प्रकार के अवसरों पर देश की युवतियां और स्त्रियाँ आगे बढ़ी हैं।

स्त्री-समाज के इन कार्यों को देखकर, आज बहुत अंशों में समाज के नेत्र खुले दिखाई देते हैं। उन की योग्यता और कार्य तत्परता को देख कर ही देश और समाज के नेताओंने उनका स्वागत किया है और बड़े-से-बड़े उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यों में उनको स्थान दिया है। देश की बहनों का यह परिवर्त्तन भविष्य का शुभ परिचय है। देशके स्वतंत्र वातावरण में स्त्री-समाज निर्भीकतापूर्वक आगे बढ़ेगा। इसकी पूर्ण आशा है।

बंधन और विकास

बंधन और विकास दो वस्तुएं हैं। दोनों के अलग-अलग गुण हैं। दोनों एक दूसरे के विरोधी हैं। विकास बंधन नहीं चाहता, बंधनों मे विकास हो भी नहीं पाता। यह प्रकृति का नियम है।

यह नियम जीवन मे सर्वत्र काम करता है। किसी खेत के किनारे बड़े वृक्षके कारण, बहुत निकटवर्ती पौधे मारे जाते हैं। या तो वे पैदा ही नहीं होते और यदि पैदा होते हैं तो वे हरे-भरे नहीं रहते। वे पीले पड़ कर निर्बल हो जाते हैं। इस प्रकार के परिणाम और भी देखने मे आते हैं। किसी सम्पत्तिशाली अथवा बड़े जमीदार के निकट के निवासी दीन-दुर्बल और गरीब रहा करते हैं। वे कभी भी शक्तिशाली नहीं हो पाते। घरेलू और पारिवारिक बंधन भी बहुत हानिकारक सिद्ध होते हैं। बंधन की कठोरता मानव जीवन को पनपने नहीं देती।

बंधन के इस विपरीत प्रभाव को सभी स्वीकार करेंगे। जो बुद्धिमान हैं, जीवन का जिन्होंने अध्ययन किया है और प्रकृति के नियमों को पहचाना है, वे इस बंधन के विरोधी

हैं,वे जानते हैं, इसका फल क्या होता है। यही कारण है कि वंधनों का सर्वत्र विरोध, होता है।

स्त्री-जीवन की अवस्था बहुत दयनीय है और उसकी यह अवस्था बहुत प्राचीन काल से चली आरही है। कितने प्राचीन काल से, इसका अनुमान लगाना कठिन है। प्राचीन काल में स्त्रियों का जीवन निरंतर वंधनों मे बीता है, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। संसार का साहित्य और इतिहास इसका स्पष्ट प्रमाण देता है। यद्यपि कुछ व्यक्ति इसके विरोध मे अपने देश की पुरानी बातों का उदाहरण देने लगते हैं। लेकिन उनके उदाहरणों और विरोधों मे कुछ अधिक सार नहीं होता।

फिर भी, लोग अपनी-अपनी बातें कहते ही हैं, कितनेही लोगोंका कहना है कि हमारे इहां प्राचीन काल मे स्त्रियों का जीवन बहुत ऊंचा था। इसके प्रमाण में वे लोग अधिकतर रामायणकालीन उदाहरण देते हैं। सीता के गौरवपूर्ण जीवन को सामने लाकर खड़ा कर देते हैं। इसमें संदेह नहीं कि रामायण मे सीता का जो चरित लिखा गया है, अनेक अंशोंमें और विशेष कर कर्त्तव्य-पालन में प्रशंसनीय है, परन्तु उस युग में स्त्रियों का जीवन वंधनों में न था, यह नहीं कहा जा सकता। स्वयम् सीता के जीवन में ऐसी अनेक बातें देखने और पढ़ने को मिलती हैं, जिनसे स्पष्ट मालूम होता है कि उस समय के समाज का प्रभाव उनके ऊपर था। यहाँ पर आवश्यक नहीं है कि सीताके चरित्र की आलोचना की जाय। मुझे तो प्राय: उन लोगों से बातें करनी पड़ती हैं जो आँखें बंद करके प्राचीन काल की बातों का समर्थन करते हैं और अपनी हठ के सामने किसी की कुछ सुनना नहीं चाहते।

परन्तु हठ कितनी देर चलती है!

जो लोग प्राचीन काल के स्त्री-जीवन की प्रशंसा करते हैं, उनका विरोध करना मेरा उद्देश्य नहीं है, स्त्री-समाज बिल्कुल प्रारम्भिक काल से बंधनों में चला आ रहा है अथवा यों कहा जाय कि सामाजिक बंधन जितने ही कठोर होते गये, स्त्री-समाज उतना ही अधिक जकड़ता हुआ चला गया। जो लोग इसे नहीं अनुभव करते, वे न तो बंधन का अर्थ समझते हैं और न उसके दुष्परिणाम को ही जानते हैं।

बंधनों से भयानक कोई विष नहीं हो सकता। विष मनुष्य को एक साथ समाप्त करता है, परन्तु बंधन जीवनभर पीड़ा पहुँचाता है। जो लोग बंधनों में रहा करते हैं, वे उसकी त्रुटियों और पीड़ाओं को नहीं पहचानते। उसके प्रभाव के समझने का ज्ञान भी नहीं रखते। जिस प्रकार के जीवन में रहकर उन्हें बंधनों को स्वीकार करना पड़ता है, उनके अनुकूल उनकी प्रकृति बन जाती है। उसके बाद फिर उनको कष्ट भी नहीं मालूम होता।

बंधन का ज्ञान उन्हीं को होता है, जो बंधनोंसे दूर रहकर जीवन विताते हैं बंधनों में रहने वाला मनुष्य उसकी बुराई को नहीं जानता। स्वतन्त्र वातावरण मे विचरण करने वाला एक पक्षी जब पिंजड़े में बंद किया जाता है तो अपनी मानसिक पीड़ा और वेदना को वही जानता है। पिंजड़े का बंधन मृत्यु से भी अधिक भयानक मालूम होता है। उससे छूटकर भाग निकलने के लिए वह सदा कोशिश करता है। परन्तु अधिक दिनों तक पिंजड़े में बंद रहने वाला पक्षी, पिंजड़े का ही अभ्यासी हो जाता है। उसको अपने कष्ट,कष्ट के रूप में नहीं मालूम पड़ते। जिसको वह स्वयम् किसी समय असह्य

समझा था, अभ्यासी हो जाने के बाद, उसी को वह अपने लिए सुरक्षा का साधन समझने लगता है। यह बात यहीं तक नहीं होती। जब कभी वह पिंजड़े से छूट जाता है, अथवा कुछ देर के लिए निकाला जाता है तो फिर वह भाग जाने की चेष्टा नहीं करता। यह भी होता है कि वह आसानी से फिर पिंजड़े में आजाता है। यही अवस्था मानव-जीवन की है। बंधनों में जकड़ा हुआ मनुष्य उसके विरुद्ध वातावरण की कल्पना नहीं कर सकता। स्त्री-समाज तो आदि कालसे उसी में चला आरहा है। इसलिए स्वतंत्रता के सुख और विकासको भूल जाना स्वाभाविक है।

प्रकृति ने मनुष्य को जिन परिस्थितियों मे उत्पन्न किया है, वे उसको बनाने और बिगाड़ने का स्वयम ज्ञान रखती है। इतना सब होने पर भी जब मनुष्य के जीवन पर बंधनों का बोझ लादा जाता है तो सब से दूषित प्रभाव जो पड़ता है, वह यह कि उसका स्वाभाविक विकास मारा जाता है। उसकी स्वतन्त्र मनोवृत्ति नष्ट हो जाती है। होता यह है कि अपना हित और अहित समझने का ज्ञान भी उसे नहीं रहता। अपना साधारण कर्त्तव्य भी उसे भूल जाता है। रामायण में लिखित सीताके जीवन मे भी हमें यही बात मिलती है। रावण के द्वारा सीता का अपहरण अस्वभाविक है। मनुष्य, मनुष्य होता है। वह निर्जीव पदार्थ नहीं बन सकता। प्रकृति ने मनुष्य को किसी वस्तु के रूप में नहीं बनाया, कर्त्तव्य का-ज्ञान देकर ही उसने मानव-जीवन की रचना की है। इस अवस्था मे सीता के अपहरण का कोई अर्थ नहीं होता। नर पिशाच रावण आता है और सीता को उठा कर अपने साथ लेकर चला जाता है। अत्यन्त सती और सदाचार की र्त्तिमू

सीता उसका विरोध नहीं करतीं। इसका कारण क्या है! स्पष्ट बात यह है कि या तो सीता की कथा ही झूठी है, अथवा जीवन के बंधनों ने उनको इतना कर्त्तव्य विमूढ़ बना रखा था कि वे रावण का उस समय कुछ विरोध भी नहीं करतीं और एक निर्जीव पदार्थ की भाति वे उसके साथ चली जाती हैं। रामायण में यह भी पढ़ने को मिलता है कि विवाह के पहले सीता जिस धनुष को सरलता पूर्वक उठाकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर रख देती थीं, उनके स्वयम्वर के दिनों में रावण उस धनुष को पृथ्वी से तिल भर भी उठा न सका था। वही रावण सीता को अपने साथ ले जाकर लंका में रखता है और सीता अत्यन्त ग्लानि और वेदना के साथ अपने जीवन के उन दिनों को काटती हैं।

स्त्रियां स्वयम् निर्बल नहीं होतीं। समाज के बंधनों और नियमों ने उनको निर्बल बनाने का काम किया है। यह उत्पन्न हुई निर्बलता न केवल शारीरिक है, वरन उससे भी अधिक मानसिक है। सामाजिक जीवन में लड़कियों और स्त्रियों के साथ आचरणहीन पुरुषों के जो व्यवहार देखे जाते हैं और जिस प्रकार की घटनाओं के लाञ्छन से समाज दबा हुआ है, वे इस बात का प्रमाण है कि समाज की व्यवस्था ने स्त्रियों को न केवल कायर और भीरु बनाया है, बल्कि उन्हें बुद्धिहीन और कर्त्तव्य विमूढ़ बनाकर सभी प्रकार अयोग्य कर दिया है।

जागृति देशों की स्त्रियों के जीवन इस से बिल्कुल भिन्न होगये हैं। दूसरे देश जो आज समुन्नत हैं और जिनकी सामाजिक एवम राजनीतिक परिस्थितियाँ उन्नत हो गयी हैं उनका स्त्री-समाज भी पहले की अपेक्षा बहुत बदला हुआ है।

उनके जीवन मे अनेक प्रकार के दोष हो सकते हैं किन्तु उस प्रकार की मानसिक निर्बलता. उनमे कम मिलेगी. जिसके लिए उनको स्वयम अपनी निन्दा करनी पडे।

स्त्री-समाज की अस्वाभाविक परिस्थितियों का कारण, उनके जीवन बंधन है। छोटी अवस्था से लेकर अंत तक स्त्रियाँ अपनी बुद्धिसे कुछ काम नहीं करतीं। जो कुछ वे करती हैं, घरके पुरुषों के डर से अथवा बडे-बूढ़ों के भय से! अपने विचारों से स्वयम् काम न लेनेका परिणाम यह हुआ है कि स्त्रियाँ अपना साधारण ज्ञान भी खो बैठी है और वे नहीं जानतीं कि उन्हें किस समय और किस अवस्था मे क्या करना चाहिए। जीवन की विपदाओं मे और दुराचारियोंका विरोध करने मे उनकी मानसिक निर्बलता का कारण उनका बंधन है। स्त्री-समाज की यह अवस्था अत्यन्त शोचनीय हो गयी है।

इसके लिए पुरुषों को मैंने सदा कोसते हुए देखा है। वे लड़कियों और स्त्रियों की निन्दा करने मे कुछ उठा नहीं रखते स्त्री-जाति की निर्बलता को मैं स्वयम् घृणा की दृष्टि से देखती हूं। परन्तु उससे भी अधिक घृणा के योग्य जीवन के वे बंधन हैं, जिन्होंने स्त्रियों को अयोग्य और भीरु बना डाला है। मैं भली-भाँति जानती हूं कि न केवल लड़कियाँ और युवतियाँ, वरन् बूढ़ी स्त्रियाँ भी छोटे-से-छोटे कामों को पुरुषोंसे पूछ कर करती हैं। मैंने सम्पन्न परिवारों में देखा है कि दो-चार आने की वस्तु खरीदने के लिए भी स्त्रियों को घरके सयाने पुरुषोंके अभाव में, लड़कों से पूछ लेना पड़ता है। इस प्रकार पूछ लेना अथवा आवश्यकता पड़ने पर परामर्श कर लेना अनुचित नहीं है, बल्कि अनेक अवसरों पर, स्त्री और पुरुष—दोनों के

लिए आवश्यक होता है किन्तु स्त्रियाँ जो कुछ करें, पुरुषों की अनुकूलता को जान कर ही करें, इसका परिणाम स्त्री-जीवन में भयानक पड़ना ही चाहिए। वे सोचने की स्वाभाविक बुद्धि को खो बैठेंगी और फल यह होगा कि किस अवसर पर उन्हें क्या करना चाहिए, इस बात का ज्ञान उनको न रहेगा।

संतोष की बात यह है कि आजकल स्त्री-जीवन बदल रहा है। उनके जीवन के बंधन टूट रहे हैं और अनेक स्थानों में निर्बल बन रहे हैं। इतना सब होने पर भी स्त्री-समाज जिन कठोर नियमों में जकड़ा हुआ है; उसके विरुद्ध विद्रोह करने से ही काम चलेगा। पुरानी व्यवस्था पर चलकर समाज का कल्याण नहीं है, प्रत्येक स्त्री और पुरुष को भली भाँति इसे समझ लेना चाहिये।

चरित्र-निर्माण की शिक्षा

सदाचार और नैतिक शक्ति के साथ स्त्री-जीवन का स्वाभाविक संबंध है। इसीलिए लड़कियों और स्त्रियों को इनके संबंध में कोई शिक्षा न मिलने पर भी उनको सहज ही अभाव अनुभव नहीं होता। किन्तु इतना ही आवश्यक नहीं है। समय और समाज के वातावरण को देखकर यह बहुत आवश्यक मालूम होता है कि स्त्री-समाज को चरित्र निर्माण की शिक्षा दी जाय।

हमारे देशमें स्त्री-शिक्षा बहुत दुर्बल अवस्था में है। [illegible] समाज की शिक्षा ही चारित्रिक शिक्षा देने का एक साधन है [illegible]। उसका जब स्वयम् अभाव है—तो फिर उसके द्वारा उस [illegible] की पूर्त्ति का विश्वास ही कैसे किया जा सकता है। इस [illegible] अवस्था में स्त्रियों में किस प्रकार चरित्र-बल उत्पन्न किया [illegible] जा सकता है, यह एक प्रश्न है।

मानव समाज जहाँ एक ओर शिक्षित और सभ्य होता जाता है, वहाँ दूसरी ओर उसमें, कारणवशात अशिष्टता भी उत्पन्न होती जाती है। इस अवस्था में केवल शिक्षा से काम नहीं चलता। नैतिक ज्ञान होना बहुत आवश्यक मालूम होता है। स्त्रियों का तो वह प्राण है। अब प्रश्न यह है कि जो वस्तु स्त्री-समाज का जीवन है, उसकी प्राप्ति के साधन क्या हो सकते हैं ?

समाज की वर्त्तमान अवस्था सर्वथा विचारणीय है। साथ ही, किस प्रकार की परिस्थितियों में वह आगे बढ़ रहा है, इसे भी दृष्टि के सामने रखने की जरूरत है। इस पुस्तक के आरम्भ में यह लिखा जा चुका है कि स्त्री और पुरुष—दोनों ही, समाज के अंग हैं। इस अवस्था में स्त्रियाँ समाज के वातावरण से पृथक नहीं रह सकतीं। अतएव चरित्र-बल का ज्ञान उन्हें कैसे प्राप्त हो सकता है और उसके सम्बन्ध में स्त्री-समाज की आज क्या अवस्था है, इसी की मीमांसा करना, यहाँ पर मेरा अभिप्राय है।

स्त्री-समाज की वर्त्तमान अवस्था पर प्रकाश डालने के पूर्व यह देख लेना आवश्यक है कि चरित्र और नैतिक जीवन के निर्माण के साधन क्या होते हैं। समाज की साधारण अवस्था में निम्नलिखित साधन ही उसके लिये काम मे लाये जा सकते हैं।

१—शिक्षा

२—साहित्य

३—प्रचार संबंधी अन्य साधन

सब से पहला साधन स्कूल और कालेजों की शिक्षा ही बन सकती है। यह शिक्षा आजकल हमारे यहाँ उत्तरोत्तर

वृद्धि पा रही है और आगे इससे भी अधिक बढ़ेगी, इसकी पूर्ण आशा है। शिक्षा की इस वृद्धि के साथ-साथ समाज में चरित्र-बल की भी वृद्धि होगी, यह नहीं कहा जा सकता। परिस्थिति तो उसके बिल्कुल विपरीत चल रही है। लड़कों और लड़कियों के स्कूली जीवनमें कोई विशेष अन्तर नहीं है। चरित्र-बल तो दोनोंही के लिए समान रूपसे आवश्यक है। स्त्री-शिक्षा के साथ उसका सामञ्जस्य अनिवार्य रूप से है।

स्कूलों में दी जाने वाली शिक्षा, वास्तव में शिक्षा का काम नहीं करती। उससे तो अक्षर-ज्ञान होता है और पढ़ने-लिखने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है। शिक्षा का इतना ही काम नहीं है। वह मनुष्य को मनुष्य बनाने का कार्य करती है। यदि मनुष्य-जीवन में शिक्षा और सभ्यता न होती तो उसमें और एक पशुमें कोई अन्तर न होता। मनुष्य में, मनुष्यत्व उत्पन्न करना हमारी शिक्षा और सभ्यता का काम है। इस दृष्टि से स्कूलों की शिक्षा कुछ काम नहीं करती।

स्कूली शिक्षा में चरित्र-बल उत्पन्न करने का जो अभाव है, उसका कारण है कि देश बहुत पहले से विदेशियों की परतंत्रता में चला आ रहा है। किसी विदेशी सरकार को क्या जरूरत है कि वह हमें वास्तविक शिक्षा देने की व्यवस्था करे। परतंत्र देश जितना ही मूर्ख, अयोग्य और कायर हो सकता है, विदेशी सरकार को उतना ही लाभ होता है।

सौभाग्य से आज देश की अवस्था कुछ और है। विदेशी शासन का संबंध टूट चुका है और देश का शासन, देशके ही हाथों में आया है। किंतु यह स्वाधीनता अभी इने-गिने दिनों की है। अंग्रेजी सरकार के पंजे से अलग हुए अभी इस देश को एक महीने से अधिक नहीं बीता। साथ ही देश में

अशान्ति का वातावरण अधिक तेजी पर है। कहने का अभिप्राय यह है कि शिक्षा का दृष्टिकोण बदलने का जो कार्य इस समय होना चाहिये था, वह नहीं हो सका और जो शिक्षा पुरानी चली आ रही है वही चल रही है। स्कूलों और कालेजों में जो शिक्षा दी जाती है, उसका बहुत-कुछ संबंध हमारे चरित्रके निर्माणके साथ है।

समाज में चरित्र-बल उत्पन्न करना साहित्य का काम है। विद्वान और तपस्वी लेखकों के द्वारा जो साहित्य प्रस्तुत होता है, वह समाज को शक्ति देने का कार्य करता है। हमारा साहित्य भी दुर्भाग्य से, आज दिन दुर्बल है। पराधीनता की अनेक शताब्दियों ने देशको शिक्षा सभ्यता और साहित्य की ओर बढ़ने नहीं दिया। देशमे जो वातावरण रहा, उसने तपस्वी साहित्य सेवियों को, जैसा चाहिये था, उत्पन्न नहीं किया। फिर भी समाज मे एक साहित्य है, जो हमारे जीवन मे, प्राण का संचार करता है। समाज के वर्त्तमान दिनों मे हमे केवल साहित्य का ही सहारा मिल सकता है और उसी से जीवन में चरित्र-बल उत्पन्न किया जा सकता है।

अब प्रश्न यह है कि जो साहित्य हमारे जीवन मे चरित्र-बल उत्पन्न करता है, उसको पढ़ने और महत्व देने वाले हम लोगों मे कितने है? स्त्रियों का तो जीवन ही दूसरा रहा है। उनको मूल्यवान वस्त्र चाहिए, सोने और चाँदी के आभूषण चाहिये। शिक्षा और साहित्य की उन्हें क्या आवश्यकता है! जब समाज की यह विचारधारा हो तो फिर उसका हित कहीं हो सकता है?

आज स्त्रियों मे शिक्षाका विस्तार हो रहा है, एक बडी संख्या में लडकियाँ स्कूलों में जाती हैं। इन पढी-लिखी लड़कियों और स्त्रियों का झुकाव भी अभी तक साहित्य की ओर

शून्य के बराबर है। खाली समय में मैंने जब कभी किसी लड़की अथवा स्त्री को पुस्तक पढ़ते देखा है तो मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। मैंने जानने की चेष्टा की है कि उसके हाथ में किस विषय की पुस्तक है। उस समय मालूम हुआ कि वह कोई उपन्यास है, अथवा कहानी-संग्रह की पुस्तक है। उपन्यासों और कहानियों का पढ़ना भी आवश्यक है, इसलिये की वे हमारे साहित्य के आवश्यक अंग हैं। समाज की परिस्थितिका ज्ञान प्राप्त करने के लिए उच्च कोटि की कहानियों और उपन्यासों का पढ़ना ही चाहिए।

केवल इन्हीं के पढ़ लेनेसे काम न चलेगा। जो पुस्तकें हमारे चरित्रका निर्माण करती हैं—हमारे मनमें नैतिक शक्ति उत्पन्न करती हैं और सत्य और असत्य का ज्ञान् धर्म और अधर्म का हमें ज्ञान कराती हैं, वे पुस्तकें दूसरी ही होती हैं। साहित्य मे उन पुस्तकों का अच्छा स्थान होता है और उनके अध्ययन से हमारा मानसिक विकास होता है।

हृदय के भीतर सद्विचार पैदा करने के लिए और भी कुछ साधन हैं। विचारशील व्यक्तियों के साथ बैठकर बातें करना, अच्छे विचारों मे भाग लेना और उनके अनुसार अपनी विचारधारा निश्चित् करना नैतिक बल और चरित्र-निर्माण के लिए आवश्यक साधन होते हैं। पतित मार्ग से भी बचने के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि उपयोगी साधनों से भी वंचित रहा जाय। खाने-पीने की अनेक वस्तुएं हानि-कारक होती हैं। उनसे बचने का यह कोई उपाय नहीं है कि खाने के सभी पदार्थों से परहेज किया जाय।

साधारण और असाधारण अवस्था में यदि लड़कियों के जीवन का अध्ययन किया जाय तो स्पष्ट मालूम होगा कि वे

अपनी छोटी अवस्था से ही घरके बाहरी आदमियों से बात करने में परहेज़ करती हैं। परदे की प्रथा बहुत पहले से जो समाज में चली आ रही है, उसका प्रारम्भ यहीं से होता है। घर के आदमी भी लड़कियों से अधिक बातें नहीं करते, बाहरी आदमियों से बात करना तो दूर, टोला-पड़ोस के परिचित आदमियों से भी बोलना उनके जीवन का अपराध होता है। लड़कियों के लिए इस प्रकार के नियमों को जो काम में लाया जाता है, उसे अच्छा नहीं कहा जा सकता।

लड़कियों और स्त्रियों के जीवन का संकोच मैंने बहुत दूर तक देखा है। कितने ही परिवारों मे बैठे हुए मैं ने देखा है कि उनके घरके पुरुषों को यदि कोई दरवाजे पर बुलाने आया है तो वह बड़ी देर तक बाहरी किवाड़ों के बाहर खड़े हुए पुकारा करता है। घरकी लड़कियाँ और स्त्रियाँ बैठी हुई सुना करती हैं। वे कुछ उत्तर नहीं देतीं, उसी प्रकार के अवसर पर मैं ने एक सयानी लड़की से कहा—

तुम्हारे पिताजी को कोई बुला रहा है। तुम जवाब में कह तो दो कि वे नहीं हैं।

लड़की ने कहा—उंह, अपने आप चला जायगा।

यह सुन कर मुझे बहुत अस्वाभाविक मालूम हुआ, इसके बाद भी बुलाने वाला आदमी पुकारता ही रहा। सुन-सुन कर मुझे उलझन मालूम हो रही थी। मेरी समझ में नहीं आया कि घर की स्त्रियाँ ऐसा क्यों करती हैं!

इसके बाद मालूम हुआ कि वह आदमी चला गया। उसके चले जाने पर मेरा बोझ कुछ हलका हुआ, इस लिए कि मुझे न जाने कैसा मालूम हो रहा था। दरवाजे पर कोई पुकारा करे किन्तु घरकी स्त्रियाँ और लड़कियां कुछ उत्तर न दें, वह

बातें बहुत अशिष्ट जान पड़ती हैं।

मुझसे नहीं रहा गया। घरकी मालकिन से मैंने पूछा—आप ऐसा क्यों करती हैं?

मेरी बातको समझते हुए भी उन्होंने कहा—क्या?

मैं ने फिर कहा—जब कोई आदमी आपके घरके आदमियों को दरवाजे पर बुलाता है तो आप न स्वयम् उत्तर देती हैं और न लड़की को देने देती हैं। ऐसा क्यों करती हैं?

उन्होंने कहा—बहन जी, दिनमें जाने कितने आते हैं और बुलाते रहते हैं।

"तो इससे क्या? आपको जवाब तो देना चाहिए।"

उन्होंने कहा—जब कोई नहीं बोलता तो बुलाने वाले को समझ लेना चाहिए कि घर में कोई आदमी नहीं है।

मैंने पूछा—और यदि वह ऐसा न समझे तो?

उन्होंने कहा—तो फिर क्या!

मैंने कहा—इसका अर्थ यह कि वह बुलाता ही रहे?

उन्होंने कहा—नहीं, बहन जी, वे लोग ऐसा जानते हैं। दो चार बार बुलाने के बाद जब कोई नहीं बोलता तो वे लोग समझ लेते हैं और अपने आप लौट कर चले जाते हैं।

इन बातों से मुझे संतोष न हुआ। किन्तु मुझे चुप हो जाना पड़ा। घरके आदमियों ने जिस प्रकार के नियम बना रखे हैं। घर की स्त्रियों को उनके अनुसार चलना ही पड़ता है। इस प्रकार सोच कर मुझे चुप होना पड़ा। मैंने आगे कुछ कहा तो नहीं, परन्तु बार-बार सोचती रही कि इस प्रकार का व्यवहार ठीक नहीं है।

अब प्रश्न यह है कि ऐसा क्यों होता है। मेरी समझ में लड़कियों और स्त्रियों को अनेक बातों में सुरक्षित बनाये रखने

के लिए इस प्रकार के व्यवहार काममें लाये जाते हैं। मेरी समझ में यह मार्ग आवश्यक नहीं है। इस प्रकार के नियमों से न कभी किसी की रक्षा हुई है और न कभी हो सकेगी। इसके स्थान पर लड़कियों और स्त्रियों को उन सभी बातों का ज्ञान कराना चाहिए, जिनसे उनकी मान-मर्यादा को कभी धक्का लग सकता है। यदि लड़कियाँ और स्त्रियाँ स्वयम् उन बातोंका ज्ञान नहीं रखतीं तो उनके सम्मान की कोई रक्षा कर भी नहीं सकता।

यह बात ठीक है कि स्त्रियों को चरित्र-बल की बहुत आवश्यकता है। बिना इस बल के कभी किसी की रक्षा सम्भव नहीं है। इसके लिए सबसे उत्तम मार्ग यह है कि माता-पिता को अथवा घरके आदमियों को उन से स्पष्ट बातें करनी चाहिए। साथ ही समाजमे होने वाली घटनाओं की जानकारी उनको होने देना चाहिए। इस जानकारी के साथ-साथ लड़कियाँ और स्त्रियाँ इस प्रकार समझें कि जिससे उनके दुष्परिणामों को वे जान सकें और इन घटनाओं के साथ उन का क्या कर्त्तव्य होना चाहिए, इस का वे ज्ञान प्राप्त कर सकें।

स्त्रियों के जीवन में अन्धकार

स्त्री-समाज मानव जीवन मे एक विशेप स्थान रखता है। इसीलिए वह समाज का एक उत्तम अंग माना गया है। जब तक स्त्री-जीवन उन्नत नहीं होता, मनुष्य जीवन उन्नत नहीं बन सकता। इस आधार पर स्त्रियो का जीवन, समाज के शुभचिंतकों की दृष्टि में विशेप विचारणीय है।

स्त्रियाँ सृष्टि-रचना का विशेप आधार हैं। इनकी बुद्धि और कार्य-तत्परता ही समाज की शक्ति है। अतएव इनके

जीवन का अध्ययन और अनुशीलन समाज की उन्नति का साधन है। मैंने स्वयम् इस ओर विशेष ध्यान दिया है और स्त्रियों के जीवन की छोटी-छोटी बातों को बहुत दूर तक देखने की कोशिश की है। उनके प्रत्येक पहलू को मैंने गहराई के साथ सोचा है और समझने का प्रयत्न किया है।

स्त्रियों को मैंने आदर पूर्वक देखा है। उनके जीवन की छोटी और बड़ी—सभी बातों पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने के बाद मैं जिस परिणाम पर पहुँचती हूं, वह संतोष-जनक नहीं है। समाज का भीतरी और बाहरी रूप अनुभव करके और स्पष्ट रूप से जान कर यह स्वीकार करना पड़ता है कि उनको प्रकाश मिलने के स्थान पर, अन्धकार में अधिक रहना पड़ता है। अंधकार जीवन के सत्य को समझने नहीं देता। मानव जीवन का विकास अंधकार पाकर उन्नत नहीं होता। स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को अधिक सुविधायें प्राप्त हैं। ये सुविधायें जीवन को प्रकाश पहुँचाने का काम करती हैं।

किसी समझदार मनुष्य से यह छिपा नहीं है कि स्त्रियों का जीवन बहुत आरम्भकाल से ही बंधनों में चला आ रहा है। इन बंधनों ने स्त्रियों में केवल विवशता पैदा की है। फल यह हुआ है कि संकोच और भय ने उनको निर्बल बना डाला है। भूलें सभी से होती हैं। स्त्री हो या पुरुष, भूलों से पृथक कोई नहीं है। मनुष्य भूल करता है, साथ ही उसको अनुभव करता है। भूलों के प्रति सुधार करना ही मनुष्य जीवन का काम है। कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य का ज्ञान होना ही हमारे लिये आवश्यक है। यदि मनुष्य को इस बातका ज्ञान न हो कि उसे क्या करना चाहिये और क्या न करना चाहिये तो उसमें मनुष्यत्व की कमी मानी जाती है।

स्त्रियों के जीवन मे सबसे बड़ा अभाव यह देखने में आता है कि वे भयपूर्ण परिस्थितियों मे सहज ही भयभीत हो उठती हैं और उस समय अपने साधारण कर्त्तव्य का ज्ञान भी भूल जाती है। इस प्रकार की बातों मे कुछ लोग विरोध कर सकते हैं। मैं स्वयम् इस बात को स्वीकार करती हू कि स्त्रियों में भी कुछ अत्यन्त कर्त्तव्यशील और परम सुयोग्य सिद्ध हुई हैं। दूसरे देशोंमे भी कितनी ही स्त्रियोंने अपनी योग्यताके कारण बहुत ऊंचे पद पाये हैं। हमारे देशमे भी इस प्रकार की महिलाओं का अभाव पूर्ण रूप से नहीं है। वर्त्तमान दिनोंमें भी श्रीमती सरोजनी नायडू, विजयलक्ष्मी पंडित, कमला देवी चट्टोपाध्याय, राजकुमारी अमृतकौर, के नाम विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं। सरोजनी नायडू भारतीय कांग्रेस के अध्यक्ष पद पर रह चुकी हैं और देशके स्वतत्र होने पर राष्ट्रीय सरकार ने उन्हें एक प्रान्तका गवर्नर बनाकर न केवल उनको सम्मान दिया है वरन् स्त्री-समाज का मस्तक ऊंचा किया है। श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडितने अपनी जिस योग्यता का परिचय दिया है, वह सर्वथा श्रद्धापूर्ण है। देशके राजनीतिक आन्दोलन में निर्भयता पूर्वक काम करके और अगरेज सरकार का विरोध करके उन्होंने अपनी जिस शक्तिका प्रदर्शन किया है, उसे भला कौन स्वीकार न करेगा। देशमे राष्ट्रीय सरकार की स्थापना होने पर श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित को मंत्रीमंडल में चुना गया और उसके बाद विदेशोंके लिये उनको राजदूत बना कर देश की राष्ट्रीय सरकार ने स्त्री-समाज का मुख उज्वल किया।

इसी प्रकार अनेक स्त्रियों की जीवन-कहानियां आज

समाज के सामने है। उस प्रकार की स्त्रियोंके जीवन दूसरे देशोंमें कुछ अधिक संख्यामें पाये गये हैं। परन्तु यह संख्या बहुत इनी-गिनी स्त्रियों की है। कुछ स्त्रियों के इस प्रकार उन्नति करने से स्त्री-समाज का अंधकार नहीं दूर होता। मेरा विश्वास यह नहीं है कि देश की पन्द्रह बीस करोड़ स्त्रियों में यदि दस-बीस स्त्रियां अपने जीवन को अधिक ऊंचा उठा सकें तो उससे समाज की उन्नति मानी जायगी। देश और विदेश की उन्नत स्त्रियों के जीवन से हमें सम्मान मिला है। यह एक बड़े गौरव की बात है। परन्तु मेरे सामने तो समाज की साधारण स्त्रियोंका प्रश्न है।

मैंने प्रायः देखा है कि अनेक प्रकार की भूलें करने के बाद भी वे अपनी भूलों का समझने और अनुभव करने का ज्ञान नहीं रखतीं। मैं अनेक स्त्रियोंके जीवन की कथाओं को जानती हूं और यह भी जानती हूं कि उन्होंने लगातार बहुत दिनों तक भूलें कीं। उनके भयानक परिणाम उन्होंने भोगे, परन्तु उन्होंने अपने जीवन में कभी स्वीकार नहीं किया कि हमने जो भूलें कीं, उनका हमको फल मिला।। वे अपने मुंह से अपनी भूलों को कहना नहीं चाहतीं, इतनी ही बात नहीं है। सत्य यह है कि भूलें करके और उनके बुरे परिणाम भोग कर भी उनको उस बातका ज्ञान नहीं होता कि हमने जो कुछ किया था, उसी का फल यह है।

यहां पर कुछ उदाहरण देकर इनकी पुष्टि कर देना आवश्यक जान पड़ता है। एक सम्पन्न परिवार की साधारण पढ़ी-लिखी स्त्री के जीवन की कथा मुझे याद आती है। परिवार शिक्षित था। किसी प्रकार की कोई कमी न थी। सुख का जीवन बीत रहा था। किन्तु उस घरकी एक मात्र

महिला का व्यवहार अच्छा नहीं था। उसके जीवन का आचरण भी, परिवार की अशांति का कारण था। मुझे ठीक मालूम है कि उसने अपने घर के मूल्यवान वस्तुओं को किस प्रकार मिट्टी के मोल में चोरी से बेचा और कई वर्षों तक उसने अपनी इस आदत को बराबर चलने दिया। केवल उसके इस आचरण के कारण न केवल उसका घर और परिवार मिट्टी में मिला। बल्कि वह महिला स्वयम् बड़े-से-बड़े कष्टों में पड़ी और उसके लड़के-बच्चे तीन-तेरह हो गये। मैं उसके अन्तिम दिनों को भी खूब जानती हूं। सम्पत्तिपूर्ण परिवार को भिखारी बना देने और स्वयम् भिखारिणी बन जाने के बाद भी उसने कभी भी अपनी भूलों को स्वीकार नहीं किया। यदि कोई उसे समझाने की कोशिश करता तो एक क्षण भी वह उसे सुनना न चाहती।

स्त्रियों की विवेक हीनता और बुद्धि की दुर्बलता को मैं बार-बार स्वीकार करती हूं। यदि इस प्रकार के उदाहरण यहां पर लिखे जायं तो बहुत से पन्ने भर जायंगे! इसी लिये ऊपर एक उदाहरण लिखने के बाद मैं आवश्यक नहीं समझती कि अधिक उदाहरण देकर, इस प्रकार की घटनायें यहां पर लिखी जायं। ऊपर की एक घटना देकर मैं विश्वास करती हूं कि स्त्री और पुरुष सहज ही इस प्रकार की घटनाओं का अनुभव लगा सकेंगे और जिस सत्य पर मैं प्रकाश डालना चाहती हूं, उसे वे बुद्धिमानी के साथ अनुभव कर सकेंगे।

सज्जन और दुर्जन को पहचानने के लिये, मनुष्य को जिस प्रकार की बुद्धि प्राप्त करनी चाहिये। स्त्रियों में उसके अभाव का कारन, उनके जीवन का वह अंधकार है, जिसके

बाहर उन्हें आनेका संयोग नहीं मिला करता साधुजनों की अपेक्षा, दुष्ट और दुराचारियों की संख्या अधिक होती है। कोई भी दुष्ट आत्मा अपने माथे पर साइन बोर्ड लगाकर नहीं रहता। बुद्धि मान मनुष्य अपने अनुभव से ही उनको पहचाना करते हैं। समाज की कुछ ऐसी व्यवस्था है, जिसके अनुसार स्त्रियां जीवन के संघर्ष से बचाकर रखी जाती हैं। संरक्षण के जिस परदे में उन्हें रहना पडता है, उसका अंधकार स्त्रियों की आंखों को प्रकाश नहीं मिलने देता। फल यह होता है कि भले और बुरे मनुष्य को पहचान नहीं पाती।

कच्चे और पक्के दो प्रकार के रंग होते हैं। कच्चे रंग विशेष चमक रखते हैं। उनके रंग की तेजी को देखकर अनुभव हीन तथा साधारण वृत्ति के मनुष्य, उनकी ओर आकर्षित होते हैं उस समय उन को इस बात का ज्ञान नहीं होता कि अधिक चमकनेवाला रंग पानी पड़ते ही अथवा धूप में डालते ही अपना रंग खोने लगेगा और थोड़े से प्रयोग के बाद ही वह अपने भद्दे रंग मे आ जायगा। दुष्ट प्रकृत्ति मनुष्यों का भी यही हाल होता है। सम्पर्क में आते ही वे अधिक भले जान पड़ते हैं। उनका व्यवहार और बर्त्ताव सहज ही दूसरों को अपनी ओर आकर्षित करता है। अनुभव हीन मनुष्य और अदूरदर्शी स्त्रियां उनके द्वारा छली जाती हैं। जिस प्रकार उनसे धोखा खाना पड़ता है। उनकी कहानियां बहुत हैं। उन कहानियों को सभी लोग जानते हैं।

हमारे जीवन में सीता का चरित्र आदर्श माना गया है। प्रत्येक हिन्दू-स्त्री सीता को प्रातःस्मरणीय समझती है। और भक्ति पूर्वक उनका नाम लेती है। ऐसा करना ही चाहिये रामायण के लेखक कवि गोस्वामी तुलसीदास जी ने सीता को

एक आदर्श रूप में स्त्री समाज के सम्मुख उपस्थित किया है। हम सभी के लिये वे सर्वदा वंदनीय हैं। परन्तु यदि गंभीरता पूर्वक उनके चरित्र का अध्यन किया जाय तो उनके जीवन में भी वही अंधकार दिखाई देता है। जो स्त्री समाज के साथ प्राचीन काल से चला आ रहा है।

मैंने सीता के जीवन को सब से पहले वंदनीय स्वीकार किया है। मेरे हृदय मे उनके प्रति जरा भी अविश्वास नहीं है। उनकी आलोचना करना मेरा उद्देश्य नहीं है। जो कुछ यहां पर मैं लिखना चाहती हू वह केवल स्त्री जीवन की उन परिस्थितियों के संवन्ध मे है जिसने हमे आज तक अयोग्य और अनुभव हीन वना रखा है।

रामायण मे वर्णित सीताजी के चरित्र की उन पंक्तियों का अत्यन्त संक्षेप मे मैं उल्लेख करना चाहती हूं जो रावण के द्वारा उनके अपहरण के सवंध मे हैं। लक्ष्मण और सीता के साथ राम वन मे थे। उस समय उनके निकट से होकर स्वर्ण से भी सुन्दर और आकर्षक मृग निकला। सीता उसे देखकर मुग्ध हो गयीं। उन्होंने राम से उस मृग के मारने और उसका चर्म लाने की प्रार्थना की। सीता की वात को सुनकर उस मृग को मारने के लिये राम तैयार हुए और जाने से पहले उन्होंने अपने भाई लक्ष्मण को समझाया कि जगल मे अनेक प्रकार के निश्चर रहते हैं। तुम अपने वुद्धि-वल से सीता की रक्षा करना। यह कहकर राम मृग को मारने चले।

वहुत दूर निकल जाने के वाद राम ने मृग को वाण से घायल किया। चोट खाते ही उसने लक्ष्मण का नाम जोरके साथ लिया और उसके वाद मन-ही-मन राम का स्मरण किया। सीता ने लक्ष्मण का नाम सुनकर अनुभव किया कि राम के

ऊपर कोई विपद् आ पड़ी है। इसीलिए उन्होंने अपने भाई का नाम लेकर पुकारा है। यह सोच कर उन्होंने लक्ष्मण से राम के पास जाने के लिये कहा। लक्ष्मण सीता को अकेली छोड़ कर जाना नहीं चाहते थे। किन्तु सीताके आग्रह करने पर उनको जाना स्वीकार करना पड़ा। जाने के पहले सीता के आस-पास लक्ष्मण ने एक रेखा खींची और सीता को देवताओं के हाथों में सौंप कर वे वहां चले गये, जहां मृग को मारने के लिए राम गये थे।

उसी समय रावण सीता के पास एक संन्यासी के रूपमें आया और उसने सीतासे भिक्षा मांगी। सीता, संन्यासी को अथिति जान कर अपने पासके कन्द, मूल, फल देने लगीं। संन्यासी ने उसे लेने से इन्कार किया और कहा कि रेखा के बाहर आने पर मैं तुम्हारी भीख ले सकता हूं। यह सुन कर सीता लक्ष्मण की खींची हुई रेखा के बाहर आ गयीं। उनके बाहर आते ही रावण ने सीता से अपना अभिप्राय प्रकट किया। सीता ने उस समय उसको एक दुष्ट के रूप में देखा। रावण ने अपना असली रूप प्रकट किया और अपना नाम बताकर उसने सीता से कुछ बातें कहीं। सीता भयभीत हो उठीं, किन्तु धैर्य धारण करके उन्होंने कहा—

'दुष्ट ठहर, अभी प्रभु आ रहे हैं।' इसके साथ-साथ सीताने और भी दो-चार बातें रावण के लिए अपमान जनक कहीं—

जिस प्रकार कालके वश होकर एक खरगोश सिंह की स्त्री को अपने अधिकार में करना चाहता है, उसी प्रकार तूने मेरे पाने की इच्छा की है। क्या कौआ गरुड़ की बराबरी कर सकता है और एक नदी समुद्र के समान हो सकती है!

सीता की इन बातों को सुन कर रावण क्रुद्ध हो उठा

और उसने सीता को रथ में बिठा कर लंका का मार्ग लिया। रावण के साथ जाती हुई सीता अनेक प्रकार विलाप करने लगीं और कहने लगीं, हे जगत के वीर शिरोमणि राम! तुम तो दुख के दूर करने वाले और शरणागत की रक्षा करने वाले हो, तुमने मेरे किस अपराध से मेरे प्रति दया भुला दी है।

इस कथा मे सीताजी के जीवन मे कई बातें विचारणीय हैं। पहली बात तो यह कि एक साधारण स्त्री की भांति सुन्दर मृग को देख कर वे मुग्ध हो उठीं और उसको मार कर चर्म लाने के लिए उन्होंने कहा। अपने वनवासी जीवन और उसकी भयानक परिस्थिति को वे भूल गयीं। उन्हीं के सामने जाने के पहले रामने सीता को लक्ष्मण के सुपुर्द किया था और क्यों सौंपा था, यह भी सीता ने सुना था, फिर भी उन्होंने राम को विपद मे जानकर लक्ष्मण को उनके पास भेजा। लक्ष्मण के विरोध करने पर भी सीताने हठ की। एक बार भी उन्होंने इस बात को न सोचा कि यदि राम विपद में होते तो क्या लक्ष्मण पर उसका प्रभाव न पड़ता। सीता ने केवल आग्रह से काम लिया। लक्ष्मण ने उनको सुरक्षित बना कर जाने का निश्चय किया। जाने के पहले वे सीता को रेखा का अभिप्राय बताकर गए। किन्तु एक संन्यासी के रूप में दुष्ट के आने पर वे उसे भी भूल गयीं और रावण जैसा कहता गया, एक संन्यासी की बात को समझ कर उन्होंने उसे माना और रेखा के बाहर आ गयीं।

बाहर आने पर उन्होंने रावण को जाना और उसका अभिप्राय स्पष्ट सुना। कुछ देर तक उन्होंने बातें कीं और उसे नीच बनाया। उस समय भी वे रेखा के भीतर नहीं चली गयीं। उनकी अन्तिम बात यह है कि रामको उन्होंने

स्वयम् भेजा था और बाद में लक्ष्मण को भेजकर वे स्वयम् अरक्षित बनी थीं। फिर भी रावणके साथ जाती हुई जब वे विलाप करती हैं तो कहती हैं—'हे राम! तुमने मुझे क्यों बिसार दिया है'। रामके प्रति इस प्रकार वाक्य कहते हुए उन्होंने यह नहीं कहा कि मैंने तुमको स्वयम् भेजा था, उसका फल मुझे यह मिला।

सीता का जीवन हमारे लिए आदर्श है, इसी लिये उनके जीवन में हमें सभी बातें अनुभव पूर्ण मिलनी चाहिये थीं। साधारण स्त्रियों की भांति कर्त्तव्य विमूढता सीताके जीवनमें शोभा की वस्तु नहीं है। बात वास्तव में यह है कि सीता को स्वयम् जीवन के इस संघर्ष का अनुभव न था। उन्हों ने उस विपत्तिकाल में भी नहीं सोचा कि किस प्रकार का भयानक समय सामने आ सकता है। आज भी तो स्त्री समाज में इसी प्रकार की बातें देखने में आती हैं और अपने अविवेक के लिये स्त्रियां निन्दा पाती हैं। उस अविवेक को दूर करने के लिए स्त्री-जीवन का ढांचा ही बदलना पड़ेगा और उन्हें उस जीवन में लाना पड़ेगा, जिसमें चलकर वे संसारका पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकती हैं। उसी समय उनमें अनुभव परायणता और दूरदर्शिता उत्पन्न हो सकती है।

उपहास और अश्लीलता

पुरानी वस्तुओं का उपयोग भी होता है, किन्तु उनके व्यर्थ हो जाने पर उन्हें फेंका भी जाता है। जहां तक उपयोगिता का प्रश्न है, कोई भी वस्तु व्यर्थ नहीं समझी जाती, किन्तु जब वह स्वयम् व्यर्थ हो जाती है तो उसको बेकार समझने के सिवा और कोई मार्ग नहीं रह जाता फिर भी

जहां तक सम्भव होता है, उसमें संशोधन और सुधार का काम होता रहता है।

ऐसी कोई वस्तु न मिलेगी जो पुरानी और बेकार न होती हो। जो पदार्थ नया होता है, वह कभी पुराना भी होता है। जो चीज काम की होती है, वह किसी समय बेकार भी हो सकती है। प्रकृति का यह कार्य सभी के साथ है। चाहे मनुष्य का जीवन हो अथवा पशुओं का या कोई पदार्थ हो मिट्टी से लेकर लोहा, तावा, सोना चांदी आदि सभी वस्तुओं में यह नियम अपना काम करता है।

हमारा शरीर भी एक दिन पुराना होता है। उस समय उसमें यौवन काल की सी न तो शक्तियां रह जाती है और न उसकी कोई उपयोगिता। एक दिन आता है, जब उस शरीर का भी मोह छोड़ देना पड़ता है। हमारे जीवनमें शरीर से बढ़कर अधिक मूल्यवान कोई दूसरी वस्तु नहीं हो सकती। उसके अयोग्य और हानिकारक होने पर उसके सुधार का कार्य बराबर होता रहता है। किन्तु निराश अवस्था मे उसका भी अन्त करना पड़ता है।

स्त्री-समाज के साथ अनेक प्रकार की कुछ ऐसी कुरीतियां चल रही है, जिनका कोई उद्देश्य नहीं है और वे मनुष्य के नेत्रों मे एक मात्र उपहास पूर्ण बन गयी है। उनका स्वरूप यहीं तक नहीं है। कुछ तो सीमा लांघ कर अश्लीलता का रूप धारण कर चुकी है। स्त्रियां सहज ही सरल सुकोमल और लज्जापूर्ण होती है किन्तु पुरानी कुरीतियों और दोष पूर्ण परिपाटियों ने उनको अपने इस गुणके विरुद्ध बना रखा है। इन पृष्ठों मे स्त्री-समाज की कुछ उन बातो पर प्रकाश डालना चाहती हू, जिनके कारण आज हमारा उपहास हो

रहा है। वे क्या हैं और किस रूपमें हमारे लिए उपहास पूर्ण बन गयी हैं, इसका उल्लेख मैं स्पष्ट रूपसे करूंगी।

मनुष्य जो कुछ करता है, कुछ सोच-समझ कर करता है और किसी उद्देश्य को सामने रख,कर करता है। हमारे जीवनकी सभी बातों का यही अर्थ होना है, किन्तु हमारी बहनें यदि स्त्री-जीवन की कुछ बातों पर विचार करें तो उनको स्वयम् उनके प्रति घृणा मालूम होगी। जो चीज बुरी होती है, वह सभी को बुरी लगती है। स्त्रियां तो स्वभावतः बुराई से घृणा करने वाली हैं। इतना सब होने पर भी यदि झूठी बातें और उपहास पूर्ण कुरीतियां स्त्रियों के जीवन में चल रही हैं तो उसका कारण यह है कि उनके जीवन की ऐसी बहुत सी बातें हैं जिनको वे कभी सोचती नहीं। मैंने तो अनेक अवसरों पर अत्यन्त साधारण स्त्रियों के जीवन को देख कर आश्चर्य किया है। किन्तु साथ ही यह स्वीकार करना पड़ा है कि उनको इस बातका स्वयम् ज्ञान नहीं है। इसी प्रकार जिन उपहासपूर्ण कुरीतियों की ओर मैं स्त्री-समाज का ध्यान आकर्षित करना चाहती हूं और स्पष्ट बताना चाहती हूं कि वे कुरीतियाँ आज स्त्रियोंके लिए न केवल उपहास जनक वरन अपमान जनक हो रही हैं। उनको एक बार समझने-बूझने के बाद कैसे बदला जाय, यह सोचना प्रत्येक समझदार स्त्री का कर्त्तव्य है।

रोने की प्रथा

किसी विपद या पीड़ा के होने पर ही रोना स्वभाविक होता है। प्रशंसा की बात तो यह होती है, कि मनुष्य उस वेदना के सहन करने का भी कार्य करे किन्तु आँखों में आसू न आने दे। यदि ऐसा हो तो मनुष्य के साहस की प्रशंसा

होती है। साधारण बात तो यही है, किसी कष्ट और पीड़ा के उपस्थित होने पर मनुष्य रो देता है। यहाँ तक बात भी समझ मे आती है। किन्तु प्रसन्नता के समय भी यदि एक मनुष्य रोने लगे तो उसका क्या अर्थ होता है ?

अनेक अवसरों पर स्त्रियों का रोना देख कर मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि स्त्रियोंने केवल रोना ही सीखा है। स्त्रियां मे रोने की प्रथा, विवाह के बाद से आरम्भ होती है। माता-पिता के घरसे ससुराल जाने के समय, विदाई कितनी अश्रु-पात के साथ होती है, इसका स्मरण आने पर शरीरमे रोमांच हो उठता है। यदि सौभाग्य से शिक्षा और सभ्यता के आशीर्वाद स्वरूप कुछ लड़कियां और स्त्रियां इन कुप्रथाओंका अनुकरण न करती हों तो उससे हमारा समाज उपहास से बच नहीं सकता। समाज के दोषी होने पर अपयशी सभी को होना पड़ता है।

हां तो अब देखना यह है कि स्त्रियों मे अनावश्यक रोना किन अवसरों पर होता है ? इसको खोजते हुए चलने पर हमे दिखाई देगा—लड़कियां और स्त्रियां उस समय रोती है जब ससुराल जानेके लिए विदा का समय आता है। उसी समय क्यों वे एक-दो दिन पहले से रोने की तैयारी करने लगती हैं। उनका रोना साधारण नहीं होता। अपनी शक्ति भर वे चिल्ला-चिल्ला कर विलाप करती है। और रो-रोकर अचेत होने लगती हैं। केवल वही नहीं रोतीं उनकी मां, बहनें, भाई, भावजें और बूढ़े आदमी भी आंसू बहाते हुए देखे जाते है। मैंने तो यह भी देखा है कि जो परिवार और कुटुम्ब जितना अधिक अशिक्षित होता है, ऐसे अवसरो पर, यह दृश्य उतना ही अधिक भयानक बन जाता है।

दूसरा रोने का समय लड़कियों और स्त्रियों के सामने वह आता है जब, कि उनका भाई और पिता, उनकी ससुराल में, उनसे मिलने जाता है। यह रोना भी बहुत बेतुका है। अपने भाई और पिताके आने पर लड़कियों और स्त्रियों को अपनी प्रसन्नता का भाव प्रकट करना चाहिए। उसके स्थान पर वे बिल्कुल उलटा करती हैं। इसका अभिप्राय भी कुछ समझमें नहीं आता। समाज के पढ़े-लिखे पुरुषों से जब बातें की जाती हैं, तो कहने लगते हैं—

अरे साहब, इन स्त्रियों को कौन समझावे? यदि हम लोग कुछ कहते-सुनते हैं तो कितनी ही सयानी स्त्रियां; हमें बुरा-भला कहने लगती हैं। तब यह होता है कि इन लोगों को रोने दो, और क्या उपाय है!

पुरुषोंके मुंहसे और विशेष कर पढ़े-लिखे आदमियों से इन बातों को सुन कर बहुत आश्चर्य मालूम होता है। स्त्रियों का हाल यह है और पुरुषोंकी ये बातें हैं। अब इसका सुधार कैसे हो। पुरुषोंने तो यह कह कर छुट्टी पाली कि वे रोकनेसे मानती नहीं। इसलिये जो कुछ करती हैं, उन्हें करने दिया जाय। उनके कहने का यह भी अभिप्राय है कि स्त्रियां इतनी नीच और बुद्धिहीन होती हैं कि उनको अधिक रोकना बेकार है, वे मान नहीं सकतीं!

संयोगवश एक स्थान पर कुछ आदमियों से इसी विषय पर बातें हुईं। लोगोंने इन बुरी रीतियों का अनुभव किया परन्तु वहीं पर एक पण्डित जी बैठे थे, उन्होंने मेरी बातोंका विरोध करते हुए कहा—

यह तो अपनी अपनी सभ्यता है। जिसकी जो सभ्यता होती है, उसको वह कैसे छोड़ सकता है?

पंडित जी की बात सुन कर मुझे कुछ हंसी आयी, मैंने नम्रता पूर्वक कहा—तो आपकी सभ्यता रोने की है ?

बैठे हुए लोग हंसे। पंडित जी ने तिलमिलाते हुए कहा—रोने की क्यों, परन्तु जो समय रोने का होता है, उसमें रोया भी जाता है।

मैंने कहा—ससुराल में भाई या बाप के पहुँचने पर रोने का अवसर होता है या हंसने का ? रोने का तो मतलब यह है कि भाई और बापके पहुँचने पर उनको अच्छा न लगा उन्हें कष्ट पहुँचा, इसी लिये वे रोईं।

पंडित जी ने तपाक के साथ कहा—उसका यह अभिप्राय नहीं होता। उस समय स्त्रियां रोकर यह भाव प्रकट करती हैं कि तुम्हारे न आने पर हमको कितना दुखी रहना पड़ा। उस समय का उनका क्रन्दन, उनके उस दुख को प्रकट करता है जब वे आये न थे और उसने उनको याद किया था।

पंडित जी की बात कुछ समझमें न आयी। मैंने आदरके साथ पूछा—क्या स्त्रियों को ससुराल में कष्ट ही होते हैं और ऐसे कष्ट जो भाई और बापके विना आये निवारण नहीं किये जा सकते ? वास्तव में बात यह नहीं है। एक दोषपूर्ण प्रथाके कारण स्त्रियों को ऐसा करना पड़ता है। यदि इन बुरी प्रथाओं को आप लोग समझेंगे नहीं और उनका विरोध न करेंगे तो समाज के ये दोष सदा चलते रहेंगे।

लोगोंने मेरी इस बात को सुना, परन्तु पण्डितजी की समझ में मेरी बात न आयी, इसीलिये मैं ने फिर कहा—हमारे ये दोष अपने देशवासियों की आखों में और विदेशी आलोचनाओं में निन्दा पा रहे हैं। इन्हीं के कारण स्त्रियों का स्थान समाज में पतित हो रहा है। यदि पुरुष इनके बदलने

का कार्य नहीं करते तो मैं तो यही समझती हूं कि स्त्रियों के अयोग्य बने रहने में पुरुष सहायता कर रहे हैं!

इसी प्रकार जब लड़कियां और स्त्रियां ससुराल से लौट कर अपने माता-पिता के घर आती हैं- तो भी वे रोती हैं। यह अवसर भी रोनेका नहीं है और न किसी को अच्छा मालूम होता है किंतु जो लोग इन प्रथाओं के साथ-साथ चल रहे हैं, उनको बुरा न लगेगा। गंदगी में रहने वाले मनुष्यों के स्वभाव ऐसे बन जाते हैं, जिनसे उनको उस गंदगी का अनुभव नहीं होता। उनकी गन्दी अवस्थाओं का ज्ञान, उन्हें होता है, जो गंदे स्थान में नहीं रहा करते। ठीक यही अवस्था बुरी प्रथाओंके मानने वालों की होती है। उनके मन और स्वभाव, उनके अनुकूल बन जाते हैं और फिर उन्हें, उनकी खराबी नहीं मालूम होती।

अश्लीलता का व्यवहार

स्त्री-जीवन के अश्लील व्यवहार कुछ अवसरों पर बहुत असह्य हो जाते हैं। विवाह के दिनों में गालियां गाने की प्रथायें बहुत पतित हो गयी हैं। इस कुप्रथा का आरम्भ ही न केवल मूर्खता के साथ है बल्कि अश्लीलता पूर्ण है। शिक्षित लोगोंमें इसका निन्दापूर्ण अर्थ ही लगाया जाता है। और बहुत स्थानोंमें इसके रोकने की चेष्टा की गयी है।

शिक्षाके प्रकाशने लोगों को समझने का अवसर दिया है और शिक्षित स्त्री-पुरुषों ने बराबर इसका विरोध कर रखा है। इसे कोई भी व्यक्ति स्वीकार करेगा। साथ ही मैंने बार-बार इस बात को लिखा है और जान बूझ कर लिखा है कि कुप्रथाओं का प्रचार अशिक्षित एवम् मूर्ख स्त्री-पुरुषों में अधि

है। मैं ने स्पष्ट इस बात को बताया है कि जो 'जितना ही अधिक मूर्ख है, वह उतना ही अधिक कुप्रथाओं का अनुयायी है।

समाज के दोषों को दूर करना,समाज के शुभचिन्तकों का कार्य है। जो बातें झूठी और व्यवहार के विरुद्ध होती हैं। उनको हमारा आत्मा स्वयम् अनुभव करता है। यदि पक्ष-पात से काम न लिया जाय और सच्चाई के साथ अपनी अवस्था पर विचार किया जाय, तो अपनी त्रुटियां अपने को स्वयम् जान पड़ती है। सामाजिक निर्बलता को बिना समझे काम नहीं चलता। इसीलिए शिक्षित और सभ्य जातियों की ओर हमें देखना पड़ता है। उस समय हमे और भी स्पष्ट इस बातका ज्ञान होने लगता है कि हमारे जीवन की कितनी त्रुटियां समूल नष्ट करने के योग्य है। हमे उनको नष्ट करना ही चाहिए।

समाज का सुधार और संस्कार किये बिना, काम नहीं चलता। अशिक्षित और विचारहीन मनुष्य कहने लगते हैं—"तो क्या हमारे पूर्वज मूर्ख थे जिन्होंने इनका प्रचार किया था और उनके बाद उनकी संतानों ने उनका अनुकरण किया ?' जो लोग इस प्रकार की बातें करते है, उनको समझाना बहुत कठिन है। वे न तो बुद्धि रखते हैं और न बुद्धिसे काम लेना चाहते हैं। इसीलिये वे पुरानी प्रथाओं को पूर्वजों के ऊपर ढकेल देते है। किसी प्रथाकी अच्छाई और बुराई हमको स्वयम् सोचनी चाहिये और उसके लाभ हानि का विचार करके हमे उसका निर्णय करना चाहिये।

पूर्वजों की बुद्धिमानी और मूर्खता का कोई प्रश्न हमारे सामने नहीं है। वे बुद्धिमान भी हो सकते है और मूर्ख भी,

उनके द्वारा प्रचार मे आयी हुई प्रथायें उपयोगी भी हो सकतीं हैं और हानिकारक भी। जिन स्त्री-पुरुषों से आज का समाज बना है, उनको वर्त्तमान समाज की परिस्थितियों पर विचार करना पड़ेगा। उस समय उनका धर्म होगा कि बुद्धिमानी के साथ अच्छे विचारों और उपयोगी प्रथाओं को सजीव बनाने की चेष्टा करें किन्तु जो प्रथायें अनावश्यक अनुपयोगी और हमको दरिद्र बना रही हों, उनको जड़से मिटा दें। इसीमें हमारा कल्याण है। इसके विरुद्ध हमारा अहित है।

स्त्री-समाज के साथ ऐसी कितनी ही कुप्रथायें पायी जायेंगी, जिनके प्रचारक पुरुष स्वयम् और विशेष कर पंडित समुदाय है। आजका स्त्री-समाज, पुराना स्त्री-समाज नहीं है। एक अच्छी संख्यामे शिक्षित होकर, स्त्रियोंने आगे कदम बढ़ाया है। इस प्रकार की बहनों का सदा प्रयत्न होना चाहिये, जिससे उनका स्त्री-समाज सुयोग्य और प्रशंसनीय बन सके।

घरों की व्यस्था

सामाजिक जीवन की एक पुरानी व्यवस्था आज भी हमारे साथ चली जा रही है और वह यह कि स्त्रियाँ घरो के भीतर का प्रबन्ध देखें और पुरुष बाहरी कार्यों का भार अपने सिर पर लें। स्त्री और पुरुष के कार्योंका विभाजन इस रूपमे, न केवल हमारे देशमे रहा है, बल्कि संसारका ऐसा कोई देश न मिलेगा, जहाँ समाज का यह रूप न रहा हो।

आज की शिक्षा और सभ्यता ने जीवन की परिस्थिति ही पलट दी है। यह बहुत आवश्यक नही रह गया कि स्त्रियाँ

घरोंके भीतर का कार्य करें और पुरुष बाहरी जीवन में अपना उत्तरदायित्व समझें। नवीन शिक्षाके अनुसार हमारे सामाजिक जीवन मे अनेक प्रकार के परिवर्त्तन हुए हैं और भविष्य मे उससे भी अधिक होने जा रहे है। इसी आधार पर स्त्रियोंने घरोंसे बाहर निकल कर अपने कार्यका क्षेत्र बनाया है और पुरुष अपने घरोंका प्रबंध करने में अपना कर्त्तव्य समझने लगे हैं।

यद्यपि यह नवीनता समाज में अभी अधिक स्थान नहीं रखती। एक बड़ी संख्या मे स्त्री और पुरुष पुरानी बातों का ही अनुकरण करते है। इसीलिये अधिकांश समाज में स्त्रियाँ घरके भीतर की अधिकारिणी और पुरुष बाहरी कामो के कर्त्ता-धर्त्ता समझे जाते हैं। स्त्रियों का कार्यक्षेत्र घरमे भी है और बाहर भी, इसके संबंध मे मै ने कई बार लिखा है और संक्षेप मे यहाँ पर भी मैं यह कहना आवश्यक समझती हूं कि प्रत्येक स्त्री को घरके बाहरी कार्यों का अच्छा-से-अच्छा अनुभव होना चाहिये। जिससे आवश्यता होने पर वे किसी की मुहताज न बन सके। मेरा तो सदा इस बात पर विश्वास रहा है कि स्त्री और पुरुष मिल कर घरेलू और बाहरी कार्यों को सम्हालें। आवश्यकता होने पर वे अलग अलग भी कार्य करें और साथ-साथ कार्य-सम्पादन की भी योग्यता रखें। फल यह होगा कि दोनो एक, दूसरे की कमी को पूरा कर सकेंगे और समय-असमय एक, दूसरे के अभाव के कारण कठिनाई,में न पड़ेंगे।

यह बहुत आवश्यक है कि सुयोग्य स्त्रियां बाहरी कार्यों के सम्पादन से लाभ उठावें और अपने परिवार की सहायक सिद्ध हो सकें। इसी प्रकार पुरुषो के लिए यह सम्मानपूर्ण

होगा कि समय पाने पर वे घरके सभी कार्यों को कुशलता पूर्वक कर सकें। स्त्री और पुरुष में सद्भाव और स्नेह बनाये रखने के लिए इस प्रकार की व्यवस्था उपयोगी सिद्ध होगी। पुरुष,स्त्री के कार्यों की कड़वी आलोचना करें और इसके लिए वे अपने आपको अधिकारी समझें, यह न तो अच्छा ही मालूम होता है और न इससे घरका जीवन ही संतोषपूर्ण बनता है। इसीलिये आज की शिक्षा इसके विरुद्ध है।

इन सभी बातों के साथ-साथ स्त्रियों को घरों की व्यवस्था का सुन्दर ज्ञान रखना चाहिये! वे बाहरी कार्यों का सम्पादन करें, किन्तु घरके कार्यों में वे अयोग्य बनें, यह भी अच्छी बात नहीं है। मेरा तो विश्वास यह है कि एक कुशल कार्यकर्त्ता अपने सभी कार्यों में सुयोग्य ही सिद्ध होता है, चाहे वह घरोंके भीतर का कार्य हो, और चाहे बाहर का। जो लोग समझते हैं कि एक पढ़ा-लिखा मनुष्य मोटे कार्यों को ठीक-ठीक नहीं कर पाता, वे भूल करते हैं। मैंने स्वयम् देखा है कि एक स्कूल में पढ़ाने वाला अध्यापक अथवा कालेज का प्रोफेसर एक गाय या बैल को उसके खूंटे में उतने अच्छे ढंगसे नहीं बांध पाता, जितनी सुन्दरता और अच्छाई के साथ एक किसान आदमी बाँधता है। अध्यापक और प्रोफेसर की अयोग्यता पर किसी को आश्चर्य नही मालूम होता, ऐसा मैंने देखा है। परन्तु मैं इसका दूसरा ही अर्थ समझती हूं। सत्य बात यह है कि एक सुयोग्य अध्यापक अथवा प्रोफेसर गाय और बैल के बांधने का कार्य अच्छा करना नहीं चाहता इस प्रकार के शिक्षित मनुष्यों के हृदयों में इस प्रकार का भाव भरा रहता है, कि हमतो पढ़े-लिखे आदमी हैं, यह हमारा काम नहीं है। मैं भली प्रकार समझती हूं कि ऐसा सोचना

अपनी अयोग्यता का परिचय देना है।

घरों का काम करने वाली शिक्षित और सुयोग्य स्त्रियाँ वाहरी कामों में भी सुयोग्य ही साबित होती हैं। ठीक यही अवस्था शिक्षित और सुयोग्य पुरुषों की भी है।, किसी प्रकार का अन्तर नहीं पड़ता । जब कोई अन्तर पड़ता है तो उसका कारण होता है और कारण होता है, मन का झूठा विश्वास।

इसी आधार पर स्त्रियो को सदा इस वात पर विश्वास करना चाहिये कि एक बुद्धिमान मनुष्य सभी कार्यों में अपनी सुबुद्धिका ही परिचय देता है। स्त्रियां वाहरी कार्यों में अधि-कारिणी वनें किन्तु घरके भीतरी कार्यों की योग्यता में कोई त्रुटि न आने दें। यह अत्यन्त आवश्यक है।

घरकी व्यवस्था की ओर मैं स्त्रियों का ध्यान यहाँ पर आकर्षित करना चाहती हूं और वताना चाहती हूं कि घरों की व्यवस्था किस प्रकार की होनी चाहिये, किन्तु अधिकांश घरों में किस ढंग से होती है। घरों की सुव्यवस्था की कुछ आवश्यक वातें लिख कर मैं यह नहीं कहती कि एक ओर से लेकर सभी स्त्रियां अयोग्य और अकर्मण्य होती हैं। ऐसा नहीं है। मैंने तो कितनी ही शिक्षित युवती स्त्रियों को अत्यन्त पटु और कार्य कुशल पाया है। मेरा अभिप्राय यह अवश्य है कि अधिक संख्या में स्त्री-समाज जैसा मिलना चाहिये, नहीं मिलता।

इतना ही नहीं, मैं तो यह भी जानती हूं कि स्त्रियां काम करती हैं, परन्तु काम करना नहीं जानतीं। उन को घर की व्यवस्था करनी पड़ती है किन्तु उनके द्वारा होने वाली व्यवस्था उत्तम कैसे मानी जा सकती है, इस वात को वे नहीं

जानतीं, जानने की चेष्टा भी नहीं करतीं। इस प्रकार की बातों में घर के पुरुषों के साथ उनकी स्त्रियों की नजाने कितनी बार मैंने लड़ाइयां देखी हैं। यदि पुरुषों ने किसी दूसरे घरकी स्त्रियोंके प्रबन्ध की प्रशंसा कर दी तो उनके घर की स्त्रियां लड़ मरेंगी और एक साधारण सी बात को लेकर दुखदायी कलह उत्पन्न हो जायगी, स्त्रियों की ओरसे इन बातों को मैने दुख के साथ देखा और सुना है।

जो स्त्रियां इस प्रकार की बातोंको सुनकर लड़ने लगती हैं, वे मूर्खता ही नहीं करतीं बल्कि मनुष्यके रूपमें अपने पशु होनेका परिचय देती हैं। उनकी अयोग्यता और असभ्यता उनको इस प्रकार करने के लिये उत्साहित करती है। शिक्षित समाज में ऐसा नहीं होता। किसी कार्यालय के मैनेजर के सामने यदि कोई किसी दूसरे कार्यालय के सुप्रबन्ध की प्रशंसा करे तो वह उसको सुनेगा, उसपर ध्यान देगा और उससे लाभ उठाने की कोशिश करेगा।

दूसरे की अच्छाई को जान कर उससे लाभ उठाना हमारा कर्तव्य है और यदि उसमे लाभ की कोई बात नहीं है तो उससे कोई अपनी हानि नहीं होती। स्त्रियों को चाहिये कि वे स्वयम् मनुष्य बनने की कोशिश करें। संसार की ओर आंख उठा कर देखें और शिक्षित एवम् सभ्य मनुष्यों से जितना सीख सकें। सीखने की कोशिश करें। ऐसा करके ही वे अपना स्थान ऊंचा बना सकतीं हैं—दूसरों के नेत्रों में अपने लिए सम्मान का भाव उत्पन्न कर सकती हैं। यदि वे ऐसा नहीं करतीं और आज वे जो कुछ हैं, हठधर्मी के साथ उसी प्रकार बनी रहना चाहती हैं तो उन्हें समझ लेना चाहिये कि जीवन का आदर और सम्मान उनके लिये नहीं बना

किसी के चाहने से, किसी को सम्मान नहीं मिला करता। मनुष्य की योग्यता और प्रतिभा स्वयम् अपने सम्मान की अधिकारिणी बन जाती है। उसकी कोई अवहेलना नहीं कर सकता।

मैं अब फिर घरो की अव्वस्था के प्रश्न पर आती हूं। मैं भलिभांति जानती हूं कि अधिकाश सख्यामे स्त्रियाँ अपनी त्रुटियों को समझने की शोशिश नहीं करतीं। दूसरों के साथ ईर्षा करनाही उनका स्वभाव बन गया है। यह स्वभाव अच्छा नहीं है। किसी भी अवस्थामे दूसरे की निन्दा करना अच्छा नहीं होता। हमारी बुद्धिमानी इसीमे है कि दूसरे की अच्छाइयों को हम सीख लें और उसकी बुराइयों पर हम दृष्टि न डालें।

कार्य-कुशलता और सुव्यवस्थ समझने से अनुभव होती है। एक मूर्ख स्त्री की एक छोटी-सी बात मुझे याद आती है। उसके आदमी ने खाना बनाने की उसकी शिकायत की। उस स्त्री के चिढ़ने में देर न लगी। आग-बबूला होकर उसने कहा—खाना अच्छा ऐसे ही नहीं बनता। पचीसों चीजें अच्छा खाना बनाने के लिए काम मे आती हैं।

उसके आदमी ने पूछा—अच्छा, तुम्हारे पास क्या नहीं है? जो कुछ न हो, उसको हम लादें।

मेरे सामने कुछ देर तक दोनों मे कहा सुनी होती रही। कई दिनों के बाद वह आदमी फिर मुझे मिला। उससे मैं ने पूछा तो उसने बताया—क्या बताऊं उसके सभी काम कुछ ऐसे होते हैं जिनको देखकर उलझन मालूम होती है। न तो उसके स्वयम ज्ञान है और न वह किसी से कुछ समझना चाहती है। उस दिन आपके सामने जो बातें हुई थीं

उनको सुनकर कोई तीसरा आदमी उसे नहीं समझ सकता। मैं अच्छी तरह से जानता हूं। अनेक प्रकार के मसाले अधिक मात्रा में डालने से ही, भोजन की चीजें अच्छी बन जाती हैं, ऐसा कुछ उसका विश्वास है।

इस प्रकार स्त्रियों के कुछ स्वभाव होते हैं। इन स्वभावों का कारण है। मैं तो सभी बातों का एक ही कारण मानती हूं। जिस प्रकार एक तालाब का पानी प्रवाहित न होनेके कारण गंदा हो जाता है और गदगी के कारण ही उसमें अनेक प्रकार के कीड़े पैदा हो जाते हैं। स्त्रियों का जीवन ठीक इसी प्रकार अकर्मण्य बना है। उनके जीवन के बंधनों को मैंने बार-बार कोसा है। मैं यह भी जानती हूं कि जब तक उन बंधनों को काट कर उन्हें स्वतन्त्रता में नहीं आने दिया जाता, तब तक वे अपनी अयोग्यता को दूर न कर सकेंगी। उनको बंदी जीवन से निकाल कर शुद्ध वायु में आने की आवश्यकता है। वहीं से उनको मानसिक स्वास्थ्य मिलना आरम्भ होगा।

जीवन की परिस्थितियों का बदलना पहला कार्य है। बाहरी सम्पर्क बहुत आवश्यक होता है। जिन बातों का प्रभाव सुनने से नहीं पडता। उनका प्रभाव आंखसे देखने और सम्पर्क में आने से पडा करता है। एक आदमी योरप के देशोंका भ्रमण करता है और बहुत-सी बातों में उसे प्रोत्साहन मिलता है। वही आदमी अपने देश में जब लौट कर आता है और भ्रमण की कहानियां लोगों से कहता है, तो उनका कुछ प्रभाव नहीं पड़ा करता। कुछ लोग उन्हें सुन लिया करते हैं और थोड़ी देर के मनोरञ्जन के बाद उसे समाप्त कर देते हैं। यही अवस्था स्त्रियों की भी है। पुरुष

यदि चाहें कि संसार की कहानियाँ सुना कर, वे अपने घरों की स्त्रियों को सुयोग्य और चतुर बना दें, ऐसा नहीं हो सकता। पुरुषों का यह झूठा विश्वास है। जब तक स्त्रियां स्वयम् जीवन के खुले वातावरण में नहीं आतीं, उस समय तक उनकी अवस्थाओं में कुछ भी परिवर्त्तन सम्भव नहीं।

एक बात मेरे सामने और भी है। किसी भी तरह से स्त्रियों को प्रोत्साहन मिले और वे स्वयम् अपने बंधनों की परवाह न करके बाहर होने की कोशिश करें तो अधिक अच्छा है। स्त्री-समाज को अपने विकास के लिए स्वयम् प्रयत्नशील होना पड़ेगा। आजके बन्दी जीवन में कुछ भी सम्भव नहीं है।

मेरे सामने घरों की व्यवस्था चल रही थी। इस व्यवस्था मे और भी बहुत सी बातें सम्मिलित हैं। घरके काम-काज की व्यवस्था, खाने-पीने की व्यवस्था, वस्तुओं के रखने की व्यवस्था, उनकी सफाई की व्यवस्था, बच्चों की व्यवस्था, नौकरों की व्यवस्था, और बाहरी स्त्री-पुरुषों के साथ व्यवहार व्यवस्था आदि-आदि न जाने कितनी बातें घरों की व्यवस्था के साथ सबन्ध रखती हैं। इन सभी बातो पर स्त्रियों को जितना ही जानने को मिलेगा, उतना ही उनका लाभ होगा। उनके ज्ञान के लिये दो ही मार्ग हो सकते हैं। पहला यह कि वे स्वयम् स्वतन्त्र रूप से दूसरों को देखें और अपने जीवन की आवश्यकता का अनुभव करें। दूसरे यह कि अपने जीवन के अभावों को वे अध्ययन के द्वारा जानें। दूसरा मार्ग दोनो अवस्थाओं में अनिवार्य रूप से आवश्यक है। इसकी कमी स्त्रियों को कभी आगे बढ़ने न देगी। और इसका ज्ञान आगे बढ़ने मे सदा उनका सहायक होगा।

हमारी आवश्यकतायें बहुत हैं। जीवन का अनुभव और ज्ञान हमारा बहुत परिमित है। कहीं कहीं पर तो हमारे जीवन का अभाव, बुरे रूपमें, हमारी विपदाओं का कारण बन जाता है। उस समय स्त्रियां भाग्य को कोसने के सिवा, और कुछ नहीं जानतीं। कितना झूठा विश्वास है— कितना बडा जीवन का भ्रम है। भाग्य को लेकर स्त्रियों को कितने घने अन्धकार में रहना पड़ता है। इस अंधकार को मिटाने में ही स्त्रियों का कल्याण है। और जब तक स्त्री-समाज स्वयम् सुयोग्य नहीं बनता, मानव समाज का कभी भी कल्याण नहीं हो सकता। स्त्रियों और पुरुषों को आंखें खोलकर ससार की ओर देखने की आवश्यकता है।

स्वास्थ्य और संतान

जीवन में शरीर का स्वास्थ्य सब से अधिक महत्व रखता है। जिसका शरीर नीरोग्य होता है, वास्तव में वही सुखी होता है। आरोग्य न रहने पर संसार के सब सुख फीके मालूम होते हैं।

जिन्हें ईश्वर ने समझ दी है और जिन्हों ने जीवन का अनुभव किया है वे सब एक स्वर में इस बात को स्वीकार करेंगे कि संसार की कोई भी प्रभुता उतना बड़ा महत्व नहीं रखती जितना अधिक महत्व शरीर के आरोग्यको मिलता है। एक निधन मनुष्य नीरोग रहकर सुखी होता है किन्तु राज्य का भोग करनेवाला राजा, स्वास्थ्य खोकर जीवन भर दुखों का ही अनुभव करता है संक्षेप में इतना ही कहना य प्राप्त होगा कि जीवन की समस्त मान मर्यादायें पीछे हैं, सब से पहले हमें स्वास्थ्य की आवश्कता होती है।

अब प्रश्न यह है कि जो स्वास्थ्य इतना अधिक महत्व पूर्ण और आवश्यक है वह हमें कैसे प्राप्त होता है। स्वास्थ्य की साधारण परिभाषा यह है कि शरीर के प्रत्येक अंगका इस योग्य होना जिससे वे सभी आवश्यकतानुसार अपना-अपना कार्य करते रहें, स्वास्थ्य कहलाता है। शरीर में छोटे और बड़े मिलकर बहुत से अंग हैं। उनके अलग अलग कार्य हैं। हाथ पैर नाक-कान आंखें और मुंह [आदि हमारे शरीर के बाहरी अंग हैं। शरीर के भीतर भी अनेक प्रकार के अंग प्रत्यंग हैं! उनके भी अलग अलग कार्य हैं। इन अंगों में एक विशेष बात यह है कि वे अलग अलग कार्यों का सम्पादन करते हुए भी एक दूसरे से सम्बन्ध रखते हैं। यदि कोई एक अंग निर्बल हो जाता है तो उसका प्रभाव दूसरे अंगों पर भी पड़ता है और जब दूसरे अंग प्रभावित होकर अपनी शक्ति खोने लगते हैं तो वे दूसरे अंगों पर अपना प्रभाव डालते हैं। होता यह है कि शरीर के एक अंग के बिगड़ने से दूसरे अंग भी निर्बल और अस्वस्थ बन जाते हैं।

हमारा शरीर एक मशीन की भांति है। जिसको मशीन देखने का अवसर मिला है वे जानते हैं कि उसके भीतर और बाहर सैकड़ों पुरजे होते हैं। जो मशीन जितनी ही बड़ी होती है उसमे पुरजे भी अधिक होते हैं। अनेक प्रकार के पुरजों के बिना, छोटी हो या बड़ी, कोइ भी मशीन नहीं बना करती। इन पुरजों का भी अलग अलग कार्य होता है। किन्तु एक दूसरे के साथ उनका जो संबंध होता है, वह अत्यन्त विस्मय कारी होता है, बड़ी से बड़ी मशीन जिसमे सैकड़ों और हजारों पुरजे काम करते हैं, उस समय बेकार हो जाती है जब उसका

एक भी पुरजा खराब होजाता है। अथवा किसी कारण से काम करना बन्द कर देता है। सुयोग्य मशीनमैन उस मशीन से तुरन्त काम लेना बंद कर देता है। और जब तक उस बिगड़े हुए पुरजों को ठीक नहीं कर लेता तब तक वह उससे काम नहीं लेता।

शरीर की रचना से जो विद्वान भली भांति परिचित हैं। वे जानते हैं कि हमारे शरीर में और एक मशीन की बनावट में कोई अंतर नहीं है। कोई भी मशीन अधिक से अधिक दिनों तक काम कर सकती है यदि उससे काम लेने वाला सदा सावधान रहता है मशीन की भी एक प्रकृति होती है। मशीन मैंन उस प्रकृति का ज्ञान रखता है। जो उसका ठीक अनुभवी नहीं होता वह उसे थोड़े ही दिनों में बिगाड़ देता है और यदि उसके बाद भी मशीन किसी योग्य कार्यकर्त्ता के हाथ में नहीं जाती तो वह सदा के लिए बेकार हो जाती है।

हमारे शरीर की भी यही दशा है। हम सभी शरीर से काम लेना नहीं जानतीं। शरीर-रचना का हमको ठीक-ठीक ज्ञान भी नहीं है और न यही हमको मालूम है कि हमारे शरीरमें छोटे और बड़े कितने अंग हैं, उनके क्या-क्या कार्य हैं, वे कब बिगड़ते हैं, बिगड़ने पर कैसे ठीक होते हैं, आदि-आदि हमें सभी बातों का ज्ञान नहीं है। इसी लिए जन्म से लेकर, मृत्यु तक हमको किसी वैद्य या डाक्टर की जरूरत पड़ती है और उसीके सहारे पर हमारे शरीर की यह मशीन अपना काम करती है। यदि हमको अपने शरीर का ठीक-ठीक ज्ञान हो तो कभी भी हमें डाक्टर और वैद्य की जरूरत न पड़ेगी।

औषधि करने वाले डाक्टर और वैद्यों की कहानियाँ

बहुत विचित्र है। इसमें संदेह नहीं कि वे शरीर को नीरोग करने की शिक्षा प्राप्त करते हैं परन्तु उनका कार्य व्यवसायिक हो जानेके कारण दूसरों को उनसे अधिक लाभ नहीं मिलता। यद्यपि डाक्टरों और वैद्यों को जो शिक्षा मिलती है। उसमें बहुत-कुछ मेरा मतभेद है। फिर भी मैं जानती हूं कि वे रोगियों की सहायता कर सकते हैं और कुछ सीमा तक वे समाज का उपकार कर सकते हैं। परन्तु उनकी व्यवसायिक मनोवृत्तिने उनको कुछ और ही बना दिया है। वे केवल व्यवसायिक हैं। मेरा ऐसा विश्वास है कि लाखों और करोड़ों रोगियों में से कोई एक भी ऐसा न मिलेगा, जिसने सैकड़ों रुपये खर्च करने के बाद भी किसी डाक्टर या वैद्य से यह समझ पाया हो कि आखिर वह बीमार क्यों हो जाता है और किस प्रकार वह भविष्य में अपने शरीर को आरोग्य रख सकता है! होता यह है कि डाक्टर और वैद्य रोगी मनुष्यों की दवा करते रहते हैं और रोगी स्वस्थ होनेके बाद फिर बीमार होते रहते हैं। यह अवस्था अच्छी नहीं है।

स्वास्थ्य का सुख मनुष्य उसी अवस्थामें उठा सकता है, जब वह स्वयम् अपने शरीर के बनने और बिगड़ने का ज्ञान रखता है। साथ ही आवश्यकता पड़ने पर उत्पन्न होने वाली त्रुटियों को वह स्वयम् ठीक कर लेता है। औषधियों के सहारे से शरीर कभी आरोग्य नहीं रह सकता। स्वास्थ्य के लिये मनुष्य को शरीर का पूरा ज्ञान प्राप्त करना ही आवश्यक है।

शरीर के आरोग्य का अधिक विवेचन मेरा यहां उद्देश्य नहीं है। इन पृष्ठों में मुझे केवल इतना ही बताना है:-

कि स्त्रियों के स्वास्थ्य पर उनकी संतान का क्या प्रभाव पड़ता है। समाजमें संतानवती स्त्रियों का जीवन किस प्रकार चलता है और उसके द्वारा वे किस प्रकार अपने जीवन का सुख उठा पाती हैं। मैं, यहा पर केवल इसी की मीमाँसा करना चाहती हूं।

स्त्रियों की अयोग्यता और अनभिज्ञता उनके स्वास्थ्य के विगाड़ने में भी काम करती है। स्वस्थ रहने की उनको शिक्षा नहीं मिलती। छोटे-छोटे रोगों के पैदा होने के कारण क्या होते हैं, इसको भी वे नहीं जानतीं। फल यह होता मै कि वे सहज ही रोगों की शिकार होती हैं! समाज की अवस्था भी विचित्र है; साधारण परिवारों में स्त्रियों के रोगों की चिकित्सा भी जल्दी नहीं होती। छोटे-मोटे रोग तो उनके साथ बने ही रहते है। मैने ऊपर बताया है कि थोड़ी सी खराबी जब उत्पन्न हो जाती है तो यही आगे चल कर भयानक बीमारियों की कारण वन जाती है। यदि आरम्भिक अवस्था में उसका संशोधन नही हो जाता तो शरीर का स्वास्थ्य खराब होने लगता है।

अपने अनुभव के आधार पर मैं जानती हूं कि लड़किया उस समय तक नीरोग रहती हैं, जब तक वे संतानवती नही होतीं। दुर्भाग्य की बात तो यह है कि हमारे देशमें उनके विवाह छोटी अवस्था में ही हो जाते हैं और विवाह के बाद संतान होने में देर नहीं लगती। होता यह है कि उनका शरीर बहुत थोड़े दिनों तक आरोग्य रह पाता है। संतान उत्पन्न हो जानेके बाद मैंने आरोग्य युवतियों को बहुत कम देखा है। इसका कारण यह है कि वे आरोग्य रहना नहीं जानतीं। जो स्त्रियां रुपये-पैसेसे सम्पन्न होती हैं- वे प्रायः

चिकित्सा किया करतीं हैं और अपने रुपये पैसे से वैद्यों और डाक्टरों के घर भरा करती हैं। उनको एक-न-एक शिकायत बनी ही रहती है और औषधियों के द्वारा अपने जीवन के भार को आगे ढकेलना पड़ता है। यह कहानी जीवन भर उनके साथ चलती है।

निर्धन परिवारों की अवस्था और भी खराब है। जब तक वे स्वास्थ्य नहीं खोतीं बड़े मजे मे रहती है। खाती-पीती हैं और जीवन का सुख उठाती हैं। परन्तु जब उनके शरीरों में रोगों का आरंभ होता है तो उन्हें एक प्रकार का नारी रोग जीवन बिताना पड़ता है। रोगी अवस्था में वे अपने भाग्य को कोसा करती है। वे केवल इतना ही जानती हैं कि ईश्वर ने उन्हें शरीर का सुख नहीं दिया।

छोटी अवस्था मे संतान का उत्पन्न होना अच्छा नहीं होता इससे उनका शरीर निर्बल होता है। रोग उत्पन्न होते हैं और वे उन्हें निरन्तर रोगी बनाये रखते है। एक बात और भी बड़ी विपद की है। अधिक सख्या मे सतान का पैदा होनां स्त्री के शरीर को रोगी बनाता है। उनकी शारीरिक शक्तियां बराबर क्षीण होती जाती है।

जिन देशों मे लड़कियों के विवाह छोटी अवस्था मे नहीं होते वहां की स्त्रियाँ अधिक स्वस्थ पायी जाती है। इसके संबन्ध मे हमारा समाज अपराधी है। विवाह के बाद थोड़े ही दिनों के भीतर संतान का पैदा होना समाज की निर्बलता है। इससे स्त्रियां शरीर की शक्ति को खोती हैं और उसके बाद यदि लगातार जल्दी जल्दी बच्चे उत्पन्न होते है तो स्त्रियां तो सदा सर्वदा के लिये रोगी बन ही जाती है, एक बुरा परिणाम यह होता है. कि उनके द्वारा उत्पन्न होने वाली संतान

नीरोग नहीं रहा करती। जिस देश में ऐसा होता है वहां का समाज शक्तिशाली न बनकर रोगी और निर्बल रहा करता है। यह अवस्था बड़ी घातक होती है।

देश की गरीबी के कारण, सतान उत्पन्न होने पर स्त्रियों को अच्छा भोजन नहीं मिलता। स्त्रियों के शरीर की निर्बलता का यह भी एक बड़ा कारण है। संतान उत्पन्न होने पर जो दुर्बलता उत्पन्न होती है, और शरीर की शक्ति क्षीण होती है उसके पूरा करने के लिए कुछ अधिक दिनों तक स्त्रियों को ऐसा भोजन मिलना चाहिए जिससे उनके शरीर में उत्पन्न होने वाली दुर्बलता मिट जाय और उनका शरीर फिर शक्ति शाली बन जाय। इससे दो लाभ होते हैं। एक तो यह कि स्त्रियों की निर्बलता दूर हो जाती है और दूसरा यह कि उनकी संतान निर्बल नहीं होती।

संतानोत्पत्ति के बाद स्त्रियों के जीवन का अपना सुख नष्ट हो जाता है। बच्चों का सुख और दुख ही उनके जीवन का सुख और दुख बन जाता है। जिन दिनों में छोटा बच्चा मां का दूध पीता है, उन दिनों मे माता के शरीर का दुर्बल हो जाना स्वाभाविक है। इस लिए यह बहुत आवश्यक होता है कि उन दिनों मे संतानवती स्त्रियों को अधिक से अधिक पुष्टिकारक खाने के लिए भोजन दिया जाय। भोजन के जिन पदार्थों से शुद्ध रक्त की वृद्धि होती है और शरीर मे शक्ति उत्पन्न होती है, उन पदार्थों का मिलना इस प्रकार की स्त्रियों के लिए अत्यन्त आवश्यक होता है। दूध घृत और फलाहार रक्त और शक्ति की वृद्धि में बहुत अच्छा काम करता है, इसके साथ साथ इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि खाने के पदार्थ वही होने चाहिए जो सरलता पूर्वक पच सकें। जो

वस्तुएं अपाचक होती है उनसे माताओं को कब्ज की शिकायत हो जाती है और अपच होने के कारण वे तो बीमार होती ही है! उनके छोटे-छोटे बच्चे भी बीमार बने रहते हैं छोटे बच्चों की बीमारियों का बहुत कुछ कारण उनकी माताओं के शरीर का रोग होता है! इसीलिए माता के स्वास्थ्य का अधिक से अधिक ध्यान रखने की आवश्यकता होती है।

आवश्यक शिक्षा न मिलने के कारण स्त्रियों को अपने शरीर का भी कुछ ज्ञान नहीं होता! इसको मैंने ऊपर बताया है, अशिक्षा के कारण ही संतानोत्पत्ति की अधिक लालसा स्त्रियों मे होती है! मैंने तो देखा है कि विवाह के दो। तीन वर्ष बीत जाने पर जिन विवाहित लड़कियों के संतान नहीं होती वे एक बहुत बड़े अभाव को अनुभव करती हैं और संतान के लिए अनेक प्रकार के उपायों की उनको शरण लेनी पड़ती है! यह सभी बातें अशिक्षा और मूर्खता के कारण होती है! इस प्रकार की स्त्रियों ने स्वास्थ्य और उनके द्वारा मिलने वाले सुख को ही भुला दिया है।

प्राय. यह देखा गया है कि लडकिया विवाह हो जाने के बाद उस समय तक अपने स्वास्थ्य की परवाह नहीं करतीं जब तक वे लगातार रोगों का दुख नहीं उठा लेतीं! शरीर जब एक बार रोगी हो जाता है, तो फिर उसको नीरोग बनाना और फिर स्वास्थ्य प्राप्त करना बहुत कठिन होता है! दुर्भाग्य से जिन स्त्रियो को।रोगो का सामना करना पड़ा है और जिन्होंने रोग निवारण के लिए पानी की भाँति धन को बहा कर स्वास्थ्य पाने के लिए निरंतर प्रयत्न किया है वही इस बात को जानतीं है।

स्त्रियों को इस बात का पूर्ण रूप से ज्ञान होना आवश्यक है

कि जीवन का सब से बड़ा सुख हमारा स्वास्थ्य है स्वास्थ्य नष्ट करके कोई मनुष्य कभी सुखी नहीं बन सकता! इसके साथ साथ उन्हें समझना चाहिए कि स्वास्थ्य कैसे बिगड़ जाता है और मनुष्य क्यों रोगी हो जाता है! जिस ईश्वर ने हमको जन्म दिया है। उसने हमको स्वस्थ बनाकर भेजा है ईश्वर कभी नहीं चाहता कि हम रोगी रहें और शरीर का दुख उठावें। उसने हमे स्वस्थ बनाया है और उसके बाद भी हमको आरोग्य देने वाली सभी सुविधाओं को पैदा किया है! इस अवस्था में स्वस्थ रहना और जीवन का सुख उठाना हमारी बुद्धि पर निर्भर है।

स्वास्थ्य के बिगड़ जाने पर

स्वास्थ्य और शरीर का संबंध जीवन भरका है। जो संबंध हमारा इतना निकटवर्ती है उसका अधिक से अधिक हमें ज्ञान होना चाहिये परन्तु ऐसा नहीं होता। स्वस्थ मनुष्यों की अपेक्षा अस्वस्थ स्त्री पुरुषों की संख्या अधिक मिलती है। यह आश्चर्य की बात है। प्रकृति ने हमें स्वास्थ्य दिया है और जीवन भर के लिए दिया है फिर उसके नष्ट हो जाने का क्या कारण है और एक बार उसके बिगड जाने पर क्या परिणाम होता है यह सर्वथा विचारणीय है।

स्वास्थ्य की कोई अवस्था नहीं हुआ करती। और मैंने लिखा है, शरीर को आजीवन स्वस्थ रहना चाहिए। समय समय पर ऐसी परिस्थितियां आती है जिसमें शरीर का स्वास्थ्य बिगड़ने लगता है। परन्तु जिस प्रकृति ने हमारे शरीर को स्वास्थ्य प्रदान किया है उसने बिगड़ते हुए आरोग्य को सुधारने के लिए भी व्यवस्था करदी है। यदि मनुष्य जान बूझकर

अपने स्वास्थ्य की हत्या नहीं करता तो उसे सदा स्वस्थ रहना ही चाहिए। जब कभी वह कारण पाकर बिगड़ता है। तो प्रकृति के नियमानुसार वह अपने आप फिर बन जाते हैं किन्तु प्रकृति का कुछ ऐसा नियम है कि रोग के निवारण होने के बाद शरीर को फिर स्वस्थ होने मे देर नहीं लगती। प्रायः यह भी देखा जाता है कि रोगों से छुटकारा पाने के बाद शरीर को एक अद्भुत शक्ति और स्फूर्ति मिली है। ऐसा होना स्वाभाविक है। रोग शरीर के भीतर से उन खराबियों के दूर करने का काम करते हैं जो शरीर को नष्ट भ्रष्ट किया करती है। इसलिए उनके निकल जाने के बाद शरीर फिर पूर्ण रूप से शक्तिशाली और आरोग्य बनने लगता है।

एक बात अत्यन्त भ्रमपूर्ण है। लोगों को स्वास्थ्य का यथावत ज्ञान नही होता। परिस्थियों के बाद स्त्रिया तो उससे बहुत अधिक अपरिचित होती हैं उसके बनने और बिगड़ने का उन्हें साधारण ज्ञान भी नहीं होता। इतनी ही बात भ्रम और आश्चर्य की नहीं हैं। बहुत बडा भ्रम उनके जीवन का यह है कि वे अपने आप को किसी भी अवस्था में वृद्धी और अस्वस्थ समझ लेती है। तीस वर्ष की अवस्थाके भीतर भीतर तो प्राय सभी अपना स्वास्थ्य खो बैठती हैं और अपनी इसी छोटी अवस्था मे वे अपने बुढापे का अनुभव करने लगती है। और भी अश्चर्य है, वह यह कि घर के पुरुष भी उनके बुढापे को स्वीकार करते हैं।

अपनी इस छोटी अवस्था में स्वास्थ्य को खोकर वृद्धी होजाने पर स्त्रियों के हृदय मे कितनी बड़ी गलानि रहा करती है इसे मैं जानती हू। परन्तु जानकारी न होने के कारण स्त्रियो को सभी कुछ सहन करना पड़ता है। मैं बहुत स्पष्ट बताना

चाहती हूं कि बुढ़ापा और अस्वास्थ्य मनुष्य के जीवन में कभी नहीं आता। यदि वह ,इस प्रकार की बातों का ज्ञान रखता है और आवश्यक नियमों का पालन करता है ।

पच्चीस और तीस वर्ष की अवस्था में स्त्रियों का बूढ़ा हो जाना उनके लिए एक अपमानकी बात है,इसका दुष्परिणाम समाज और देश पर पडता है। दोनों ही निर्बल हो जाते हैं स्त्रियों के अस्वस्थ रहने पर पुरुषों का हंसना उनकी मूर्खता का परिचय है! ज्ञान न होने के कारण मनुष्य पशु का सा व्यवहार करता है। रुपये और पैसे का सुभीता होने पर भी स्त्रियों के आरोग्य बनाने का प्रयत्न नहीं किया जाता! वे स्त्रियों के स्वास्थ्य की अपेक्षा धनको सुरक्षित रखना अधिक आवश्यक जानते हैं। इसका फल लोगों पर, समाज पर और देश पर बहुत भयानक पडता है।

अशिक्षा और मूर्खताका जो परिणाम समाज के अनेक अंगों पर पड़ा है उसे मैं एक बड़ी सीमा तक जानता हूं। हमारे समाज मे उन परिवारों की कमी नहीं है जहां स्त्रियों को अच्छी भोजन नहीं दिया जाता। दूध घी और फल स्त्रियों के लिए अनावश्यक समझे जाते हैं! उन परिवारों मे लड़कियां भी इस प्रकार के पदार्थों से वंचित रहती हैं। केवल लड़कों और पुरुषों के लिए ही इन वस्तुओं [की आवश्यकता समझी जाती है। मै तो उस समय आश्चय विभोर हो जाती हूं जब देखती हूं कि इस प्रकार की व्यवस्था बूढी स्त्रियों के द्वारा ही होती है कितने अश्चर्य की बात है इस मूर्खता का फल आज समाज को झेलना पड़ रहा है। स्त्री और पुरुष—दोनों के स्वास्थ्य की आवश्यकता है। इतना होने पर भी स्त्रियों के स्वास्थ्य और शक्ति से ही समाज सजीव एवम् शक्ति पूर्ण बनता है!

इन सम्पन्न परिवारों की सैकड़ों और हजारों घटनाओं में एक दो का यहां उल्लेख करना अनावश्यक न होगा। मैं उस घर की एक घटना संक्षेप में लिखना चाहती हूं, जहाँ रुपये पैसे का अभाव न था और बड़ी मात्रा में घी और दूध घर में होता था। लड़कों से लेकर स्याने पुरुषों तक—तीन चार की ही संख्या थी। दो युवती स्त्रियां थी और उनकी बूढ़ी सास थी। वही घर की मालकिन थी। मैंने देखा कि घर में होने वाला दूध और घी केवल पुरुष पाते हैं। स्त्रियां मट्ठे की ही अधिकारिणी हैं, यह जानकर मैंने उस घर की एक युवती बहू से पूछा—

आप दूध और घी क्यों नहीं खाती हैं।

उसने कहा—दूध और घी आदमियों के लिये होता है।

मैंने पूछा—स्त्रियां आदमी नहीं होतीं?

उसने कहा—न

आदमी से उसका मतलब था, पुरुष से यह बात मैंने दूसरे ढंग से उससे पूछना चाहा और प्रश्न किया—
स्त्रियाँ दूध और घी क्यों नहीं खातीं?

उसने हँस कर कहा—दूध और घी खाकर हम लोगों को क्या पहलवान बनना है?

उसकी बातों को सुनकर मुझे समाज की अवस्था पर आश्चर्य और असंतोष हो रहा था। मैंने कहा—जो पहलवान बना चाहते हैं वही दूध और घी खाते हैं?

जिससे मैं बातें कर रही थी उसकी अवस्था बाईस-तेईस वर्ष से अधिक न थी देखने सुनने में सो बड़ी अच्छी मालूम होती थी। मेरी बातें उसे कुछ नयी सी जान पड़ती थीं।

मेरी बात का जवाब देते हुए उसने कहा और नहीं तो क्या।

कुछ देर बातें करने के बाद मैंने यह समझा कि दूध और घी के लिए घर की जो व्यवस्था है, उसमें इन स्त्रियों को भी कुछ विरोध नहीं है। ये स्त्रियां जब स्वयम् बूढ़ी होंगी और घरकी मालकिन बनेंगी तो ये भी इसी प्रकार की व्यवस्था रखेंगी। इसलिये कि इन लोगों ने अपने जीवन में इन्हीं सब बातों को देखा और सुना है। मैंने फिर उससे अधिक बातें न कीं।

मैं चुप तो हो रही परन्तु हृदय में एक अशांति थी। उसे मिटाने के लिए इस पर भी बूढ़ी मालकिन से मैंने बातें कीं और उस समय बाते कीं जब उनकी दोनों बहुएं भी मौजूद थीं और दो तीन बाहरी स्त्रियां भी थीं।

बातें करते हुए मैंने उसको संबोधन करते हुए कहा—कुछ घरों में खाने पीने के संबंध में स्त्री और पुरुष का जो भेद रखा जाता है यह बड़ी बुरी बात है।

घरकी मालकिन मुझसे प्रेम करती थी, उसका व्यवहार भी अच्छा था। मेरी बातों को सुनकर बिना किसी अप्रसन्नता के उसने कहा – खाने पीने में भेद क्यों न रखा जाय, स्त्रियां क्या कहीं कमाने जाती हैं। पुरुषों को तो कमा कर लाना पड़ता है।

मैंने हंसते हुए कहा—तो पुरुष इसीलिये इन चीजों के अधिकारी हैं कि वे कमाकर लाते हैं। स्त्रियां केवल इस लिए उनको नहीं पातीं कि वे कमाने नहीं जातीं।

उसने कहा—यह तो बात ही है। हम लोगों के यहां स्त्रियाँ दूध नहीं पिया करतीं किसी समय पर उनको दे भी

दिया जाता है लेकिन रोजका नियम नहीं है।

उसकी बातों को सुनकर मैंने कुछ विस्तार के साथ कहा और इसका जो फल होता है, मैंने सभी को समझाया, बैठी हुई स्त्रियां चुपचाप सुनतीं रहीं। कुछ देर तक मेरी बातों को सुनने के बाद घर की मालकिन तो कुछ न बोली किन्तु एक बाहरी स्त्री ने जो कुछ कहा बात और भी बेढंग की मालूम हुई! यह बात सभ्य शब्दों में इतनी ही कही जा सकती है कि इस प्रकार के परिवारों मे स्त्रियों को दूध घी जैसी चीजें इस लिए नहीं दी जातीं जिससे उनमे कहीं अचरित्रता का भाव न पैदा हो जाय!

उसका यह आशय जानकर मैं चुप होरही मेरे हृदय में वेदना भी थी और दुख भी। परन्तु मैंने कुछ कहना उचित न समझा। मन ही-मन मैं अनेक प्रकारकी बातों को सोचती। स्त्री समाज की यह दुर्वलता कितनी भयानक है, यह बात बार बार मेरे सामने आने लगी। और मैं उससे घृणा करने लगी।

इस प्रकार के झूठे विश्वासों को दूर करने का रास्ता शिक्षा के सिवा और कुछ नहीं हो सकता। आवश्यक शिक्षा और उन्नत साहित्य के द्वारा ही इस प्रकार की मूर्खता की बातें दूर हो सकतीं है। आवश्यकता है कि स्त्री और पुरुष— दोनों को, इसके संबंध मे उचित ज्ञान देने के लिए अच्छे साहित्य की वृद्धि की जाय। उसी से झूठे विश्वासों का अंधकार दूर हो सकता है!

अब मैं फिर अपने मूल विषय पर आती हूं। समाज मे ऐसे भी परिवार है जिनमे स्त्रियों का स्थान इस प्रकार निर्वल नहीं समझा जाता। मैं अच्छी तरह जानती हूं कि शिक्षित

परिवारों में स्त्रियों के जीवन का पूर्ण रूप से आदर होता है। यही कारण है कि उन परिवारों की स्त्रियों का स्वास्थ्य किसी सीमातक संतोष-जनक पाया जाता है।

स्वास्थ्य के बिगड़ने के कई कारण होते हैं। कुछ मोटी-- बातें मैंने पिछले पन्नों मे दिखायी हैं। यहां पर भी संक्षेप में मै उनका उल्लेख करना चाहती हूं। पढ़ी-लिखी स्त्रियों को उन-पर ध्यान देना चाहिए।

खाने-पीने की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए। खाद्य पदार्थों का ही हमारे शरीर और मन पर प्रभाव पड़ता है। जो भोजन पुष्टकारक नहीं होता, उससे शरीर निर्वल हो जाता है और निर्वलता में ही अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। रोगी म नुष्य के मानसिक विचार भी रोगी वन जाते हैं।

स्त्रियों के रहने के स्थान ऐसे होने चाहिये जिनमें शुद्ध वायु और स्वच्छ प्रकाश वरावर मिलता हो। अच्छी वायु और प्रकाश के न मिलने पर स्वास्थ्य का विगड़ जाना स्वाभाविक होता है। इसलिए घरों की व्यवस्था ठीक-ठीक होनी चाहिए जिससे इस प्रकार के अभाव स्वास्थ्य को धक्का न पहुंचा सकें।

कोई भी रोग शरीर को निर्वल वनाता है। इसलिए रोगों के प्रति सदा सावधान रहने की ज़रूरत है। सावधानी से काम लेने पर भी, रोगों के आक्रमण हो जाते हैं। उस समय आंरभ से ही उनके दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए। जिन परिवारों में स्त्रियों के रोगों पर ध्यान नहीं दिया जाता, उनमें स्त्रियों को स्वयम् चेष्टा करनी चाहिए! और जैसे भी संभव हो सके, रोगों से छुटकारा पाने की कोशिश करनी चाहिए! यदि स्त्रियाँ ऐसा न करेंगी तो उसका बुरा फल उन्हें स्वयम् भोगना पड़ेगा और उस समय उनको स्वयम पछताना पड़ेगा!

स्वस्थ और आरोग्य रहने के लिए विश्राम मिलना भी बहुत जरूरी है। जिसको अधिक परिश्रम करना पड़ता है और विश्राम नहीं मिलता, उसका स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है! प्रकृति ने दिन और रात की इसीलिए व्यवस्था की है! मनुष्य दिन में कार्य करता है और रात मे विश्राम करता है। रात को बनाकर प्रकृति ने विश्राम की आवश्यकता, हमारे सामने रखी है। जो लोग रात मे अधिक देर तक काम करते रहते हैं, उनको विश्राम पूरा नहीं मिलता। इसीलिए इस प्रकार के व्यक्ति दुबल शरीर रहा करते हैं।

शरीर के आरोग्य के लिए निन्द्रा बहुत आवश्यक है। जो लोग आवश्यकतानुसार सो नहीं पाते, उनका शरीर कभी अच्छा नहीं रह सकता इसलिए हम सब को भली प्रकार सोने की भी जरूरत है। कुछ ऐसे लोग-भी होते है जो रात के सिवा दिन मे भी पड़े पड़े ऊंघा करते हैं। वह तो एक प्रकार का आलस्य होता है और आलस भी शरीर का एक रोग है, जिस प्रकार कोई भी रोग शरीर के स्वास्थ्य को बिगाड़ता है, आलस भी शरीर को हानि ही पहुँचाता है। रात-दिन प रहने वाले स्त्री-पुरुष कभी स्वस्थ नहीं रहा करते। इसलिए आलस्य को तो अपना शत्रु ही समझना चाहिए। साथ ही यह ी समझ लेना चाहिए कि निन्द्रा के द्वारा ही पूर्णरूप से विश्राम मिलता है और निन्द्रा का अभाव शरीर को रोगी बना देता है।

स्वास्थ्य और आरोग्य के लिए सदा प्रसन्न रहना बहुत आवश्यक है। हमेशा चिन्ताकुल रहना शरीर और मन के स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं होता। जिन लोगों मे चिंता करने की आदत पड़ गयी हो, उनको चाहिए कि जिस प्रकार भी हो सके, उस स्वभाव को बदल दें। इसके बदलने का सब से अच्छा

साधन प्रसन्न रहना है ! अपनी प्रत्येक अवस्था में प्रसन्न चित्त रहना शरीर को स्वास्थ्य देता है !

इस प्रकार अनेक बातें जो आरोग्य नष्ट करती हैं, उनसे सदा सावधान रहना चाहिए, यदि सावधानी से काम न लिया जायगा तो शरीर के रोगी और निर्बल होने में देर न लगेगी और एक बार निर्बल एवम् रोगी हो जाने पर बड़ी कठीनाई का सामना करना पड़ता है। अब प्रश्न यह है कि यदि किसी कारण से शरीर निर्बल और रोगी हो गया है तो फिर उसका उपाय क्या है ? यह प्रश्न एक बड़ा है किंतु उसका एक बहुत सीधा मार्ग यह है कि पढ़ीलिखी स्त्रियों को ऐसे लेख बराबर पढ़ने चाहिए, जिनसे उनको उन सभी बातों का ज्ञान स्वयम् होगा जो स्वास्थ्य के पैदा करने में सहायक होती हैं। किसी वैद्य या डाक्टर की औषधियों के जाल में पड़ने की अपेक्षा बहुत जरूरी यह है कि स्वास्थ्य और आरोग्य के संबंध में उपयोगी पुस्तकों का अध्ययन किया जाय।

इसके साथ-साथ जिन कारणों से स्वास्थ्य बिगड़ा है, उसको दूर किया जाय। थोडी देर के लिए यदि हम मान लें कि किसी रोगी आदमी के पास अधिक रहने और रात-रात भर लगातार जागने से किसी स्त्री की हालत खराब होती है, तो उसे चाहिए कि रोगी के पास रहने के लिए किसी दूसरे आदमी की व्यवस्था करे और वह स्वयम पूर्ण रूप से विश्राम ले।

इसी प्रकार स्वास्थ्य के बिगडने का जो कारण हो, उसे जितनी जल्दी दूर किया जा सके, उतना ही अच्छा होगा। स्वास्थ्य के सम्हालने के लिए सब से पहला साधन यह है। आवश्यकता पड़ने पर इसके सम्बन्ध में योग्य पुस्तकों का देखना और उनसे लाभ उठाना बहुत जरूरी है।

संतानहीन स्त्रियाँ

संतानहीनता स्त्री-जीवन की एक समस्या है। संतान उत्पन्न कर के प्रत्येक स्त्री अपने आप को सौभाग्यवती समझती है। और जिन स्त्रियों के संतान नहीं होती, वे अपनी समझ मे तो सौभाग्यहीन होती ही हैं, दूसरों की दृष्टि मे भी उनका महत्व गिर जाता है।

संतानहीनता का यह प्रभाव बहुत-कुछ विवादग्रस्त है। संतान न होने के कारण स्त्री सौभाग्यहीन हो जाती है और संतानवती होने पर वह सौभाग्यवती होती है, आँखें मूँदकर इसका समर्थन नहीं किया जा सकता। यह दूसरी बात है कि प्रत्येक स्त्री और पुरुष के हृदय मे सन्तान के प्रति लालसा होती है। यह लालसा स्वाभाविक है। परन्तु संतान होने पर ही कोई भाग्यवान बन सकता है और उसके अभाव मे सौभाग्यहीनता उत्पन्न हो जाती है, इसका कुछ अर्थ नहीं होता। यद्यपि साधारण समाज मे यही भावना है। किंतु यह भावना सर्वदा सत्य नहीं है।

संतान न होने पर पुरुष के हृदय मे भी वेदना होती है। परन्तु उसकी वेदना स्त्री-जीवन के अभाव की भाँति एक समस्या नहीं बनती। समाज की अवस्था को देखकर यह स्वीकार करना पड़ता है कि स्त्रियों के जीवन मे संतान, उनकी एक प्रमुख समस्या है। यदि अधिक छानबीन की जाय तो इस प्रकार की समस्या अशिक्षित समाज मे ही अधिक स्थान पाती है।

बहुत-कुछ सोचने के बाद भी संतानहीनता को मैं सौभाग्यहीनता के रूप मे नहीं समझती। संतानोत्पत्ति प्रकृति का

एक नियम है। इसीलिए उसके प्रति लालसा स्वाभाविक है। किंतु केवल संतान ही स्त्री-जीवन का सौभाग्य और दुर्भाग्य है यह बात किसी प्रकार समझ में नहीं आती। यहाँ पर मैं अपने विरोध की अधिक विवेचना नहीं करना चाहती। समाज की साधारण अवस्था को लेकर ही मैंने यहाँ पर कुछ लिखने का प्रयास किया है।

इस विषय में सब से अधिक खलने वाली बात जो मुझे मिली है, वह यह है कि संतानहीनता पर स्त्रियाँ ही अधिक लाञ्छन पाती हैं। यदि किसी स्त्री के संतान नहीं हुई तो घर से लेकर बाहर तक, सभी का दोषारोपण स्त्री के ऊपर होता है। यह एक सब से बड़ी मूर्खता की बात है। यह सभी जानते हैं कि पति और पत्नी मिलकर ही संतान-उत्पत्ति करते हैं। यदि संतान न उत्पन्न हो तो उसका अपराध, आसानी से किसी एक पर लादा नहीं जा सकता। दोनों ही उसके कारण हो सकते हैं और कुछ अवस्थाओं में एक का अभाव भी उसका कारण बन सकता है। परन्तु उसका कारण इतना साधारण नहीं होता जिसे सरलता पूर्वक कोई समझ ले।

जब पति और पत्नी के अभावों को समझना कठिन होता है तो किसी एक को अपराधी बना देना एक भयंकर मूर्खता है। मै इस पर प्रकाश डालने के पहले स्पष्ट रूप से यह बताना चाहती हूँ कि अधिकांश घरों और परिवारों में, संतानहीन स्त्रियां, अनेक प्रकार की बातें सुनने को पाती हैं। जो बातें कहते हैं, वे केवल इतना ही जानते है कि स्त्री के अयोग्य होने से ही संतान नही होती।

यद्यपि मैंने संतान को इतना बड़ा महत्व कभी नहीं दिया और न उसको कभी सौभाग्य तथा दुर्भाग्य के रूप में समझा,

परन्तु सैकड़ों और हजारों घरों में इस समस्या को देखकर मैंने जो कुछ समझा है, उसके अनुसार स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों का ही अभाव उसके कारण के रूप में समझ मे आया है। मैंने प्राकृतिक चिकित्सा के साथ-साथ शरीर विज्ञान का जहां तक अध्ययन किया है और उसके हिसाब से जब संतानहीन स्त्रियों को देखने का मौका मिला है तो उनमें बहुत कम ऐसी स्त्रियां मैंने पायी हैं जो संतान उत्पत्ति के लिए अयोग्य हैं। उस अवस्था में उसका अभाव पुरुषों के साथ बाकी रह जाता है। यदि संतानहीनता की समस्या को लेकर किसी अनुभवी चिकित्सक से सहायता ली जाय तो उसके वास्तविक कारण का पता लग सकता है और सम्भव होने पर उस कारण को निर्मूल भी किया जा सकता है।

संतानहीनता को लेकर मैं आवश्यक बातें स्पष्ट रूप से यहां बताना चाहती हूँ। मेरा अभिप्राय यह है कि बिना किसी कारण के स्त्रियां अपमानित न हों। जिन कारणों से पुरुष संतानोत्पत्ति के लिए अयोग्य होते हैं, वे प्रायः इस प्रकार हैं-

१—पुरुष का निर्बल और रोगी होना।

२—शरीर का अधिक स्थूल होना।

३—पुरुष का चरित्रहीन होना।

४—पति के हृदय में पत्नी के प्रति स्नेह का न होना।

५—पुरुष की अधिक आयु का होना।

६—पुरुष का नपुसंक होना।

७—वीर्य में किसी प्रकार का विकार होना।

इस प्रकार के किसी कारण से संतानोत्पत्ति के लिए पुरुष अयोग्य होता है। इन सभी कारणों का उपाय होता है और किसी चतुर चिकित्सक से ही सहायता ली जा सकती है। इन

कारणों में कुछ कारण ऐसे भी हो सकते हैं, जिनका कुछ उपाय नहीं हो सकता। जिनका प्रतिकार किया जा सकता है, उनके लिए पुरुष को स्वयम् चेष्टा करनी चाहिए।

कुछ अवस्थाओं में स्त्रियाँ भी संतान उत्पन्न करने में अयोग्य होती हैं। उन कारणों का समझना भी आवश्यक है। स्त्री के कारण इस प्रकार हैं:

१—स्त्री का बहुत दिनों तक रोगी रहना।

२—मासिक धर्म की किसी प्रकार गड़बड़ी होना।

३—प्रदर की बीमारी का होना।

४—स्त्री के शरीर का स्थूल होना।

५—स्त्री की अधिक आयु का होना।

६—स्त्री का वंध्या होना।

७—गर्भाशय का ठीक न होना।

इस प्रकार के किसी भी कारण से स्त्री संतानोत्पत्ति के लिये अयोग्य समझी जाती है। इन्हीं बातों को लेकर वैद्य या डाक्टर वस्तु स्थिति को समझने का प्रयत्न करते हैं। आवश्यकता पड़ने पर स्त्री को दिखाने के लिए किसी अनुभवी लेडी डाक्टर को ही चुनना चाहिए। यह भी हो सकता है कि पुरुष की परीक्षा किसी डाक्टर के द्वारा और स्त्री की किसी लेडी डाक्टर के द्वारा हो जाने पर उसका निष्कर्ष निकाला जाय। उस अवस्था में, जिस किसी में त्रुटि और अभाव मालूम हो, यदि हो सके तो उसका उपाय किया जाय। कभी-कभी स्त्री और पुरुष-दोनों में त्रुटियां होती हैं और दोनों ही के अभाव संतानोत्पत्ति में बाधा उत्पन्न करते हैं।

घर की इन परिस्थितियों में लोग उचित उपायों का प्रयत्न नहीं करते। फल यह होता है कि स्त्रियां प्रायः झूठों और बेई-

मानों के द्वारा छली जाती हैं। केवल संतान की अभिलाषा पूर्त्ति करने के लिए उनको सैकड़ों रुपये धोखेबाजों को दे देने पड़ते हैं।

आवश्यकता मे मनुष्य अंधा हो जाता है। उस समय जब कोई विश्वास दिलाता है तो उस पर विश्वास करना ही पड़ता है। स्त्रिया तो अपने झूठे विश्वासों के लिए प्रसिद्ध ही हैं। फल यह होता है कि न जाने कितने धोखा देनेवाले उनकी सम्पति का नाश किया करते हैं। पुरुष भी छले जाते हैं किंतु उनकी अपेक्षा स्त्रियों की संख्या अधिक होती है। जिस प्रकार के धोखों मे पड़ने से केवल सम्पत्ति का नाश होता है, उनमे से कुछ इस प्रकार हैं

१—पत्र पत्रिकाओं मे छपने वाले झूठे विज्ञापन। संतान उत्पन्न करानेवाली औषधियो के विज्ञापन इस प्रकार आकर्षक बनाकर छापे जाते है, जिन को पढते ही विश्वास उत्पन्न होता है। परन्तु वास्तव मे उनसे कुछ लाभ नहीं हुआ करता।

२—पडितों के झूठे प्रपचों मे भी स्त्रियां अधिक सख्या में फँसा करती है और कुछ दिनों तक विश्वास मे रहकर एवम् रुपये खर्च करके निराश होकर बैठ जाती है।

३—कुछ साधु और सन्यासी भी इस प्रकार का माया-जाल फैलाते है और अनुचित लाभ उठाकर लापता हो जाते हैं।

४—रुपये-पैसे के लोभी, अनुभव हीन कुछ वैद्य और हकीम भी इस प्रकार के स्त्री-पुरुषों को फांसने का काम किया करते हैं और आवश्यकता रखनेवाले स्त्री पुरुप सैतड़ों रुपये खर्च किया करते है।

५—सतान के संबंध में ओझा लोगों के जाल भी बहुत विचित्र हुआ करते हैं। संतान की लालसा में स्त्री और पुरुष

-को सब-कुछ करना पड़ता है और अंत में अपने भाग्य को दोष देकर चुप हो जाना पड़ता है

इस प्रकार की बातों में स्त्रियाँ अधिक विश्वास करती हैं। फल यह होता है कि वही अधिक ठगी जाती हैं। मैंने तो नर्सों और लेडी डाक्टरों को भी इस प्रकार के मामलों में बहुत लाभ उठाते देखा है। जब उनको मालूम हो जाता है कि स्त्री के पास रुपये की कमी नहीं है अथवा संतान की इच्छा में वह किसी प्रकार रुपये खर्च कर सकती है तो लेडी डाक्टर अथवा स्त्री-चिकित्सक उससे लाभ उठाने की चेष्टा करती हैं। वे इस प्रकार की बातें करती हैं कि जिनको सुनकर विश्वास कर लेना पड़ता है।

स्त्री और पुरुष के कारणों को मैंने ऊपर अलग-अलग बताया है। पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ उनके द्वारा भली प्रकार समझ सकती हैं और किसी परिणाम को निकाल सकती हैं। मैंने स्वयं लेडी डाक्टरों और डाक्टरों को दिखाने एवं उनसे चिकित्सा कराने के लिए लिखा है परन्तु यहां पर मैं यह भी बता देना चाहती हूं कि वे लोग फांसने वाले भी बहुत होते हैं। जितनी भी बातें ऊपर बतायी हैं, उनके सिवा लेडीडाक्टरों और डाक्टरों के पास जानकारी के लिए कुछ नहीं होता। इन बातों को बहुत स्पष्ट लिखने का मेरा अभिप्राय यह है कि स्त्रियां अपनी इन आवश्यकताओं के लिए छली न जायँ। इसलिए शिक्षित स्त्रियों को चाहिए कि वे छली आदमियों के हाथों में कभी न पड़ें। साथ ही किसी चिकित्सक से बातें होने पर वे उसे समझ भी सकें।

संतानहीनता के कुछ और भी कारण होते हैं। निःसंतान-स्त्रियों को न सभी कारणों को जानना और समझना चाहिए

जब तक ठीक-ठीक बातों का पता नहीं होता, इसी समय तक मनुष्य दूसरों के द्वारा छला जा सकता है। ऊपर जो बातें लिखी गयी हैं, उनके सिवा संतानहीनता के निम्नलिखित कारण भी हैं।

१—गर्भपात हो जाना।

२—पैदा होने के बाद संतान का न रहना।

इन दोनों कारणों से भी स्त्रियां संतानहीन हो जाती हैं। इसीलिए इनके संबंध में भी कुछ प्रकाश डालना यहां पर आवश्यक है।

कुछ स्त्रियों को गर्भपात हो जाने की शिकायत रहा करती है। चार महीने छः महीने और कभी कभी बहुत निकट समय आने के पहले ही गर्भपात हो जाता है। जिन स्त्रियों को प्रत्येक बार ऐसा होता है, उनके सामने भी एक बड़ी कठिनाई होती है। यदि इसके ठहरने में रुकावट नहीं पड़ती और कोई उचित प्रबंध नहीं हो पाता तो संतान उत्पन्न होने का अवसर ही नहीं आता। इसके फलस्वरूप भी स्त्रियों को संतानहीन हो जाना पड़ता है।

इस प्रकार गर्भपात होने के कुछ कारण होते हैं। जिनको चिकित्सक या लेडी डाक्टर भली प्रकार समझते हैं। इस प्रकार की अवस्था उत्पन्न होने पर योग्य चिकित्सा का प्रबंध होना चाहिए।

बहुत-सी स्त्रियों के बच्चे पैदा होने के बाद मर जाते हैं। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि कुछ स्त्रियों के सभी बच्चों की मृत्यु इसी प्रकार हो जाती है। मैंने स्वयं ऐसी स्त्रियों को देखा है, जिनके बच्चे एक वर्ष अथवा दो वर्ष के भीतर ही समाप्त हो जाते हैं। माता और पिता को अपनी संतान के इस

प्रकार न रहने से बड़ा कष्ट रहता है। माता के लिए तो यह विपद एक वज्रपात के समान है।

इस प्रकार की परिस्थितियों में भी कितनी ही आवश्यक बातों का आश्रय लिया जाता है। और प्रायः माता-पिता को ग्रवम् विशेषकर स्त्रियों को मंत्र पढ़ने वालों, पाठ करने वाले पण्डितों तथा ओझा लोगों की बातों पर ही अधिक विश्वास करना पड़ता है। इनसे कोई लाभ नहीं होता। इस प्रकार के अवसर न तो दुर्भाग्य से आते हैं और न भूत-प्रेत के सताने से इस प्रकार की परिस्थितियाँ उत्पन्न होती है। इनके कारणों मे माता-पिता की निर्वलता अथवा दोनों के या एक के वीर्य-संबंधी विकारों का परिणाम होता है। इसके लिए भी किसी अच्छे चिकित्सक की चिकित्सा कराने के सिवा और कोई उपाय नहीं होता। जो माता-पिता सदाचारी होते हैं और जिनके रज और वीर्य में किसी प्रकार का अभाव विकार नहीं होता, उनके द्वारा रहने वाला गर्भ न तो कभी बीच मे खण्डित होता है और न पैदा होने के बाद बच्चों की मृत्यु होती है। प्रत्येक अवस्था में योग्य चिकित्सा का ही आश्रय लेना पड़ता है।

धर्मभीरु स्त्री-जाति

स्त्रियां अपनी धर्म-प्रियता के लिए प्रसिद्ध हैं। स्त्री-स्वभाव से परिचित सभी इस बात को स्वीकार करेंगे कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां धार्मिक बातों में अधिक आगे पायी जाती हैं। पूजा और आराधना उनके जीवन की एक मुख्य सामग्री बन गयी है, धर्म के प्रति उनकी इस साधारण लालसा और अभि-

लापा ने उनको, उनकी आंखों में और दूसरों की दृष्टि में भी धर्म-प्रिय बना रखा है।

स्त्रियों की इस धार्मिक मनोवृत्ति ने बार-बार मुझे अपनी ओर आकर्षित किया है। मैंने अनेक बार सोचा है, स्त्रियों की इस विशेषता का अर्थ क्या है। समाज मे स्त्री-जाति के इस धार्मिक विवेक को महत्व दिया जाता है। लोग सहज ही स्वीकार करते हैं कि आज भी स्त्रियों मे धार्मिक विवेक जागरित है। देखने में भी यही आता है। मंदिरो मे स्त्रियों की भीड़ होती है—देवी, देवताओं के निकट स्त्रियों का मेला होता है और गङ्गा-स्नान के किसी अवसर पर स्त्रियों की ही एक विशेष प्रदर्शनी होती है। फिर भला स्त्री-जाति की धार्मिक प्रियता से कौन इन्कार कर सकता है। स्त्रियां इसे अपना गौरव समझती हैं। पुरुष भी इसके लिए उनको सम्मान देते हैं।

इतना सब होने पर भी, मेरी समझ मे कुछ नहीं आया। अनेक अवसरों पर मैंने इसे समझने की चेष्टा की है और अनेक रूप से मैंने इसे टटोला है। मैंने देखा है, जो बूढ़ी स्त्रियां चलने-फिरने से भी रहित हैं, वे भी देवी-देवताओं पर जल डालने के लिए हाथ मे लोटा लिए आगे बढ़ी जाती हैं। परदे मे मुंह छिपाये हुए स्त्रियाँ मंदिरों मे जाने के लिए उतावली रहती हैं और छोटी-छोटी बालिकायें प्रसन्न चित्त होकर किसी भी देवमूर्ति के सामने हाथ जोड़कर खडी होती हैं। ये सभी बातें मिलकर बताती हैं कि स्त्री-जीवन के स्वभाव में पूजा-आराधना का एक साधारण सम्मिश्रण है।

इतना सब देखने के बाद भी मैं उसके अर्थ को कभी समझ नहीं सकी। मैं नहीं समझ सकी कि वस्त्रों और आभूषणों से सुसज्जित होकर एक वृक्ष के नीचे वे क्यों एकत्रित

होती हैं और उसकी पूजा करके वे क्यों गद्-गद् हो उठती हैं।
मैं नहीं समझ सकी कि स्त्रियाँ अपने जीवन का सर्वस्व एक प्रस्तर मूर्ति देवता पर क्यों समर्पित करती हैं! पुरुषों में इसका अभाव क्यों है और स्त्रियों में इसकी अधिकता क्यों है?

स्त्रियों की इस धर्म-प्रियता का कारण क्या यह मान लेना चाहिए कि उनमें अधिक विवेक होता है, इसीलिए वे जीवन के इस मार्ग पर अधिक अग्रसर होती हैं? बिना किसी तर्क के क्या इसे स्वीकार कर लिया जाय कि पूजा-आराधना के प्रति उनका अधिक अनुष्ठान कुछ विशेष महत्व रखता है? हमारे सामने न जाने कितने दिन, कितनी तिथिया और कितने त्योहार आते हैं, जिनमें स्त्रियां व्रत करती हैं, उपवास करती हैं और विशुद्ध रहकर दिन बिताती हैं। इन सभी बातों का अर्थ क्या होता है?

इसी धर्म-प्रियता के फलस्वरूप स्त्रियां किसी भी साधु-संन्यासी का अधिक सम्मान करती हैं। उनके दर्शनों के लिए अधिक उत्सुक रहती हैं और अपनी सेवाओं से उन्हें प्रसन्न करने की अधिक चेष्टा करती हैं। इसका कारण क्या है? एक पण्डित जब सत्यनारायण की कथा सुनाता है तो स्त्रिया पुरुषों की अपेक्षा अधिक धर्म-विभोर दिखायी देती हैं। और धार्मिक स्थलों पर अपने समस्त परदा-परहेज भुला देती हैं! इन सभी बातों का अभिप्राय क्या है!

बड़े से बड़े साहित्य का अध्ययन करना उतना कठिन नहीं है, जितना कठिन स्त्रियों की पूजा करने का अध्ययन है! याद रखना, समझना और उसका क्रम बांधना एक बड़ा कार्य मालूम होता है। मन्दिरों, ठाकुरद्वारों, मठों और शिवालयों

में प्रतिष्ठित देवमूर्तियों की पूजा तक ही उनका प्रयास सीमित नहीं है। उनकी चेष्टायें और भी आगे हैं। मैंने अपनी आंखों से एक स्थान का जो दृश्य देखा है, वह और भी अधिक कौतूहल पूर्ण है।

एक थोड़ी-सी जमीन घास-पत्तों से ढकी थी। वह कच्ची थी और बहुत खराब अवस्था में थी। दो-तीन हाथ ऊँची थी। पशुओं ने अपने मल-मूत्र से उसे और भी बिगाड़ रखा था। एक दिन साधारण श्रेणी के दो आदमियों ने उसकी सफाई की। लीपा-पोता और एक हाथ ऊंची मिट्टी की छोटी-सी चबूतरी बना दी। उस पर दो-तीन पत्थर लाकर रख दिये। ये सब दृश्य लोगों ने देखा। अभी तक यह समझ में नहीं आया कि ये दोनों गँवार आदमी क्या कर रहे हैं। उनका काम समाप्त हो गया। दूसरे दिन से स्त्रियां नहा-नहाकर वहां आने लगीं और अपने लोटों का जल छोडकर वे खड़ी होतीं। हाथ जोड़कर मन-ही-मन वे प्रार्थना करतीं और उसके बाद चली जातीं। उस दिन के बाद स्त्रियों की संख्या बढ़ने लगी। अनेक प्रकार के पुष्प वहॉ पर चढ़ने लगे और पूड़ी एवम् मिष्टान्न सम्बन्धी अनेक प्रकार की वस्तुएं वहॉ पर देवता को समर्पित होने लगीं। ये सब देखते-देखते आरम्भ हो गया।

उस स्थान पर जो स्त्रिया जाती थीं, अपना जल अर्पण करती थीं और हाथ जोड़कर प्रार्थना करती थीं, उसमें वे क्या कहती थीं और किस अभिप्राय से कहती थीं, इसका कभी कुछ पता न चला। एक दिन संयोग से एक ऐसी स्त्री उस स्थल से लौटती हुई दिखायी पडी, जिसे मैं थोड़ा-बहुत जानती थी। मेरी तबीयत हुई कि उससे कुछ बातें करूँ मैंने उसे बुलाया। वह जब मेरे पास आने लगी तो थोड़ी देर के भीतर ही, मैंने सोच

डाला कि अपनी इस बात को इस प्रकार उसके सामने रखना चाहिए, जिससे उसको मेरे विरुद्ध कुछ सोचने का मौका न मिले। उसके आते ही मैंने अपने आपको बहुत सम्हाल कर कहा—अब तो यहाँ पर कुछ अधिक स्त्रियाँ आने लगी हैं।

मेरी यह बात उसके पक्ष में थी। उसने मेरा समर्थन करते हुए कहा—हाँ, आने लगी हैं। अभी दिन ही कितने हुए हैं।

मैंने कुछ सोचकर पूछा—जो स्त्रियाँ यहां आती हैं, वे अपने कुछ भावों को लेकर आती होंगी ?

मेरी बात को सुनकर उसने 'हूं' कहकर टाल दिया। इसी लिए मुझे फिर पूछना पड़ा—जो स्त्रियाँ यहाँ पर आती हैं, वे एक दूसरे की आवश्यकताओं को जानती होंगी ?

उसने कहा—क्या जाने बहन।

उसकी इस बात से भी कुछ अर्थ न निकला। इसीलिए कुछ सोच-विचार कर मैंने फिर पूछा—जिस अभिप्राय को लेकर स्त्रियाँ वहाँ जाती हैं और उसके लिए प्रार्थना करती हैं, उसकी पूर्ति कितने दिनों में हो जाती होगी ?

उसके मुखाकृत को देखकर, मुझे ऐसा मालूम हुआ कि जैसे मेरी बातें उसे अच्छी न लग रही हों। उसने कुछ कर्कश स्वर में कहा—देवी-देवता पर जल डालना क्या कुछ बुरा है ? मैंने नम्रता के साथ कहा—मेरा भाव ऐसा नहीं है। मैं भी कई दिनों से सोच रही थी, बात यह है कि सभी के सामने एक-न-एक पीड़ा होती है। किसी को कुछ दुख होता है और किसी को कुछ। अपने दुखों को लेकर ही स्त्रियों को वहाँ जाना पड़ता है। वही मैं तुमसे समझना चाहती थी।

उसने कहा—यह तो अपना-अपना विश्वास है। हाँ विश्वास की तो बात ही है। जब विश्वास ही न होगा तो

उसका फल क्या मिलेगा !

फल न मिले तो कोई जाय क्यों। जो लोग इन बातों को नहीं मानते, वे न मानें, जिनका विश्वास है, वे मानते हैं।

मैंने कुछ रुककर और सोचकर पूछा—हम लोग यदि एक दूसरे की बात को जान सकें तो क्या कुछ हानि है ?

उसने कुछ भी उत्तर न दिया। मालूम होता था कि इसके सम्बन्ध में वह कुछ कहना नहीं चाहती। मैंने समझ लिया कि इससे कुछ भेद न खुलेगा। फिर भी मैंने पूछा—तुम कब से जाती हो ?

उसने कहा—तीन-चार दिनों से।

'तुम्हें कुछ लाभ हुआ ?'

मेरी बात को सुनकर उसने कुछ अप्रसन्न होकर कहा—बाजार का सौदा नहीं है, जिसे जाकर कोई खरीद लावे। देवी-देवता के प्रसन्न होने पर सभी कुछ होता है।

इसके बाद वह चली गयी। स्त्रियों की भावनायें क्या होती हैं, उनके सम्बन्ध में जानने के लिए ही मैंने ये बातें कीं परन्तु उनसे कुछ लाभ न हुआ। स्त्रियां अपने विचारों को कितना छिपाकर रखती हैं, यह भी स्पष्ट मेरे सामने आ गया। वे एक दूसरे से अपनी बात को क्यों नहीं कह सकतीं, इसे मैं बार-बार सोचने लगी।

स्त्रियों की इन बातों को लेकर मैंने कई बार पढ़े-लिखे आदमियों से बातें की हैं। अधिकांश लोग उनका समर्थन करते हैं कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं जो स्त्रियों की इन बातों को उन्हीं के ऊपर छोड़ देते हैं। किसी प्रकार मैंने इन बातों का कोई विशेष रहस्य नहीं जाना।

धर्म की परिभाषा और उसके महत्व का अध्ययन करने

के बाद मैं सदा इस निष्कर्ष पर पहुँची हूं कि स्त्रियोंकी इस धर्म-प्रियता का विवेक नहीं है। मानव-जीवन का विवेक भी इसका समर्थन नहीं करता। आवश्यकता होने अथवा न होने पर—प्रत्येक दशा में किसी को देवता मान कर पूजा-आराधना करते रहना धार्मिक प्रवृत्ति का परिचय नहीं देता। साधारण समाज और स्त्रियाँ देवी-देवताओं को जिस रूप में मानती हैं, यदि उसे भी मान लिया जाय तो भी, उनसे सदा प्रार्थना करते रहने का कुछ अर्थ नहीं होता। मनुष्य के जीवन का विवेक बताता है कि यह धर्म-प्रियता नहीं है, वरन् धर्म-भीरुता है। धर्म के प्रति सदा भयभीत रहना न केवल हृदय की कायरता है, बल्कि वह भयानक निर्बलता है जो अनाचार और दुराचार के द्वारा उत्पन्न होती है। अन्यथा उससे भय-भीत होने और रहने का क्या अर्थ होता है?

राजा, प्रजा के हितके लिये होता है। अहित की आशंका करके राजा के प्रति सदा हाथ जोड़ने का कोई अच्छा अभिप्राय नहीं होता। शुद्ध आचरण के स्त्री-पुरुषों का यह काम भी नहीं होता। इसे कोई स्वीकार न करेगा कि राजा, उन्हीं लोगों से प्रसन्न होता है जो हाथ जोड़ कर सदा उसकी पूजा किया करते हैं। राजा का कर्त्तव्य प्रजा की शुभ कामना है। यदि वह प्रजा का हित नहीं करता तो स्वयं कर्त्तव्यहीन होकर पतित होता है। राजा अथवा किसी अधिकारी के प्रति सदा भयभीत रहना उन्हीं का काम होता है, जिनके जीवन में दुराचार अधिक होते हैं। राजा और प्रजा का सबंध सर्वथा आदर पूर्ण है।

देवताओं का कार्य किसी को हानि पहुँचाना नहीं है और न वे कभी किसी पर कोप ही किया करते हैं। यदि वे किसी

पर क्रुद्ध हो सकते हैं तो उनमें और एक साधारण मनुष्य में अन्तर क्या होता है। इस अवस्था में उनके प्रति सदा भयभीत रहना और उनको सर्वदा प्रसन्न करने की चेष्टा करना किसी पवित्रता का परिचय नहीं देता।

सदाचार, सद्व्यवहार और सद्विचार मिलकर धर्म के रूप का निर्माण करते हैं। यदि हम अपने जीवन में इनका पालन कर सकें तो वही हमारी धार्मिकता होती है। मानव धर्म, हमको क्षमाशील होना और दूसरों के प्रति सहानुभूति पूर्ण बनना सिखाता है। यदि उसकी शिक्षा से हम सदा प्रभावित रह सकें, तो वही हमारी धार्मिक प्रवृत्ति होती है। धर्म-भीरुता हमारे जीवन के दुराचार को स्पष्ट सब के सामने रखता है। धार्मिकता और धर्म-भीरुता—दोनों एक दूसरे की विरोधिनी हैं। दोनों का एक स्थान पर, एक ही समय पर रहना असम्भव होता है।

एक पत्नी का अपराध

अपराध और अभाव, दो में से एक भी अच्छा नहीं होता। दोनों ही हमारे जीवन के कीड़े हैं जो हमें भीतर-ही-भीतर खोखला और निर्बल बनाते रहते हैं। स्त्री-जाति के अपराधों और अभावों की आलोचना मैंने बार-बार की है। आवश्यकता पड़ने पर किसी एक बात को अनेक बार कहना पड़ा है। इस प्रकार त्रुटियों को मैंने बार-बार सामने रखा है।

स्त्री-जाति के प्रति मैं शुभ कामना रखती हूं। सत्य का पक्ष लेकर मैं उनका समर्थन करती हूं, परन्तु उनकी त्रुटियों पर धूल डालना मैंने कभी उचित नहीं समझा। पिछले पृष्ठों में स्त्री-जाति की धर्म के प्रति स्वाभाविक निर्बलता को मैंने स्पष्ट

आलोचना की है। मेरा विश्वास है कि अपनी त्रुटियों को दूर करने में ही कल्याण है। अभाव और अपराध कभी किसी की रक्षा नहीं किया करते, यह बिल्कुल सत्य है।

कोई भी मनुष्य अपराधी नहीं होता और न वह अपने आप पुण्य-आत्मा बनता है। जीवन की परिस्थितियाँ ही उसे साधु और असाधु बना देती हैं। हमारे जीवन की परिस्थितियाँ ही, हमारे लिए सच्ची गुरु बनती हैं। मनुष्य उन्हीं से सब कुछ सीखा करता है। अच्छे वातावरण में रहकर मनुष्य नेक बनता है और दूषित वातावरण में रहकर, मनुष्य सहज ही, दोषपूर्ण बन जाता है; यह स्वभाव है।

स्त्रियों के अपराध और अभाव भी इसी प्रकारके हैं। इन अपराधों का अर्थ निकालना क'ी-कभी बहुत कठिन हो जाता है। स्त्रियाँ स्वयम् नहीं जानतीं कि जिसे वे, अपराध कहती हैं, वह क्या है और जिसे कर्त्तव्य के रूप मे समझ रखा है, उसका परिणाम क्या है। शिक्षा के अभाव में जब मनुष्य को स्वयम् ज्ञान नहीं होता और जिस अवस्था में उसे दूसरोंकी ही बात पर विश्वास करना पड़ता है वह अवस्था प्राय. हानिकर ही सिद्ध होती है।

स्त्री-जीवन बहुत दिनो से बहुत दुर्बल अवस्था में चल रहा है। अपनी दुर्बलता के कारण ही जीवन के पाप और पुण्य को उसने भुला रखा है। सत्य और असत्य क्या है, कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य किसे कहते हैं और अपना लाभ और हानि किसमें है, इसको वह स्वयम् नहीं जानती। दूसरे जिसे कर्त्तव्य कहते है, वही उसकी आंखों में पुण्य बन जाता है और जिसे दूसरे अच्छा न समझे', वही एक स्त्री की आखों में निन्दनीय बन जाता है; यह सब इसलिए कि उसे स्वयम् उसका वास्तविक

ज्ञान नहीं है।

मैंने ईमानदारी के साथ और अपनी जानकारीकी कसौटी पर सदा स्त्री-जीवन की आलोचना की है। मैंने सत्य को सत्य और असत्य को असत्य समझने की चेष्टा की है। जैसा मैंने समझा है, ठीक वही मैंने स्त्री-समाज के सामने सदा उपस्थित किया है। जीवन की त्रुटियों और खराबियों को मैंने आंखें फाड़-फाड़कर देखने की कोशिश की है और लाख बार किसी के विरोध करने पर भी कमजोरी को, कमजोरी ही समझा है। मेरा विश्वास है कि निर्बलता पर परदा डालने से काम नहीं चलता। प्रत्येक अवस्था मे उसको अपने अन्त.करण से निकालना ही पड़ेगा। इस अवस्था में उसकी कड़वी आलोचना की है। परन्तु जीवन की जो खराबी नहीं है, उसका समर्थन भी किया है।

इसी अभिप्राय को लेकर यहां पर मैं एक छोटी सी घटना का उल्लेख करना चाहती हूं। स्त्री-जीवन के साथ उसका साधारण सम्बन्ध है, फिर भी वह बड़े काम की है। एक भले घर की बात है। अकस्मात् वहां पहुँचने पर मैंने कई स्त्रियों को आपस मे बातें करते हुए देखा। पहुँचने पर जब मैंने मालूम किया तो सुनकर और जानकर मुझे कुछ आश्चर्य हुआ। जो स्त्रियां बैठी थीं, आपस मे बातें कर रही थीं, मुझे देखते ही चुप हो गयीं। पहुँचने के बाद मैंने सहज ही पूछा—अभी आप लोगों में क्या बातें हो रही थीं ?

किसी ने कुछ उत्तर न दिया। कुछ ठहरकर एक ने टालमटोल करते हुए कहा—यों ही, जब स्त्रियां बैठती हैं तो कुछ न-कुछ बातें होती हैं।

मैंने कहा—वही तो मैं जानना चाहती हूं। मैंने वहां

पहुँचने के पहले आप लोगों को बहुत हँसते और बातें करते हुए देखा, परन्तु कोई बात समझ में नहीं आयी।

आग्रह पूर्वक पूछने के बाद भी वे लोग अपनी बात को टालती ही रहीं। किंतु मेरे बार-बार प्रश्न को सुनकर एक स्त्री ने हसकर कहा—आज कल की पढ़ी लिखी स्त्रियों की कुछ चर्चा चल रही थी।

मैंने उत्सुक होकर पूछा— कैसी चर्चा ?

उसने कहा—अब वह बात हो गयी, आप उसे जान कर क्या करेंगी ?

मैंने कहा—क्या उसे जानने का मुझे कोई अधिकार नहीं है।

दो स्त्रियां एक साथ बोल उठीं—अधिकार क्यों नहीं है।

'तो फिर ?'

एक स्त्री ने कहा—बात यह है कि हमारे पड़ोस में एक स्त्री अपने पति के साथ घूमने जाती है।

अभी उसकी बात पूरी न हुई थी। वह कुछ और कहना चाहती थी किन्तु बीच मे ही मेरे मुह से निकल गया—अपने पति के साथ घूमने जाती है तो वह क्या अपराध करती है ?

बैठी हुई स्त्रियां मेरी ओर देखने लगीं। उन्हें मेरे ऊपर सन्देह भी होने लगा। संकोच के मारे वह मुझसे कुछ कहना भी न चाहती थीं। परन्तु मैं उसे जानना चाहती थी। मेरी बात को सुन कर एक ने साहस के साथ कहा—

हम लोगों में आदमी के साथ स्त्री का घूमने जाना अच्छा नहीं समझा जाता।

मैं उसकी बात को समझ न सकी। क्षण-भर में मैंने मन-ही-मन सोचा, इसका क्या अभिप्राय ? आदमी के साथ स्त्री

का घूमने जाना अच्छा क्यों नहीं समझा जाता ?

मैंने कहा—अभी आप की बात साफ नहीं हुई। मैं ठीक-ठीक समझ भी नहीं सकी।

इसी समय दूसरी स्त्री ने कहा—समझने की उसमें क्या बात है। हम लोग ऐसा नहीं करतीं कि जब जी में आवे कपड़े बदल कर अपने-अपने आदमियों के साथ हम लोग घूमने निकलें।

मैं उसकी बात को सुन रही थी। उसके चुप होते ही, दूसरी स्त्री उसका समर्थन करते हुए कहने लगी—दस दस और बारह-बारह वर्ष हम लोगोंके ब्याह के बीत गये। हम सभी लोग बाल-बच्चे वाली हैं, परन्तु फिर भी ऐसा नहीं होता कि हम लोग अपने-अपने आदमी को लेकर घूमने निकलें।

मैं अब भी सुन रही थी। मेरी आंखों के सामने एक विस्मय था। इसी समय उसने फिर कहा—आज कल की पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ सब कुछ कर सकती हैं। उनके सामने न लोक-लाज है और न छोटे-बड़े का कायदा है। मरदों के साथ यदि घूमने न जायँ तो उनको खायी हुई रोटी न पचे।

मैं इन बातों को सुन रही थी और उनकी ओर देख रही थी। मैं मन-ही-मन सोचती थी—इन लोगों की आंखों में एक शिक्षित स्त्री का यह अपराध है कि वह अपने पति के साथ घर से निकल कर बाहर घूमने जाती है। अपराध को इन्होंने क्या समझ रखा है ?

कुछ देर तक उनकी बातों को सुनने के बाद मैंने धैर्य और शान्ति के साथ पूछा—जिस स्त्री की आप लोग बातें कर रही हैं, वह किस आदमी के साथ घूमने जाती है ?

मेरी बात को सुनकर एक ने कहा—किसी दूसरे के साथ नहीं अपने पति के साथ।

'उस स्त्री की क्या अवस्था है?'

उमर तो अभी बीस वर्ष से अधिक न होगी। व्याह हुए दो-तीन साल बीते होंगे।

मैं चुप थी और उसकी बात को सुन रही थी। उसने फिर कहा-घर मे सास हैं, ससुर हैं। जेठ और जिठानी भी है। परन्तु अब तो किसी का कोई कायदा ही नहीं रह गया।

मैंने पूछा---उसकी जिठानी और सास भी इस बात को बुरा मानती होंगी?

उसने कहा—क्या होता है, बुरा मानने से। कोई बुरा माना करे। वे तो पढ़ी-लिखी हैं। फिर किसी का डर ही क्या। जो चाहें सो करें। उनसे कोई कह क्या सकता है!

मैंने कहा—एक बात मैं और जानना चाहती हूं और वह यह कि उसकी सास और जिठानी ने क्या आप लोगों से कभी कुछ कहा है?

'कहा क्यों नहीं और न भी कोई कुछ कहे तो क्या। हम लोग क्या समझती नहीं हैं कि ये बात बुरी है। हम लोग इतनी बड़ी हुईं। न पहले की स्त्रियों में ये बातें कभी देखी गयीं और न हम लोगों में हैं। लेकिन जो लड़कियां स्कूलोंमें पढती हैं, उनका तो संसार ही और है, उनकी बातें ही निराली हैं।

उनकी इन बातों को सुनकर मैंने समझाते हुए कहा—आप लोग जिन बातों को लेकर उस युवती पर अपराध लगाती हैं, यह ठीक नहीं। इसमें कोई अपराध की बात नहीं होती। पुराने लोगों में इन बातों को अच्छा न समझा जाता

था, आप का यह कहना कुछ थोड़ा-सा सही है परन्तु बहुत अंशों में असत्य भी है। पिछली अनेक शताब्दियां ऐसी बीती हैं जिनमें हमारा देश अशिक्षित होकर रहा है। शिक्षा न होने पर देश के स्त्री पुरुषों का जीवन जिस प्रकार अंधकार पूर्ण बन जाता है, उसको कदाचित आप लोग नहीं जानतीं। उसी अन्धकार का यह प्रभाव होता है कि स्त्री और पुरुष स्वयम् और सही बातों को भूल कर झूठी बातों पर विश्वास करने लगते हैं।

वे स्त्रियां मेरी बातों को सुन रही थीं। मैंने आगे कहा समाज के झूठे विश्वासों को मैं बहुत अधिक जानती हूं। आप लोगोंने जो कुछ कहा है उसे सुनकर मुझे कुछ आश्चर्य हुआ। यह भी मैं जानती हूं कि आप लोगों ने किसी शत्रु भावके कारन नहीं कहा। पुराने विचारों और विश्वासों में आप लोगों का अब तक जीवन बीता है। इसी लिये उनपर आपका विश्वास है। सच्ची बात यह है कि वे पुरानी बातें हम लोगों के लिये बहुत हानीकारक सिद्ध हुई हैं। मनुष्य जिन बातों को जानता है, उन्हीं पर वह विश्वास करता है। जब तक उनको उन बातों की बुराई का ज्ञान नहीं होता, तब तक स्वयम् उसे उनबातों से घृणा नहीं होती।

मेरी बातों को सुनने के साथ-साथ उन लोगों ने कुछ विरोध करना चाहा। परन्तु उनका विरोध चला नहीं। इसीलिये वे फिर मेरी बातोंको सुनने लगीं। मैंने आगे कहा— पति और पत्नी का संबंध ऐसा नहीं है जिसके घरके बड़े आदमियों की आंखों में छिपाकर रखा जाय। यह संबंध शत्रु का नहीं होता मित्रता पूर्ण होता है। अशिक्षा के अन्धकार में समाज ने और पुराने विचारों के स्त्री पुरुषों ने झूठी बातों

पर विश्वास किया है असत्य बात सदा नहीं चला करती। आज शिक्षा बढ रही है। उसी के द्वारा लड़कों और लड़कियों को, स्त्रियों और पुरुषों को सही बातों का ज्ञान हो रहा है। फल यह हुआ है कि स्त्री-पुरुषों के जीवन मे झूठी बातें मिटने लगी हैं और स्त्री एवम् पुरुष प्रकाश की ओर बढ़ने लगे हैं।

इस प्रकार की घटनायें प्रायः आँखों के सामने आती हैं। पुरानी रूढ़ियोंने समाज को भयानक अंधकार में डाल रखा है। आज की शिक्षा ने इस अंधकार को मिटाने और प्रकाश के लाने का कार्य किया है। जो प्रकाश हमें मिल रहा है, वह इतनी अधिक मात्रामें नहीं है, जिससे सम्पूर्ण समाज प्रकाशमान हो उठे। अभी तक समाज का बहुत बड़ा भाग अंधकार मे है।

झूठे अविश्वासों के कारण स्त्री-जीवन की न जाने कितनी बातें उलटी हो रही हैं। परिणाम यह हुआ है कि सत्य के स्थान पर असत्य फैला हुआ है। मनुष्य जीवन की जो बातें सुख और संताप देनेवाली हैं,झूठे विश्वासों के कारण, उलटी हो रही हैं।

लड़कियों और स्त्रियोंमें आज जो शिक्षा बढ़ रही है, उसने उनके जीवन को बदलने का काम आरम्भ कर दिया है। उनका व्यवहार, बर्त्ताव, रहन-सहन और अनेक बातें जीवन की आज बदलती हुई दिखायी दे रही है। वह स्त्रियाँ जितना शिक्षाके निकट पहुँची हैं और नागरिक शिक्षित वातावरण का सम्पर्क प्राप्त किया है,वे उतनी ही जीवनके सत्य को पहचान सकी हैं।

स्त्री-समाजके इस परिवर्तनके कारण स्त्रियोंके सामनेएक संघर्ष उत्पन्न होगया है। पुराने विचारोंकी स्त्रिया और पुरुष

नवीन विचारोंकी स्त्रियोंसे आज अत्यन्त ईर्षालु हैं। जिन स्त्रियों ने नवीन पक्षका अनुसरण किया है, वे अधिकसे अधिक मात्रा में कोसी जाती हैं। परन्तु इससे उनके मार्गमें कोई रुकावट न पड़ेगी। यह युगका प्रभाव है जो परिवर्तन हो रहा है ? उसने स्त्रियोंके जीवनमें जागरण उत्पन्न किया है। यह जागरण दिन पर दिन पर बढ़ता जा रहा है और स्त्री-जीवन का भविष्य उज्वल बनाने में लगा है। जिसे आज स्त्रीके जीवन का अपराध समझा जाता है, वह कल पुण्य प्रतापके रूप मे बदल जाता है। जो विरोधी हैं, उनकी संख्या दिन-पर दिन घट रही है और नवीन विचारों का जिन स्त्रियोंने अनुसरण किया है, उनकी संख्या दिन-पर दिन बढ़ रही है।

❀———❀

विधवाओं की समस्या

हमारे समाज में विधवाओं का प्रश्न एक गंभीर समस्या के रूप में है। यह समस्या आज की नहीं है। पुरानी है। और बहुत दिनों से हमारे समाजके साथ आरही है। विधवाओं की यह अवस्था जितनी ही पुरानी होती जाती है, उतनी ही गूढ़ और गम्भीर बनती जाती है।

देशकी विधवाओं के सम्बन्धमें हमारा समाज अचेत नहीं है,आजके बहुत दिन पहलेसे उसने इस ओर बहुत ध्यान दिया है देशके विद्वानों ने न केवल उसकी परिस्थितियों का अनुभव किया है, बल्कि उसे हल करने के लिए पूरा प्रयत्न किया है। समाज से विधवाओं की दुरावस्था कैसे मिटाई जा सकती है और स्त्री-समाज का मस्तक किस प्रकार सम्मान पूर्ण बन सकता है, इसके लिए जितना लिखा जा सकता था,उतना लिखा गया। और जितना बोला जा सकता था, उतना बोला गया।

उसके संबंध में कोई चेष्टा उठा नहीं रखी गयी।

इतना होने पर भी समाज की अवस्था में कोई परिवतन नहीं हुआ। समाज जहां था, वहीं पर बना रहा। देश के शुभ चिन्तकों और विद्वानों ने अपना प्रयत्न बराबर जारी रखा। स्त्रियों में जागृति की गयी। सभाओ में वक्ताओं ने गला फाड़ फाड़ कर सब कुछ कहा। और समाज के सुधारकों ने, अनेक प्रकार की योजनाओं के द्वारा परिस्थितियों को बदलने का प्रयास किया। परन्तु विधवाओं की अवस्था उतनी ही कठोर और असह्यय बनी रही, जितनी वह पहले थी!

अच्छीसे अच्छी औषधियां की गयीं—उत्तमसे उत्तम चिकित्सा का प्रबन्ध किया गया, किन्तु कई करोड़ विधवाओं की दुखपूर्ण अवस्था की कोई व्यवस्था न हो सकी। समाज ज्यों का त्यों बना रहा!!

यहां पर यह अपस्था विचारणीय है' साधारण तौर पर नहीं विशेष रूप से विधवाओंकी अवस्था ऐसी नहीं है जो भुलाई जा सके। समाजमें विधवाओं का प्रश्न इतना सरल नहीं है, जिसकी ओर से आंखे मूंदी जा सकें। स्त्री समाज का यह एक कलंक है। सम्पूर्ण स्त्री-जाति के लिये यह दुरअवस्था एक अपमान के रूपमें है। यद समाजकी यह कालिमा मिटाई नहीं जा सकती तो एक भी स्त्री को—सम्मान पूर्ण स्त्री को अपने आदर और मान का दावा न करना चाहिये। विधवा होना अपवाद की बात नहीं है, विधवाओं की दुर-अवस्था कलंक के रूप मे है। जिससे एक विचारशील स्त्री इन्कार नहीं कर सकती!

विधवाओं की अवस्था को बदलने के लिये जितने प्रयत्न और प्रयास किये गये वे सब के सब निष्फल गये। किस

प्रकार और कैसे ? इस पर यहां संक्षेप में विचार करना है। बहुत प्रारंभ काल में जब मनुष्य सामाजिक व्यवस्था में आया था, और उस समय समाज के नियमों का निर्माण हुआ था, हमारी विधवाओं की अवस्था का सूत्रपात वहीं से होता है। विवाह की व्यवस्था जब की गयी थी, उसी समय समाज ने यह निश्चय किया था, कि स्त्रियों का दूसरा विवाह न हो। समझ-बूझकर एक बार विवाह हो चुकने पर दूसरे विवाह की आवश्यकता नहीं है। इस विचार-धाराके अनुसार स्त्रियां दूसरे विवाह के अधिकारों से वंचित की गयीं। और पुरुषों ने उनके इन अधिकारों का अपहरण इसलिये किया कि जिसमें वे अपने अपने पति की उपेक्षा न कर सकें जब मनुष्य समझ लेता है कि हमारे लिये एक ही दीपक है, उसके स्थान पर दूसरा दीपक पाने का हमें कोई अधिकार नहीं है, यदि वहीं वह बुझ गया तो जीवन-भर हमे बिना दीपक के, अन्धकार में ही जीवन बिताना पड़ेगा। उस अवस्था मे उसके सामने एक ही मार्ग रह जाता है, वह दीपक अच्छा हो या बुरा, प्रकाश देता हो या न देता हो, उस मनुष्य को उसी का भरोसा करना पड़ेगा, उसी पर विश्वास रखना पड़ेगा और उसी की पूजा करनी पड़ेगी। इतना ही नहीं दुर्भाग्य से वायु का झोंका पाकर, यदि वह बुझ गया तो सम्पूर्ण जीवन अन्धकार में रख कर और क्लेश एवम् वेदना के दिनों में उसी को स्मरण करके जीवन के दिन काटने पड़ेंगे !

समाज की यह अवस्था चली। इस व्यवस्था के अधिष्ठाता पुरुष बने। जितने ही दिन आगे चलते गये, विवाह की प्रणाली पुष्ट होती गयी। उसमें स्त्रियों को नियमों में बंधकर रहना

पड़ा और बनाये हुए नियमोंके एक-एक अक्षरका पालन करने के लिये स्त्रियां विवश की गयीं। पुरुषों पर विवाह की प्रणाली का कोई नियंत्रण न रहा। फल यह हुआ कि समाज में स्त्री के लिए एक विवाह का अधिकार रहा और पुरुष इच्छा और आवश्यकता के अनुसार विवाह करने के अधिकारी बने। पतिके मर जाने पर भी एक स्त्री, दूसरे विवाह की कल्पना नहीं कर सकती—कभी स्वप्न नहीं देख सकती। परन्तु पुरुष स्त्री के मर जाने पर विवाह तो कर ही सकते हैं, स्त्री की उपस्थिति में भी अपना दूसरा, तीसरा और चौथा विवाह करके जीवन की विलासिताका भोग कर सकते हैं! समाज का यह रूप बन गया!

स्त्रियां दूसरे विवाह का कभी स्वप्न न देख सकें—अपने पति को छोड़कर अथवा उसके सिवा किसी दूसरे पर दृष्टि न डाल सकें इसके लिये समाज के सम्पूर्ण नैतिक बोझ केवल स्त्रियों पर लाद दिये गये सैकड़ों ग्रन्थोंका निर्माण हुआ जिनमें स्त्रियों के सतित्व को मजबूत बनाने की चेष्टा की गई। सती-दाह जैसी अमानुषिक प्रथायें समाज में चलीं और उन्हीं का आदर हुआ जो स्त्रियां इन नियमोंका पालन कर सकीं। उन्हीं को सम्मान मिला और जिनके पालन में किसी प्रकार की त्रुटी हुइ वे न केवल अपमानित हुईं वरन पतित बनाई गयीं और घर एवम परिवार से निकाल कर समाज को विशुद्ध रखने का प्रयत्न किया गया!

इस प्रकार की विवेक हीन विचार-धाराओं और प्रथाओं ने स्त्रियों को जिस दूर अवस्था में पहुँचाया है, विधवाओं का क्रन्दन पुर्ण जीवन उसका एक उदाहरण है! समाज की इस व्यवस्था ने स्त्रियों को सदा सर्वदा के लिए समाज के

नियमों का कैदी और पुरुष को बंधन-हीन बना दिया है। स्त्री और पुरुष—दोनों से समाज बना है। दोनों ही मिल-कर समाज की रचना और व्यवस्था करते हैं। एक के लिए इतने अधिक कानून बने जो सैकड़ों पोथियों और ग्रन्थों मे लिखे गये और दूसरे के लिये इतनी अधिक स्वतंत्रता दी गयी कि उसका उन सैकड़ों ग्रन्थों मे कहीं कोई नाम नहीं। वर्त्त-मान समाज इन्ही सब बातों का परिणाम है। स्त्रियों की जो अवस्था है—विधवाओं का जो रुदन है और अबलाओं का जो आज विलाप है, समाज की उस व्यवस्था का परिणाम है।

आज की बात नहीं है अनेक शताब्दियों से हमारा समाज विधवाओंके रुदनको सुन रहा है, उनकी दुरअवस्थाको देख रहा है किंतु कितने स्त्री-पुरुष हैं जो उनके लिए अश्रुपात करते हैं। विधवाओं की संख्या हजारों में नहीं, लाखोंमें नहीं करोड़ों में है और उनकी अवस्था! अवस्था की समस्या तो और भी अधिक भयानक है। तेरह वर्ष, चौदह वर्ष अठारह वर्ष की नवयुवती बालिकायें और युवतियों विधवाओंके रूप मे! इतना ही नहीं पांच वर्ष, सात वर्ष, नव वर्ष और ग्यारह वर्ष की अबोध बालिकायें समाजमें अपनी संख्या दिनपर दिन बढ़ाती चली जा रही हैं! इस प्रकारकी संख्या लाखों मे नहीं करोड़ों की तादाद में है और समाज को अनाजके कीड़ों की भाति, भीतर ही भीतर खोखला कर रही है! सदाचार और नीति के पुजारी समाजमें आचार और नैतिक जीवनका स्वप्न देखते हैं किंतु समाज कहां पहुंचा है इसको देखने और समझनेके लिये आज उनकी आखों में न तो प्रकाश रहा है और न मस्तिष्क में बुद्धि!

समाज की अवस्था असंतोष पूर्ण है। एक ओर विधवाओं

की कुन्दन है और दूसरी ओर सौभाग्यवती स्त्रियों का विलास पूर्ण जीवन है ? एक ओर अभागिनि लड़कियों और युवतियों का हाहाकार है! और दूसरी ओर सौभाग्य का सुख भोगने वाले स्त्री पुरुषों का संगीत और नृत्य है ! परिणाम! परिणाम भयानक और अधःपतन का परिचायक है !

समाज की यह अवस्था सैकड़ों वर्षों से चल रही है। जिसके हृदयमें दुखियों के लिए दया है और जिसके नेत्रों मे विलाप करने वालों के लिये आंसू हैं। वे सबके सब समाज सुधार में लगे हैं ! किसी प्रकार विधवाओं के जीवन का संशोधन चाहते हैं। जो चेष्टायें सम्भव हो सकती हैं, समाज और देश के शुभचितकों के द्वारा काम में लायी जा रही हैं, परन्तु अभी तक लोहे की मजबूत जञ्जीरों से जकड़ी हुई पुरानी रूढ़ियों का कोई प्रतिकार नहीं हो रहा, विधवायें आज भी उसी संख्या में पुरानी रूढ़ियों के साथ बंधी हैं। कहीं एक-दो की संख्या में विधवाओं का उद्धार कुछ अर्थ नहीं रखता। आज की अवस्था यह है कि पुरानी रूढ़ियों की जंजीर का काटना और तोड़ना बहुत कठिन है।

विधवा स्त्रियोंके जीवन की समस्या बड़ी है। उसकी कहानियां बहुत कठिन हैं। और उसका इतिहास अधिक पुराना एवम् कलंक से पूर्ण है। इसके संबंध में अनेक विद्वानोंने अधिक-से अधिक लिखा है और जो कुछ लिखा है उसे समाज के सामने रखा है। मैंने यहा पर उस समस्या को लेकर संक्षेप में प्रकाश डाला है। इन थोड़े से पन्नों में उसके संबंध में लिखा ही क्या जा सकता है। यहाँ पर मैंने जो कुछ लिखा है, उसके द्वारा समाज के स्त्री-पुरुषों का ध्यान उसकी ओर खींचा है ।

मेरी बातें विचित्र हैं। सभी लोग मेरी सभी बातों को स्वीकार न कर सकेंगे, इस बात को मैं जानती हूं। फिर भी मैं जो सत्य समझती हूं, उसे सदा कहने और लिखने की चेष्टा करती हूं। इसी आधार पर मैं यहां पर स्पष्ट लिखना चाहती हूं कि स्त्री-जीवन की समस्याओं के संबंध में अपने यहा के अधिकांश पुराने ग्रन्थ मुझे अत्यन्त कड़वे मालूम हुए हैं। आज जो समाजमें विष फैला हुआ है, उसके कारण एक मात्र वे हैं। पुरानी कथायें और पुस्तकोंके प्रचार करने वाले, पण्डितोंकी कथा बहुत अनोखी है। उनके कार्योंको देखकर मैंने बहुत कुछ सोचा है और जब सोचा है, उस समय उसके कार्यों की अलोचना करने पर मुझे अनेक बातों का स्मरण आया है। अन्यायपूर्ण शासन के साथ जो काम पुलिस का हो जाता है और उससे प्रजा को जो कष्ट मिलता है, उसका चित्र मेरी आखों के सामने आ जाता है। विवेक हीन सरकार की पुलीस का जो कार्य होता है;ठीक वही कार्य पुरानी कथाओं और धार्मिक बातों के प्रचार करने वाले पंडितों का है। मैंने सदा पीड़ा के साथ उनके कार्यों को देखा और सुना है।

विधवाओं के संबंध मे जो कुछ मैंने लिखा है उसके साथ साथ एक प्रश्न यह पैदा होता है कि इस समस्या के जटिल होने का कारण क्या है? संसार मे हमारे देश की भाति न जाने कितने देश हैं और हिन्दू जाति की भाति न जाने कितनी जातियां हैं। किंतु किसी भी देश और जातिकी यह समस्या इतनीभयानक नहीं है जितनी हमारी जातिकी होगयी है इसका प्रमुख कारण क्या है!

कथा वाचक पंडितों ने जो धांधलेबाजी मचा रखी है उसपर यहां अधिक प्रकाश नहीं डालना चाहती। फिर

भी संयोगवश, एक-दो बातों का लिखना आवश्यक हो गया। है। सब से बड़ा आश्चर्य तो इस बात का है कि स्त्रीयों के अधिकारों के अपहरण करने, उन में अंधकार फैलाने और धर्म को लेकर झूठी बातों का प्रचार करने का कार्य तो पंडित करते हैं, स्त्रियों भक्तिभावसे प्रेरित होकर उन्हीं की बातों को सुनती हैं और उन की पूजा करती हैं।

कथा-वाचक पंडितोंने समाजमें विशेष कर स्त्री-समाज में इस बात का प्रचार करनेका प्रयत्न किया है कि जो स्त्रियां अपने जीवन में अमुक प्रकार के अपराध करती हैं वे दूसरे जन्ममें विधवा होती हैं। वे कथायें कह कर स्त्रियों को सुनाया करते हैं कि जो स्त्रियां अपने पति का अपमान करती हैं, वे दूसरे जन्म में विधवा होती हैं। वे सुनाया करते हैं कि स्त्रियां कभी धोखे मे भी अपने पतिको अप्रसन्न करती हैं,तो वे दूसरे जन्ममें विधवा अवस्था का दुख भोगती हैं। इसी प्रकार स्त्रियों में ये पंडित लोग प्रचार करते हैं जिस स्त्रीका पति अपनी पत्नी की सेवा सुश्रूषा से प्रसन्न नहीं रहता वह स्त्री दूसरे जन्ममें बालविधवा होती है। इस प्रकार से स्त्री समाज की आखों मे जिस तरह धूल झोंकने का कार्य किया जाता है यह अत्यन्त निन्दनीय है।

इस प्रकार की बातोंके प्रचार का उद्देश्य यह है कि स्त्रियां अपने पति की सेवा उनको देवता समझ कर करें। सब से बड़ी कठिनाई उन्होंने यह उतपन्न कर दी है कि जिस स्त्री ने अपने पतिके गन्दे पैरों को धोकर दस वर्ष तक दूध समझ कर चरणामृत का पान किया है यदि उसका पति उसके बाद पाच मिनट के लिये भी कभी अप्रसन्न होजाता है तो उस स्त्री को रौरव नरक प्राप्त होता है। इस प्रकारकी कथाओं से हमारी

सैंकड़ों पुस्तकों के पन्ने भरे हैं। इसप्रकारके ग्रन्थ केवल पंडितों के द्वारा ही लिखे गये हैं। इन्हीं ग्रन्थों का प्रचार आज हजारों और लाखों पडितों के द्वारा होता है।

इतना अश्लील प्रचार करने वाले पंडितों को फल क्या मिलता है, यह स्पष्ट है। उन्हें फल मिला है किन्तु काफी नहीं मिला। उन के अश्लील प्रचार का निर्णय नवीन संतति और विशेषकर देश की शिक्षित स्त्रियां करेंगी। उसी समय उसका उचित्त पुरस्कार भी दिया जा सकेगा यह निश्चित है।

जो पंडित इस प्रकार का पतित प्रचार करते है, उन के मुंह से कभी किसी ने एक बार भी नहीं सुना कि समाज की दूपित प्रथायें लड़कियों को छोटी अवस्था में ही विधवायें बनाने का कार्य करती हैं! वे नहीं बताते कि अनेक अवसरों पर विवाह की असंगत व्यवस्था और पूर्ण रूप से दहेज की निन्दनीय प्रथा युवती स्त्रियों के वैधव्य का कारण है!

सत्य और सही बातों को छिपा कर झूठी बातों का प्रचार करने वालों के कार्य जिस प्रकार पाप पूर्ण होते हैं, उसका फल और प्रायश्चित्त, निश्चित रूप से, उन्हें भोगना पड़ता है। एक अन्यायी राज्य का किसी दिन अंत होता है और दुखी जनता के दुर्भाग्य का किसी दिन नाश होता है। स्त्री समाज के नेत्र एक दिन खुलेंगे। उसी समय स्त्रियों को इस बात का ज्ञान होगा कि धर्म के नाम पर जो उन्हें युगों से पढ़ाया गया था और मानने के लिए विवश किया गया था, वह क्या था!

प्रत्येक सहृदय स्त्री पुरुष के हृदय में विधवाओं के प्रति सहानुभूति होनी चाहिए। सुखी और सौभाग्यवती स्त्रियों के अंत.करण में अपनी विधवा बहनों को देख कर एक

असह्य पीड़ा होनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता तो वह स्त्री मनुष्यत्व से वंचित होती है। आज देश की परिस्थितियाँ बदल रही हैं। राजनीतिक परतंत्रता मिट चुकी है इसलिए अत्यन्त निकट भविष्य में हमारा भविष्य सामाजिक जीवन में भी उन्नत बनेगा, इसकी आशा प्रत्येक अवस्था में हम सब को करनी चाहिए। लड़कियों और स्त्रियों की आज की शिक्षा स्त्री-समाज में जीवन पैदा करेगी और स्त्रिया स्वयम् अपनी परिस्थितियों का निर्णय करेंगी, वह दिन बहुत निकट आ रहा है। साथी ही यह भी निश्चित है की देश के नवीन जीवन में स्त्री समाज का स्थान ऊंचा बनेगा।

वैधव्य अवस्था के साथ पूर्व जन्म के अपराधों का संबंध जोड़ना न केवल मूर्खता है बल्कि स्त्री-समाज के साथ एक बहुत बड़ा प्रपंच है। जो स्त्रियाँ शिक्षित हैं, सौभाग्यवती हैं और इस प्रकार की बातों के समझने का ज्ञान रखती हैं, उनका धार्मिक कर्त्तव्य है कि दुख में पड़ी हुई अपनी बहनों को सहायता करने में वे आगे बढ़ें।

देश की विधवाओं के संबंध में सुधार करने के लिए कानूनों का आश्रय लेने की भी आवश्यकता है। जब तक विदेशी सरकार देश में रही, उस समय तक उसकी कोई आवाज न थी। किन्तु आज देश की राष्ट्रिय सरकार का कर्त्तव्य इस ओर जितना अधिक है, उस को सरकार स्वयम् समझती है, इसी लिए युगों से पुरानी रूढ़ियों के बोझसे स्त्री-समाज शीघ्र ही स्वतन्त्र होगा, इस प्रकार के विश्वास उत्पन्न हो चुके है।

स्त्रियों के अधिकार

स्त्रियाँ अपने अधिकारों से वंचित रखी गयी हैं, इस

वात ने मेरे हृदय में प्राय. एक पीड़ा उत्पन्न की है। स्त्रियों के प्रति अवहेलना की चरचा इस पुस्तक मे मैंने अनेक स्थानों में की है और अनेक रूप में उसकी आलोचना की है। यहाँ पर स्त्रियों के अधिकारों के सम्वन्ध मे एक विवेचना मेरे सामने है।

जीवन की छोटी-छोटी वातों में स्त्रियों को अधिकार-हीन वना कर रखने में समाज ने अपनी अच्छी नीति का परिचय नहीं दिया। यदि इसी वात को और अधिक स्पष्ट रूपमे कहना पड़े तो यह कहना अनुचित न होगा कि पुरुप-समाजने केवल अपने स्वार्थों के कारण स्त्रियों को अधिकार-हीन वना कर रखा है। पुरुपों के इस स्वार्थ मे शासन की स्पष्ट भावना रही है। उसके फलस्वरूप 'स्त्री-जीवन निर्वल और अयोग्य वना। साथ ही समाज को भी दुष्परिणाम भोगना पड़ा। इसके संमन्ध में अन्यत्र कुछ विस्तार पूर्वक लिखा जा चुका है। इसलिए यहां पर उस को दोहराने की आवश्यकता नहीं है।

स्त्रियों के अधिकारों की समस्या भी अत्यन्त मार्मिक और अनेक स्थलोंपर दुख पूर्ण है। अपना शासन वनाये रखने के लिये स्त्री-जीवन का निर्मांण उस वातावरण में किया गया जिसने स्त्रियों को विवेक हीन और निर्वल वना दिया। जव कभी उस वातावरण की खुली आलोचनायें की गयीं तो दूर-दर्शी पुरुपों ने उस के अनेक उत्तर देकर आलोचनाओं का मार्ग वन्द करना चाहा, परन्तु उन्हें सफलता न मिली। उन्होंने जो उत्तर दिये, उन सवका सत् और सार यह है कि स्त्रियों की रक्षा करने के लिए ही पुरुपों को एक सुरक्षित वातावरण वनाना पड़ा।

पुरुषों का उत्तर कितना सरल और बुद्धिमानी से भरा हुआ है। किसी पदार्थ को सुरक्षित रखने के लिए ऐसे स्थान पर रखा जाय जहाँ न ताजी वायु पहुँचती हो और न शुद्ध प्रकाश तो वह विशुद्ध न रह सकेगा। संसार का ऐसा कोई पदार्थ नहीं हो सकता जो एक लम्बा समय पाकर बिगड़ने न लगे। सजीव और निर्जीव—कोई भी अनावश्यक बन्धन नहीं चाहता। निर्जीव मशीन प्रकाश-हीन स्थानों में रहने के कारण अपनी साधारण गति मति में परिवर्त्तन करने लगती है। फिर एक मनुष्य प्राणी!

इस प्रकार की मीमाँसा यहां पर विस्तार नहीं चाहती। इसलिये कि उसे अन्यत्र स्थान मिल चुका है। यहा पर स्त्रियों के अधिकार से मेरा अभिप्राय है, सम्पत्ति से जिसका अधिकार पूर्ण रूप से स्त्रियों के हाथों में नहीं है। यह समस्या केवल हमारे सामाजिक जीवन की ही नहीं है, सरकारी कानून भी इसमें स्त्रियों के विरोधी हैं। इसलिये यह अवस्था सर्वदा विचारनीय है और देखना यह है कि किन परिस्थितियों में स्त्रियों को अपने अधिकारों से वंचित होना पड़ा है।

हमारे समाज की एक साधारण व्यवस्था यह है कि लड़कियाँ पिता की सम्पत्ति की अधिकारिणी नहीं होतीं। सम्पत्ति और रियासत का अधिकार लड़कियों को विवाह के बाद मिलता है। ससुराल की सम्पत्ति में पति का जो अधिकार होता है, उसकी पत्नी उसी की अधिकारिणी बनती है। समाज का यह एक साधारण नियम है। परन्तु यह नियम भी व्यवहारिक रूप में स्त्रियों के पक्ष में नहीं आता। पति के मरने के बाद स्त्री का हक पैदा होता है। एक तो यही बात समझ में नहीं आती। जब वह अपने पति की रियासत की

अधिकारिणी है तो ससुराल पहुँचते ही, अपने अधिकार के अनुसार रियासत पर उसका भी कानूनन वह अधिकार हो जाना चाहिये, जो उसके पति का होता है। थोड़ी देर के लिये मान लें कि पति के नाम ज़मीदारी है तो कहने सुनने में उस ज़मीदारी की उसकी स्त्री भी मालकिन समझी जाती है, परन्तु न तो कानून की दृष्टि में उसका कोई अधिकार रहता है और न व्यवहारिक रूप में।

स्त्री अपने आपको मालकिन समझती है। परन्तु अपनी इच्छा के अनुसार वह उस रियासत में कुछ कर नहीं सकती। पतिकी प्रसन्नता के द्वारा खाने-पीने और खर्च करने की अधिकारिणी होती है। किन्तु वहीं तक, जहां तक उसका पति उसे हाथ उठाकर दे देता है। आवश्यकता पड़ने पर पुरुष अपनी रियासत को बेच सकता, उस पर ऋण ले सकता है, परन्तु स्त्री यह कुछ नहीं कर सकती। इस प्रकार उसका अधिकार एक मन बहलाव की वस्तु के रूप में है। अधिक कुछ नहीं।

पति के मरने के बाद उसकी स्त्री का नाम रियासत पर सहज ही नहीं आता। यदि स्त्री के लड़का होता है तो पिता की रियासत का वह अधिकारी होता है। इतना ज़रूर है कि स्त्री यदि चाहती है तो लड़कों के नाम के साथ-साथ उसका भी नाम रियासत पर आ जाता है। यह केवल इसलिये कि जिसमें वह अपना जीवन निर्वाह का अधिकार रख सके। इसके सिवा न तो वह रियासत बेच सकती है और न उस पर ऋण ही ले सकती है।

लड़का न होने की अवस्था में स्त्री के अधिकार की और भी छीछालेदर होती है। पति के सगे-सम्बन्धी भाई और

भतीजे उस पर अधिकार करते हैं और स्त्री को बड़ी-से-बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। सरकारी कानूनों में भी स्त्रियों को केवल इतना ही अधिकार मिला है कि वे खाने-पीने की अधिकारिणी हैं। इस प्रकार का सरकारी नियम स्त्रियों की कोई सहायता नही करता। रियासत के अधिकारियों के ऊपर उनका निर्वाह निर्भर होता है। अदालतों की शरण लेने पर भी स्त्रियों का अधिक लाभ नहीं होता। कभी कभी तो उन्हें पूर्ण रूपसे अनाथ अवस्थामें रह जाना पड़ता है।

पति की सम्पति और रियासत पर स्त्री का अधिकार उस समय पैदा होता है,जब वह मर जाता है और पतिका कोई सगा अधिकारी नहीं होता। अपने लड़कों के अभाव में स्त्री उस रियासत की एक मात्र मालकिन बनती है। इस प्रकार स्त्रियों के अधिकारों का प्रश्न बहुत गूढ़ है। समाज की यह व्यवस्था स्त्रियों के सम्बन्ध में अच्छी नहीं है। इस प्रकार की बातों का साधारण और व्यावहारिक अर्थ तो यही होता है कि लड़कियाँ और स्त्रियों का कहीं पर कोई अधिकार नहीं होता। इसके सम्बन्ध में समाज के नियम और सरकारी कानून सर्वथा निन्दनीय हैं।

स्त्रियों के अधिकारों का एक पहलू और है, उसे भी मैं प्रकाश में लाना चाहती हूं। बहुत कम परिस्थितियों में रियासतों पर अधिकार स्त्रियों को मिलता है। और यदि सौभाग्य से अधिकार प्राप्त होता है तो बहुत कम स्त्रिया अपनी सम्पति और रियासत की रक्षा कर पाती हैं, यह बात भी सत्य है।

स्त्रियों के अधिकारों को यदि समाज ने छीना है तो समाज ने अच्छा नहीं किया। साथ ही यदि स्त्रिया अपनी

सम्पति और रियासत की रक्षा करने में अयोग्य और असमर्थ हैं तो स्त्रियों के लिए भी यह एक बड़े कलक की बात है। इस कलक को न तो कभी भुलाया जा सकता है और न उस पर धूल डाली जा सकती है। स्त्रियां अपने अधिकारों को प्राप्त कर सकें, यह अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु उससे भी अधिक आवश्यक यह है कि वे अपनी सम्पति और रियासत की पूर्ण रूपसे रक्षा कर सकें। इसके सम्बन्ध मे स्त्रियों की क्या निर्वलता होती है, उसका समझना और जानना प्रत्येक स्त्री के लिये बहुत जरूरी है। इसीलिये मैं उसे आवश्यकतानुसार विस्तार देना चाहती हूं।

प्रत्येक स्त्री का यह धर्म है कि वह इस प्रकार की बातों पर अधिक-से-अधिक विचार करे। मैं उन्हें स्पष्ट बताना चाहती हूं कि जीवन का विकास सुख और स्वतन्त्रता चाहता है। बन्धन मे बुद्धि और आत्मा का विकास नहीं होता। परन्तु इसके साथ-साथ संकुचित भावना और निर्वलता घातक होती है, इस बात को हमें कभी न भूलना चाहिये। स्त्रियाँ अपनी, अपनी सम्पति की और रियासत की रक्षा नहीं कर सकतीं, यह बात अनेक अंशों मे सत्य भी है, समाज की एक दो नहीं, सैकड़ों घटनायें इसका प्रमाण देती हैं। यदि स्त्रियाँ बुद्धि और अपने आत्मा से काम नहीं ले सकतीं तो मिलने वाली स्वतन्त्रता उनको मिटाने का ही काम करेगी।

किसी मूल्यवान वस्तु को पाने के पहले यदि उसकी सुरक्षा का उपाय पहले से हो जाता है तो अधिक अच्छा होता है। यदि ऐसा न हुआ तो एक निर्वल मनुष्य उसकी रक्षा न कर सकेगा। यह अरक्षित अवस्था और भी अधिक घातक और कलंक-पूर्ण होती है। अपनी निर्वलता और

अनुभव-हीनता को हमें सबसे पहले समझना चाहिये। उसके बाद हमें आगे कदम बढ़ाना है। एक परतंत्र देश स्वतन्त्र होने के लिये वहीं तक अधिकारी है, जब तक वह अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने की शक्ति रखता है, अन्यथा उसका परतंत्र रहना ही अच्छा है। निर्बलता में स्वतंत्रता अधिक भयानक और घातक हो जाती है। इस बात को सभी प्रकार सोचने की जरूरत है।

अपनी कमजोरी और खराबी को सुन कर बिगड़ जाने से काम न चलेगा। झूठे उत्तर देने से अपना लाभ न होगा। प्रत्येक अवस्था में हमें अपने आप को समझने की जरूरत है। हमें ध्यान पूर्वक अपनी मानसिक अवस्था का अध्ययन करना पड़ेगा और इस निर्णय पर आना पड़ेगा कि कोई भी निर्बलता हमारे जीवन में क्यों है।

स्त्रियोंके अधिकारों के सम्बन्ध में हमें कभी यह न भूलना चाहिये दि हम अनुभव-हीन और निर्बल हैं। हमारे जीवन की मूल्यवान सम्पति यदि हमसे कोई छीन सकता है तो इसका अर्थ यह होता है कि हम वास्तव में उस के योग्य नहीं हैं। मै कुछ घटनाये देकर इस बात को और भी स्पष्ट करना चाहती हूं। बहुत-सी घटनाए इस बात की साक्षी हैं कि पाई हुई सम्पति को स्त्रियां सुरक्षित नहीं रख सकीं। इसके सम्बंध में कुछ उदाहरण आवश्यक हैं।

शहर की एक घटना है, एक मनुष्य की मृत्यु तीस वर्ष की अवस्था में हुई। मरने के बाद वह अपना एक अच्छा मकान अपनी स्त्री के लिये छोड़ गया। कई एक किरायेदार उस में रहते थे। उस की स्त्री साधारण पढ़ी-लिखी थी। उस की गोद में लग भग ढाई-तीन सालका बच्चा था। पति के मर

जाने पर उस मकान की मालकिन बनी। उसके प्रबंधका भार उसके सिर पर आया। किराये से जो रकम वसूल होती थी, उससे एक अच्छे परिवार का निर्वाह हो सकता था।

कुछ दिनों के बात उस स्त्री का सम्पर्क एक आदमी से हुआ। उस के व्यवहारों से वह स्त्री बहुत प्रसन्न हुई। मकान की देख-भाल और जरूरी प्रबन्ध वह करने लगा। आदमी समझदार और बहुत दूरदर्शी था। उस स्त्री के विश्वास को प्राप्त करने में वह लगातार सफल हुआ। फल यह हुआ कि मकान के किराये की रकमसे उस आदमी ने अधिक लाभ उठाया। किन परिस्थितियों मे ऐसा हुआ, इसे कोई दूसरा न जान सका। चार वर्ष के भीतर-भीतर टोला और पड़ोस के लोगोंने सुना और जाना कि वह विशाल भवन स्त्री के हाथ से निकल कर उस आदमी के पास चला गया, जिस पर वह बहुत विश्वास करती थी। टोला-पड़ोसियों को इस पर आचर्श्य हुआ।

कुछ दिन और बीते उस स्त्री और पुरुष के बीच का सम्बत्व विगड़ने लगा। आदमी के व्यवहारों में अन्तर पड़ने लगा! थोड़े दिनों के वाद देखने और जानने वालों ने देखा और जाना कि उस आदमी ने उस स्त्री से अपना सम्बन्ध तोड़ दिया। फल स्वरूप वह स्त्री दिन-पर-दिन दुखी और दरिद्र होने लगी। आगे चल कर उसकी हालत और भी खराव हो गई उस को दूसरे की मेहनत और मजदूरी करके अपना जीवन निर्वाह करना पड़ा। उस स्त्री का पति जो एक बहुत बड़ा मकान छोड़ गया था, उसमें उसकी पत्नी को अधिक दिनों तक लाभ न हुआ। उसका लाभ एक, दूसरे ही आदमी को मिला।

एक दूसरी घटना इस प्रकार है—एक शिक्षित युवक जमींदार ने अपनी रियासत का बटवारा भाइयों से करवाया और एक पक्के और खूब सूरत मकान में अपनी पत्नी को लेकर वह रहने लगा। कई वर्ष सुख पूर्वक बीते। अकस्मात् उसकी मृत्यु हैजे की बीमारी में हुई। पति के मर जाने पर बाईस-तेईस वर्ष की युवक स्त्री विधवा हो गयी।

रिसायसत अच्छी थी। उसका प्रबन्ध करने के लिये उसने एक कारिंदा रखा। किंतु थोड़े दिनों के बाद उसने उसे हटा दिया और उसके स्थान पर दूसरे आदमी ने काम करना आरम्भ किया। नये आदमी के व्यवहारों की शिकायत स्त्री के परिवार के लोगों ने की, जिसका उलटा प्रभाव उस युवती पर पड़ा। कहने-सुनने वालों की उसने कुछ परवाह न की। जिस दूसरे आदमी को उसने कारिंदा बना कर रखा, उसकी आंखों से उसने देखा और उसी पर उसने विश्वास किया।

वह आदमी बहुत चालाक और धूर्त था। किसी पैसे वाली स्त्री को कैसे ठगा जाता है और उसकी सम्पत्ति को कैसे लूटा जाता है, इस कला को वह बहुत जानता था, उस ने इस युवती विधवा पर अपना विश्वास कायम करने की कोशिश थी। इसमें उस को सफलता मिली। इस के बाद उस स्त्री की सम्पत्ति से वह अपना घर भरने लगा। इस प्रकार की परिस्थितियां उसने उत्पन्न कर दीं कि जिनमें अधिक-से-अधिक रुपये का खर्च हुआ और उसमें से अधिक रुपये उसके घरमे गये। इस प्रकार उस ने बहुत बड़ा लाभ उठाया।

एक बार उस धूर्त आदमी ने किसी आदमी को साथ ले जाकर अपनी मालकिन से कहा—यह बहुत अच्छे आदमी

हैं। यहाँ से कुछ दूरी पर अमुक गांव में रहते हैं। इनके लड़के का विवाह है। आप से कुछ सोने के जेवर चार-पांच दिनों के लिये मागने आये हैं।

उस युवती ने कहा—मैं इनको जानती नहीं हूं।

कारिंदा ने कहा—जी हां, आप नहीं जानती हैं। इन्हें जानने का आपको मौका नहीं मिला। बाबू जी (उस युवती का पति) जब जीते थे तो ये उनके पास आया करते थे और बाबू जी इनको बहुत मानते थे। रियासत के बटवारे के झगड़ेमे इन्होंने बाबू जी का जिस प्रकार साथ दिया था, उतना कोई दूसरा दे नहीं सकता।

युवती ने पूछा—आप इनको खूब जानते हैं ?

उसने कहा—बहुत अच्छी तरह ! ब्राह्मण हैं, पैसे वाले है। गरीब और भिखारी नहीं हैं। बाबू जी के साथ जो इनका प्रेम था, उसी के कारण मैं इनकी सिफारिश आपसे कर रहा हूं। आप किसी प्रकार का सन्देह न करें।

फल यह हुआ कि उस युवती स्त्री ने जेवरों का देना स्वीकार कर लिया। कारिन्दा को मालूम था कि अधिक-से-अधिक कीमती आभूषण कौन हैं। उसने पहले से ही उसको बता रखा था। सोने के उन आभूषणों को उस आदमी ने मांगा ता उस स्त्री ने कुछ संकोच किया। यह देख कर उस के कारिन्दा ने उसे विश्वास दिलाया। नतीजा यह हुआ कि ग्यारह हजार के सोने के आभूषण उसने उस को निकाल कर दे दिये।

आभूषण ले जाने वाला व्यक्ति उस कारिन्दा का ही एक आदमी था, जिसका कोई सम्बन्ध उस स्त्री के आदमी से न था। इस प्रकार वह सोने के जेवर कारिन्दा के अधिकार

हो गये। एक सप्ताह के बाद स्त्री को सुनने को मिला कि जो आदमी मेरे आभूषण ले गया था, उसके यहां चोरी हो गयी है और जो कुछ चोरी में गया है, उसमें सब के सब मेरे आभूषण चले गये।

इस दुर्घटना की बातें कुछ दिनों तक होती रहीं, परन्तु धीरज धारण करने के सिवा उस स्त्री के पास और कुछ उपाय न था। इसी तरह की और भी अनेक घटनाओं के द्वारा उस कारिन्दा ने उसकी सम्पत्ति लूटी और उसे बहुत बड़ी क्षति पहुँचाई।

स्त्री के परिवार के लोगों को जब ये सब बातें मालूम हुईं तो जबरदस्ती बांटी हुई रियासत को उन्होंने अपने अधिकार में ले लिया। स्त्री अकेले अपने मकान में रहने लगी। कुछ दिनों के बाद, उसने अपना आना-जाना भी बन्द कर दिया। अनेक प्रकार की कठिनाइयों में पड़ कर उस युवती विधवा को अपने गरीब माता-पिता के यहां चला जाना पडा और जिस प्रकार की कहानियाँ लोगों को सुनने को मिलीं, उन के बदले मे लोगों की गालियाँ ही उसे प्राप्त हुईं।

एक साधारण परिवार की बात है। पच्चीस-छब्बीस वर्ष की अवस्था में एक स्त्री विधवा हुई। उसका पति बहुत साधारण परिवार का आदमी था। उसकी विधवा पत्नी अपने पिता के साथ जाकर रहने लगी। पिता ने उस की वैधव्य अवस्था से दुखी होकर, अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति उसे सौंप दी। इस प्रकार उस के दिन बड़े सुख के साथ कटने लगे।

उस विधवा स्त्री के एक जेठ था। वह उसके यहां आता

जाता था। स्त्री की माली हालत देख कर जेठ ने उस को अपने अधिकार में करना चाहा। उस ने उस को प्रसन्न रखने की चेष्टा की। यही हुआ भी। कई वर्षों तक वह सुख पूर्ण दोनों का सम्बन्ध चला। इस सम्बन्ध से उस के जेठ ने बहुत लाभ उठाया। उस विधवा को पिता से जो सम्पत्ति मिली थी, वह धीरे-धीरे उसके जेठ के पास आने लगी। अपने व्यवहार और वर्त्ताव से जेठ ने कभी उसे कुछ सोचने का औसर नहीं दिया।

उस विधवा स्त्री के पास जितना नकद रुपया और जेवर था उसके जेठ ने ले लिया। स्त्री का हाथ खाली हो गया। इसके बाद उसके जेठ ने वहाँ आना-जाना बन्द कर दिया। उसे बुलाने के लिये उसने बार-बार पत्र भेजे, परन्तु वह नहीं गया। उसने और भी उपाय किये, लेकिन उसके जेठ पर कोई प्रभाव न पड़ा। कई बार वह विधवा स्त्री उसके पास तक आयी, परन्तु उसके जेठ पर कोई प्रभाव न पड़ा, परन्तु उसके जेठ ने बड़े रूखेपन का व्यवहार किया। वह रो कर लौट जाती रही। उसकी आर्थिक अवस्था अब बहुत खराब हो गयी थी, उससे जेठ ने जिस प्रकार लाभ उठाया, इस बात को बहुत से लोग जानते थे। इसीलिये किसी की सहानुभूति भी उसे प्राप्त न हुई। फल यह हुआ कि उसको अपना शेष जीवन जिस दरिद्रता मे बिताना पड़ा, उसको उसने स्वयम् जाना और रो-रो कर अपने दिन काटे।

इस प्रकार के उदाहरण एक-दो नहीं, दस-बीस नहीं, बहुत से हैं। स्त्रियों की यह निर्बलता उनके लिये बड़ी भयानक है। उनकी इस कमजोरी से समाज अपरिचित नहीं है, स्त्रियों की इन त्रुटियों को एक बड़ी संख्या में पुरुष जानते हैं।

इसीलिये वे सावधान रहने की भी चेष्टा करते है।

स्त्रियों की इन त्रुटियों के कारण हैं। वे संसार की इन बातों से सदा दूर रखी जाती हैं, इसका फल यह होता है कि उनको इस प्रकार की दुर्घटनाओं का कुछ अनुभव नहीं होता। अनुभव और ज्ञान होने पर ही मनुष्य बुद्धि से काम लेता है और दूसरों के छल और प्रपंच से सदा बचने की कोशिश करता है।

सांसारिक बातों से यदि स्त्रियाँ अलग न रखी जांय तो ससार को समझने का उन्हें ज्ञान हो और समय पड़ने पर वे अपनी और अपनी सम्पति की रक्षा कर सकें। वास्तव में स्त्री-जीवन की यह निर्बलता बहुत भयानक है। इन बातों का स्त्रियों को ज्ञान होना बहुत आवश्यक है। इसके सम्बंध में लोग बड़ी भूलें करते हैं। सांसारिक जीवन से सम्पर्क न होने के कारण ही स्त्रियां इस प्रकार निर्बल और अनुभव हीन बन गई हैं। इसे जितनी जल्दी बदला जा सके, उतना ही अच्छा है।

हमारे जीवन का एक अपराध भय

मनुष्य-जीवन का अध्ययन करने वाले इस बात को स्वीकार करेंगे कि जितने अपराध और पाप होते हैं, भय उनमें से एक है। इसकी गंभीरता पर यदि अधिक विचार किया जाय, तो यह कहना अनुचित न होगा कि भय हमारे जीवन का एक भयानक अपराध है।

डरने और भयभीत रहने की आदत अच्छी नहीं होती! बुद्धिमान मनुष्य डरपोक आदमी को अच्छी दृष्टि से नहीं देखते। डरने वाला मनुष्य समाज में कभी आदर नहीं पाता। इतना ही नहीं, डरपोक और भयभीत का कोई

विश्वास भी नहीं करता। जीवन का भय न अपने लिये अच्छा होता है और न दूसरों के लिये। वह एक पतित अपराध है जो हृदय और आत्मा को सदा निर्बल बनाने का काम करता है। यह निश्चित है।

जो भय इतना अपराधी है, उसके कितने रूप मनुष्य के जीवन में काम करते हैं; उन पर दृष्टि डालना हमारे लिए आवश्यक है। शिष्टाचार और सद्व्यवहार दूसरी बात है। भयभीत रहना एक दूसरी चीज है। भय और शिष्टता का कभी मेल नहीं हो सकता और न दोनों को कभी एक समझा जा सकता है।

एक मनुष्य कहीं नौकरी करता है। जिसकी नौकरी करता है, उससे भयभीत रहता है। क्यों, इसका कारण समझ में नहीं आता। नौकरी करते हुए बुद्धिमानी और परिश्रम के साथ अपना काम करना एवम् मालिक तथा मालिकों के प्रति सदा शिष्ट बने रहना नौकर का एक कर्त्तव्य होता है। भयभीत रहने का कोई कारण नहीं है।

यदि इस भय की छान बीन की जाय तो समझ में आवेगा कि बुद्धि हीन और कर्तव्य से परे नौकर ही मालिक के साथ भयभीत रहा करते हैं। साधारण परिस्थिति के मनुष्य प्रायः घण्टों जमीदारों और अफसरों से भयभीत रहते हैं। इस प्रकार डरने वाले मनुष्य अपने मन में भले ही अपने को अच्छा समझते हों, परन्तु जिनसे वे डरते रहते हैं, वे भी उनको अच्छा नहीं समझते। इसका नतीजा यह होता है कि डरपोक मनुष्य अपना सम्मान खो बैठते हैं।

हमें इस बात को कभी न भूलना चाहिए कि भय हमारे जीवन का एक अपराध है, बिना अपराध के कभी भय नहीं

उत्पन्न हो सकता। यह स्वाभाविक है। इस अवस्था में यदि मनुष्य अपराधी नहीं है तो वह किसी दूसरे के साथ भय-भीत क्यों रहा करता है! बहुत-कुछ सोचने के बाद भी, भयभीत रहने का कोई कारण नहीं दिखाई देता। बिना किसी कमजोरी के भय का उत्पन्न होना पूर्ण रूप से अस्वा-भाविक है। यदि बिना किसी त्रुटि के भयभीत रहने की आदत स्वभाव में है तो स्पष्ट समझना चाहिये कि उसका वह भय उसके लिये स्वयम् अपमान का कारण है"।

जो भय इतना भयानक और अपराधी है, उस के साथ स्त्री-जीवन का क्या सम्बंध है, इस पर विचार करना मेरा मूल उद्देश्य है। साधारण तौर पर इस पर दृष्टि डालने से यह स्वीकार करना पडता है कि भयभीत रहना स्त्रियों का एक स्वभाव है, यह कभी भी अच्छा नही है। इस पर एक-दो बार नहीं, अनेक बार मैंने विचार किया है। परन्तु कोई सन्तोपजनक निर्णय समझ में नहीं आता कि स्त्रियों को भयभीत क्यों रहना चाहिये ?

घर से लेकर बाहर तक और बच्चों से लेकर वृद्धों तक वे सभी से डरती रहती हैं। मैंने तो चालीस वर्ष की एक स्त्री को उसी के नवयुवक लड़के के द्वारा डाट खाते हुए देखा है और देखा है उस स्त्री के बिना किसी अपराध मे, यदि स्त्री का लड़का ही साधारण बात-चीत में भी अपनी माँ को डाट देता है तो माँ चुप हो जाने के सिवा और कुछ कर ही नहीं सकती। ऐसे मौकों पर मैंने बहुत विचार करके देखा है। मैंने यह समझने की चेष्टा की है कि उस स्त्री का क्या अपराध हुआ, जिसके कारण अपने ही लड़के की डाट खानी पड़ी। मेरी समझ में कुछ नहीं आया।

इसी प्रकार सयानी लड़कियाँ, देवर, जेठ, सास और ससुर भी स्त्रियों को प्रायः डाँटा करते हैं और वे फटकार पाकर चुप हो जाती हैं। इसलिये नहीं कि वे कोई बड़ी भूल कर रही हों, बल्कि इसलिये कि जहाँ एक ओर किसी को भी डाँटने और फटकार बताने का अधिकार है, तो दूसरी ओर चुप हो जाने और सहन करने में स्त्रियां अपना हित समझती हैं।

यह बात मेरी समझ में कभी नहीं आयी। किसी को डाटने का क्या अधिकार है और यदि ऐसा करता ही है तो उस के साथ इतनी भीरु और डरपोक बन जाने के लिये स्त्रियों को क्या जरूरत है! मेरी इस बात को जान कर कोई भी कह सकता है कि इसमें हानि क्या है, स्त्री का बिगड़ क्या जाता है।

हानि क्यों नहीं है। इस प्रकार के व्यवहारों और स्वभावों ने ही स्त्रीके जीवन में सदा-सर्वदा के लिए डर और भय उत्पन्न कर दिया है। किसी भूल और अपराध के होने पर वह भयभीत हो, यह भी आवश्यक नहीं है। अपनी किसी त्रुटि और भूल को समझ लेना स्वयम् भविष्य के लिए सुधार लेना दूसरी बात है। किन्तु भयभीत हो जाना कुछ दूसरा ही अर्थ रखता है। मैंने डर और भय को कभी भी अच्छा नहीं समझा और न वह कभी अच्छा हो ही सकता है।

यह डर और भय मनुष्य को सदा-सर्वदा के लिये निर्बल ही नहीं बनाता, उसकी आंखों में भी उसे अपराधी बनाता है। भयभीत रहने की आदत जीवन का एक भयानक, पाप होता है, जिस के फल स्वरूप सदा डरने वाला मनुष्य दूसरे के नेत्रों में तो गिर ही जाता है, अपनी दृष्टि में भी

वह अपना सम्मान भूल जाता है! यह भयानक पाप है। स्वभाव में इस अपराध के कुछ दिन बने रहने पर मनुष्य अपमान और सम्मान का भेद कभी अनुभव नहीं करता। इतना ही नहीं। सत्य और असत्य, कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य एवम् अनेक स्थानों पर उसकी बुद्धि में पाप और पुण्य का कोई विशेष अन्तर नहीं रहता! इससे अधिक एक मनुष्य के जीवनका अपराध और क्या हो सकता है!

स्वयम् डरना और किसी को डराते रहना—दोनों पाप और अपराध हैं! स्वयम् डरकर एक मनुष्य अपने आप को अपराधी और पापी बनाता है और दूसरे को डरा कर सदैव के लिए एक मनुष्य उसे कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य के समझने में अयोग्य बना देता है। मेरा अध्ययन मुझे बताता है कि डरने वाला, डरने का स्वभाव रखता है, वह कभी भी अपनी भूलों के समझने का वास्तविक ज्ञान नहीं प्राप्त करता। इसी लिए वह बार-बार अपराध करता है।

मैं खूब जानती हूं कि भय के साथ स्त्रियों के जीवन का विशेष सम्बन्ध है। वे घर के लड़कों से डरती हैं, नौकरों से भयभीत रहती हैं। अपने ही आदमियों से भय खाती हैं और किसी भी मनुष्य, किसी भी पुरुष से भयभीत रहने का वे स्वभाव रखती हैं। यह स्वभाव उनका बहुत मजबूत बन आया है। इतना मजबूत कि उनके स्वभाव का प्रभाव उनकी सन्तान में जाता है और उनके जीवन में बराबर काम करता है।

इस भय का मैं सदा विरोध करती हूं। मेरी समझ में इस की आदत अच्छी नहीं है। डरपोक मनुष्य, मनुष्यत्व खो देता है और अपने जीवन के साधारण अधिकारों से भी

वञ्चित हो जाता है। कितने ही लोग इसे अनुभव नहीं करते और बातें होने पर बहस करने लगते हैं। एक बार एक स्कूल के वयोवृद्ध अध्यापक ने मेरी बातों का विरोध करते हुए कहा—

आपका क्या यह अभिप्राय है कि मनुष्य भूल भी करे और डरे भी नहीं ?

मैंने कहा—जी नहीं। मेरा अभिप्राय ऐसा नहीं है।

'तो फिर क्या है।'

'मेरा अभिप्राय स्पष्ट यह है कि भूल करने पर मनुष्य अपनी भूल को समझने की कोशिश करे। न कि वह किसी मनुष्य से डरने लगे।'

अध्यापक जी की समझ में मेरी बात न आयी। उन्हों ने कहा—अपराध करने वाला यदि डरता नहीं, तब तो वह एक प्रकार उद्दण्ड बन जाता है।

मैंने आदर पूर्वक उनसे कहा—यह बहुत बड़ा भ्रम है।

अध्यापक जी मेरी बात को सुनते रहे। मैंने फिर कहा—डरना और अपनी भूल को बार-बार अनुभव करना दो बातें हैं। ये दोनों बातें एक साथ नहीं रहतीं। डरने वाला अपनी भूल को समझने की चेष्टा नहीं करता। उसका काम तो डरने से चल जाता है।

मेरी बात की गहराई मे अध्यापक जी न पहुँच सके। वे कहने लगे —मैं अपने विद्यार्थियों को पढ़ाता हूं। यदि वे मुझसे डरें नहीं तो कोई अच्छी बात नहीं सीख सकते।

उनकी बात मेरी समझ में नहीं आयी, मैंने कहा—आप अध्यापक हैं। इतनी बड़ी अवस्था तक आपने यही काय किया है। इसकी गंभीरता आपको अधिक समझनी चाहिए।

यदि आपने अपने विद्यार्थियों को डरपोक बनाना ही सिखाया है तो अपने समाज और देश के प्रति एक अक्षुन्य अपराध किया है।

उन्होंने पूछा—यह कैसे ?

मैंने कहा—यह तो बिल्कुल स्पष्ट है। भय जीवन की एक कायरता है। भूल न करना एक और बात है। कायर मनुष्य अपने अपमान को एक पीड़ा के रूप में अनुभव नहीं करता जब अपमान से कष्ट नहीं होता तो वह भूल करने से नहीं डरता। वह उससे डरता है जो उसके साथ कठोर व्यहार करता है।

अध्यापक जी मेरी बात को सुनते रहे। मैंने फिर कहा-भय उत्पन्न करने के स्थान पर विद्यार्थियों में साहस उत्पन्न करना आपका कार्य है। छोटे बच्चों को अथवा नवयुवकों को डरपोक बना कर आप देश और समाज को डरपोक बनाने का कार्य करेंगा।

इस विषय को लेकर अध्यापक जी से बड़ी देर तक मेरी बातें होती रहीं, डर और भय की मैंने कड़ी आलोचना की और सम्मान पूर्वक मैंने उन्हें समझाने का प्रयत्न किया कि डर हमारे आत्मा का एक कलुषित स्वभाव है। भयभीत मनुष्य कभी कोई अच्छा काम नहीं कर सकता। और न सत्य का पक्ष लेकर अनुचित बातों का विरोध ही कर सकता है।

मैं स्त्रियों के भय की बात लिख रही थी। यहां पर मुझे उसी की आलोचाना करना है। स्त्रियों के स्वभाव में अनेक प्रकार के भय मुझे देखने को मिलते हैं, उनसे मुझे ग्लानि मालूम होती है। मैं जानती हूं कि भूल सभी करते

हैं। एक साधारण मनुष्य से लेकर महान आत्माओं तक जितने जीवन चरित्र मिलेंगे, सभी में भूलें दिखाई देंगी। एक साधारण मनुष्य और महान आत्मा में इतना ही अन्तर होता है कि मामूली आदमी अधिक भूलें करता है और उनका संशोधन नहीं कर पाता। किन्तु विद्वान और महापुरुष भूलें कम करते हैं और जो कुछ करते हैं, उसका भली प्रकार संशोधन कर लेते हैं।

मैंने देश की ही नहीं विदेशी स्त्रियों के जीवन को भी देखा है। शिक्षा और स्वतंत्रता के साथ-साथ जहाँ निर्भयता होती है, वहा भूलें कम होती हैं। मैंने विदेशी स्त्रियों में जो साहस पाया है, उसका अभाव मैंने अपने में अनुभव किया है। मैं साहस पूर्वक यह कहना चाहती हूं कि अपराध की अपेक्षा डर और भय में अधिक पाप होता है। इसी लिए यह स्वभाव अच्छा नहीं है। यह हमे कभी न भूलना चाहिए।

हमारे समाज की स्त्रियोंके भय ने उन्हें बहुत निर्बल बना दिया है। भयके कारण बढ़ती हुई निर्बलताने उन्हें शक्ति-हीन और साहस-हीन बनाया है। परिणाम यह हुआ है कि वे मनुष्यों से ही नहीं, दीवारों से, अंधकार से और कीड़ों-पतिंगों से भी डरती हैं। इस प्रकार का डर उनके जीवन का एक अपराध बन गया है।

इस भय को हमे एक अपराध समजना चाहिए और जिस प्रकार हो सके, अपने हृदय और आत्मा से इस को निर्मूल करने का सदा प्रयत्न करना चाहिए।

गुण्डे और दुराचारी

समाज में शिष्टाचार और सदाचार का स्थान बहुत ऊंचा है। मनुष्य में शिक्षा और सभ्यता जितनी बढ़ती जाती है,

आचारण का महत्व उतना ही उन्नत होता जाता है।

शिष्टता और सदाचार स्त्रियों का स्वाभाविक गुण है। मेरा ऐसा विश्वास है कि पुरुष-समाज सदाचार की शिक्षा पाकर भी उतना शिष्ट और सदाचारी नहीं बन पाता, जितनी शिष्टता और सदाचार-परायणता लड़कियों और स्त्रियों में अपने आप होती है। इस अवस्था में भी समाज ने सदाचार का बोझ स्त्रियों के सिर पर ही रखा है और उसके जीवन को उसने बहुत सीमित बनाने की चेष्टा की है। इससे समाज को कुछ अधिक लाभ नहीं हुआ। यदि सदाचारिता का बन्धन पुरुष समाज पर भी होता और उतना ही होता, जितना कि स्त्रियों पर रख गया है तो समाज उसके नाम पर, आज अधिक उन्नत होता।

सामाजिक जीवन में जहां एक ओर सदाचार है, वहीं पर दूसरी ओर दुराचार भी है, सदाचारियों ने यदि समाज के जीवन को सफल बनाने की चेष्टा की है तो दुराचारियों ने उसके मिटाने का प्रयत्न किया है। इसीलिए यह स्वीकार करना पड़ा है कि समाज के जीवनमें दोनों का अस्तित्व है। साथ ही यह भी स्वीकार करना पड़ता है कि सदाचारियों की अपेक्षा गुण्डों और दुराचारियों की संख्या अधिक है।

स्त्रियाँ समाज का अंग हैं। उतना ही महत्वपूर्ण अंग हैं। जितना कि पुरुष। इस अवस्था में समाज के गुण्डों और दुराचारियों से वे अधिक दूर नहीं हैं। दूरी का कारण इतना ही है कि प्रकृति ने स्त्री-जीवन में शिष्टता और सुन्दर आचरणों की एक स्वाभाविक भावना उत्पन्न की है।

यह दूरी अपना अधिक अर्थ नहीं रखती। यदि हमारे आस-पास आग है तो उसका स्पर्श हो जाना अथवा कभी

निकट आ जाना आश्चर्य जनक नहीं है। समाज स्त्रियों में कुछ और ही देखना चाहता है। वे गुण्डों से घृणा करें— आचारहीनों पर उनकी दृष्टि न पड़े, समाज का यह अभिलाषा है। इसीलिये इन पृष्ठों मे गुण्डों और दुराचारियों पर कुछ प्रकाश डालना मैंने आवश्यक समझा है।

स्त्री और पुरुष का वही सम्बन्ध है, जो सम्बन्ध हमारी दोनों आखों का। हमारे दोनों हाथों का और हमारे दोनों पैरों का। इनमे कोई एक दुर्बल नहीं है, दूसरा बलवान नहीं है। दोनो की समान अवस्था है। जो अन्तर है, वह है समाज की भावना और व्यवस्था का।

स्त्री और पुरुष, एक दूसरे से जुदा नहीं है। घर-घर और स्थान-स्थान पर दोनों का मिश्रित जीवन मिलेगा। उस जीवन मे दिखायी पड़ेगा कि पुरुष स्त्रियों को सदाचार की देवी के रूप में देखना चाहता है। इसके संबंध में उसकी क्षण-भरकी भूल उसे सहन नहीं है। परन्तु आप! आप तो, आप हैं! सदाचार के शिक्षक हैं, शासक हैं। मैं यहाँ पर उसकी अधिक आलोचना न करूंगी। मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि सभी पुरुष एक से हैं, परन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि सदाचार का बंधन पुरुषों के साथ कम है। इसीलिए आज समाज में, उन की संख्या अधिक है, इसे कोई भी स्वाकार करेगा।

मैंने आरंभ में ही लिखा है कि स्त्रियाँ स्वभावतः गुण्डेपन से घृणा करती हैं। वे इस प्रकार के खुराफात से अधिक दूर होतीं, यदि समाज से उसका संबंध इतना निकटवर्ती न होता फिर भी यह आवश्यक है कि स्त्रियां गुण्डों और आचारण हीनों को पहचानें और उनसे दूर रहने की चेष्टा करें।

किसी के मस्तक पर गुण्डेपन का साइनबोर्ड नहीं होता।

यह सही है कि अनेक अवस्थाओं में गुण्डों की रूप-रेखा भी साफ होती है, परन्तु प्रत्येक स्त्री के लिए उसे समझना सदा और सर्वदा सम्भव नहीं होता। विशेषकर उस अवस्था में, जब स्त्रियां उस स्वभाव की विरोधनी होती हैं। इसलिए उनके सम्पर्क मे आने के पहले उन्हें, उनका ज्ञान होना कुछ कठिन होता है, इसलिए यह आवश्यक है कि वे उनकी जानकारी प्राप्त करें।

गुण्डे और आचरन-हीन आदमियों के स्वरूप कई प्रकार के होते हैं। सूरत और शकल में भले आदमी देखने और सुनने में बहुत शरीफ और पढ़ने-लिखने में शिक्षित, उनके उज्वल वस्त्र और मीठी-मीठी बातें जाने कितने दिनों तक उनकी भलमनसाहत का परिचय देती हैं। परन्तु उनका यह परिचय स्थायी रूप में नहीं रहता। थोड़े, दिनों के व्यवहारों के बाद वे कभी-कभी तो रावण के रूप में प्रकट होते हैं। और कभी उससे मिलते-जुलते। इस अवस्था में यह बहुत जरूरी है कि स्त्रियां समझें कि गुण्डे और आचार-हीन कैसे होते हैं!

समाज ने सदाचार की जो परिभाषा बतायी है; उसके विरुद्ध व्यवहार करने वाले आचरनहीन और गुण्डे कहलाते है। झूठ बोलना अपनी बातों का बढ़ा कर कहना, प्रशंसा के पुल बाधना और अपने बड़प्पन का प्रभाव दूसरों पर डालना दुराचारियों और गुण्डों का कार्य होता है। कभी-कभी इस प्रकार के व्यक्ति इतने बदले हुए रूप में सामने आते हैं कि उन्हें पहचानना और उनके असली रूप को जानना समझदार पुरुषों के लिए भी कठिन हो जाता है। स्त्रियों के लिए तो वह असम्भव के समान है। इसलिए कि प्रकृति ने लड़कियों और स्त्रियों को विश्वास करना सिखाया है, वे पैदाइशी स्नेहमयी

होती हैं। वहां छल और प्रपंच के लिए स्थान कहां है। जो स्वयम् विश्वास-पूर्ण है, वह दूसरेका अविश्वास कर कैसे सकता है। और जिसने कभी छल नहीं किया वह छल को आसानी से समझ नहीं सकता। सत्य और बनावट में बहुत अंतर होता है।

यहाँ पर यह स्पष्ट कर देना भी बहुत जरूरी है कि गुण्डे आदमियों की तरह, गुण्डी स्त्रिया भी होती हैं। उन के आचरण और व्यवहार गुण्डेपन को प्रकट करते हैं। भोली सीधी स्वभाव वाली स्त्रियाँ तथा लड़कियाँ उन्हें जल्दी नहीं पह-चान पातीं। गुण्डे आदमियों की अपेक्षा गुण्डी स्त्रियां अधिक भयानक होती हैं। उनके द्वारा भयानक और अश्लील कार्य होते हुए देखे जाते हैं। स्त्री होने के कारण वे, स्त्रियों के लिए अधिक हानि पहुँचाने वाली सिद्ध हुई हैं।

स्त्री हो या पुरुष—जिसके स्वभाव मे गुण्डापन होता है और जिसके आचरन शुद्ध नहीं होते, वह अपने आप को ले मिटाता ही है। दूसरों को मिटाने का भी कार्य करता है। जो स्त्रियां इस प्रकार के स्त्री-पुरुषों के समझने का ज्ञान नहीं रखतीं, उन्हें कभी-कभी बड़ी से बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इतना ही नहीं, इस प्रकार की स्त्रिया और पुरुष अधिकांश अवसरों पर न जाने कितनी स्त्रियों के पतन के कारण बने हैं।

कोई भी स्त्री सहज ही यह प्रश्न कर सकती है कि इन गुण्डों की स्पष्ट पहचान क्या है? इस प्रकार का प्रश्न स्वा-भाविक है। किंतु उसका उत्तर सरल नहीं है फिर भी सीधी-सादी बहनों को समझाने के लिए मैं यहाँ पर प्रयत्न करूंगी।

इस प्रकार के आचरन-हीन आदमियों के स्वभावों और व्यवहारों के संबंध में ऊपर मैंने कुछ वातें लिखी हैं। वे काफी नहीं हैं, इस वातको मैं स्वयम् जानती हूं। मैं वार-वार स्वीकार करती हूं कि जिन स्त्रियों ने संसार को समझा नहीं है और इस प्रकार के आदमियों की कहानियों के समझने का जिन्हें अवसर नहीं मिला, वे उनको सहज ही समझ न सकेंगी। इसलिए कि इस प्रकार के आदमी प्राय. दो प्रकार के देखे जाते हैं। एक तो वे जो खुले तौर पर गुण्डे होते हैं और दूसरे वे जो देखने-सुनने में भलेमानुष किंतु स्वभाव और व्यवहार के अत्यन्त दूषित होते हैं। दूसरे प्रकार के गुण्डे और दुराचारी अधिक हानिकारक होते हैं। उनकी पहचान भी कठिन होती है।

इन लोगों के संबंध में मैं कुछ ऐसी वातें अपनी वहनों को वताना चाहती हूं, जिससे उनको समझने में उन्हें कुछ आसानी हो सके।

१---इस प्रकार के आदमी देखने और सुनने में सीधे जान पड़ते हैं।

२---उनकी वातों में अधिक स्नेह और प्रेम प्रकट होता है।

३---वे वहुत वढ़-चढ़ कर वातें करते हैं।

४---अपने मुह से, अधिक-से अधिक प्रशंसा करते हैं और अपनी प्रशंसा के सुनाने की इच्छा रखते हैं।

५---उनकी वातों में अस्सी प्रतिशत असत्य होता है। कभी कभी यह असत्य उनकी वातों में और भी अधिक वढ़ जाता है।

६---इस प्रकार के लोग विना किसी आवश्यकता के दूसरे की सहायता करने के लिए वढ़-चढ़ कर वातें मारने लगते हैं

परन्तु उनकी एक बात भी कभी पूरी नहीं होती।

७—इस प्रकार के आदमी स्त्रियों से अधिक बातें करते हैं। और उनकी जितनी बातें होती हैं, लगभग सभी अनावश्यक एवम् सार-हीन।

८— ये लोग स्त्रियों से बातें करते हैं और इधर उधर जाकर नमक-मिर्च लगाकर और बहुत सी बातें अपनी तरफ से मिलाकर प्रचार करते हैं।

९—किसी एक स्त्री से दूसरे की निंदा और दूसरे से तीसरे की किया करते हैं। उनकी बातों में इतनी चालाकी होती है कि उन्हें जल्दी समझना कठिन हो जाता है।

१०—इस प्रकार के आचरनहीन व्यक्तियों की और पहचान यह है कि ये लोग किसी भी स्त्री के शुभचिंतक बनने के लिए अपनी पूरी सहानुभूति हाथ में लिए फिरा करते हैं जो समय पर लाभ पहुँचाने के स्थान पर भयानक हानिकारक साबित होती है है।

११—दूसरे के घरों पर खर्च करने में इस प्रकार के आदमी बड़ी उदारता से काम लेते हैं।

गुण्डों और दुराचारियों की दो श्रेणियाँ मैंने ऊपर बताई हैं। पहली श्रेणी के लोग सहज ही जानने और समझने में आते हैं। परन्तु दूसरी श्रेणी के लोग जल्दी समझ में नहीं आते। इसीलिए यह अधिक भयानक होते हैं। बहुत दिनों तक वे स्त्रियों का विश्वास प्राप्त करते हैं और जब भण्डा फोड़ हो जाता है तो फिर कभी दर्शन नहीं देते। उनका यह जीवन भरका व्यवसाय है।

एक बात और है। ये लोग पल्ले दर्जे के निर्लज्ज होते हैं। इन्हें इस बात का ख्याल नहीं होता कि हम जिस प्रकार का

व्यवहार कर रहे हैं, उसकीकोइ निन्दा कर सकता है । वे सम्मान के लिए एक ढोंग रचा करते हैं। परतु अपमानित होने पर उन्हें कुछ कष्ट नहीं होता । इस प्रकार के लोगों की कहानियां, अनेक घरके लोग जानते हैं। इसी लिए वे अपना जाल फैलाने के लिए नये घर ढूंढा करते है। एक छोटी-सी घटना देकर मै इस वात को और भी स्पष्ट करना चाहती हूं। एक विदुषी महिलाके साथ मेरी न केवल मित्रता थी वल्कि वहुत निकटवर्ती संवंध था। प्रायः हम दोनों मिला करती थी। मेरी आंखों में उनके लिए वड़ा आदर था। एक बार उन्हों ने इस प्रकार के एक व्यक्ति के संवंध में मुझसे कुछ वातें कही। उनको सुनकर मुझे कुछ आश्चर्य नहीं मालूम हुआ। मैंने स्पष्ट समझा कि पढ़ने-लिखने के बाद भी इन्होंने उसे समझा नहीं है। उसपर उनका विश्वास देखकर, मैंने कुछ वातें उन्हीं की वतायीं, जिसको सुनकर उन्हें वहुत आश्चर्य हुआ।

मैं अंतमें इतना ही और कहना चाहती हूं कि वहुत समझ वूझकर इन लोगों से व्यवहार करने की जरूरत होती है। यदि इनका समझने मे भूल की गयी तो अंत मे मानसिक क्षोभ और पश्चात्तापके सिवा कुछ हाथ नहीं लगता।

स्त्रियां क्या चाहती हैं !

यह जानकर कि मैंने स्त्री-जीवन पर कुछ लिखा है और स्त्रियों का पक्ष लेकर प्रायः बातें की हैं, कितने ही लोग मुझसे बातें करने लगते हैं। मैने यह भी देखा है कि मेरे विचारों मे लोग अनेक स्थानो पर मतभेद रखते हैं। इसीलिए मेरे साथ उनकी वातें वाद-विवाद के रूपमें आ जाती हैं। यह प्रायः होता है।

मुझे खूब याद है, एक सज्जन कुछ देर तक बातें करने के

बाद कुछ-चिढ से गये और अप्रसन्न होकर मुझसे पूछने लगे-'आखिर स्त्रियां क्या चाहती हैं ?'

उनके प्रश्न को सुनकर मैंने भलिभांति समझा कि मेरी बातें उन्हें अच्छी नहीं लगीं। मैंने कभी किसी को चिढ़ाने की कोशिश नहीं की। मेरा ऐसा अभिप्राय भी नहीं है। उचित और अनुचित बिना समझे-बूझे, स्त्रियों का पक्ष करना मेरा काम नहीं है। मैंने अनेक स्थानों पर स्त्रियों की त्रुटियों की आलोचना की है और उनकी कमजोरियों को अपनी कमजोरी समझा है।

ऊपर का प्रश्न सुनकर मैंने सहज ही उस पर विचार किया। तरह-तरह से उसको समझने की कोशिश की। उन के प्रश्न पर कुछ कहने के पहले, मैंने हंसते हुए पूछा आप के इस प्रश्न का अभिप्राय क्या है।

उन्होंने जो मुझसे प्रश्न किया था, और उसका उत्तर देना मुझे जितना जटिल मालूम हुआ, उतना ही जटिल और कुछ कठिन मेरा प्रश्न भी उनके लिए हो गया।

उन्होंने कुछ सोचकर कहा--आपकी बहुत-सी बातों से मेरा मतभेद है। जो बातें स्त्रियों मे कभी नहीं रहीं, उन्हीं को ला-लाकर आप स्त्रियों मे भरना चाहती हैं। इसी लिए मैंने यह प्रश्न आपसे किया है।

मैंने कहा-स्त्रियों मे जो बाते कभी नहीं रहीं, वे आज भी न हों, ऐसा आप क्यों चाहते हैं ?

उन्होंने कुछ खिन्न होकर कहा—पुरानी बातों के आप बिल्कुल विरुद्ध जारही हैं। हमारे पूर्वज क्या मूर्ख थे जो उन्हे पसन्द न करते थे।

उनका यह प्रश्न भी मेरे सामने कुछ असाधारण था। मैंने

कहा—न जाने कितनी बातें आपके पूर्वजों में न थीं। परन्तु आपमें हैं। वे क्यों हैं ?

'कौन-सी बातें ?'

मैंने कहा-आपके पूर्वज अंगरेजी न जानते थे, वे उसे पढ़ते ही न थे, परन्तु आपने अंगरेज़ी पढ़ी है। क्या मैं पूछ सकती हूं कि आपने ऐसा क्यों किया है !

मेरी बात को सुनकर वे कुछ सोचने लगे। सचमुच मेरा प्रश्न ठीक वैसा ही था,जैसा वे मुझ से कर रहे थे। कुछ सोचने के बाद उन्होंने कहा—पहले यहा अंगरेज थे ही नहीं और न अंगरेज़ी भाषा ही थी। हमारे पूर्वज कैसे पढ़ते।

मैंने हंसकर कहा—इसीलिए तो मैंने आपसे पूछा। जो बातें आपके पूर्वजों में न थीं, उन्हें आपने कैसे स्वीकार किया ?

उन्होंने कुछ न कुछ कहा। परन्तु जो कुछ कहा, वह न उनके लिए संतोष जनक था और न मेरे लिए। यह बात स्पष्ट प्रकट हो रही थी।

अपना पक्ष समर्थन करते हुए उनके मुंह से निकल गया इस प्रकार की बातों से स्त्रियाँ बिगड़ रही हैं।

मैंने सहज ही पूछा किस रूप में आप उनको बिगड़ते हुए देख रहे है ?

उन्होंने तेज़ी के साथ कहा—अब तो जमाना ही बदल रहा है। नौकर और मालिक के बीच में कोई अन्तर नहीं रह गया। छोटे आदमी बड़े आदमियों की परवाह नहीं करते और स्त्रियाँ घरों से बाहर निकलकर जिस प्रकार सड़कों पर चलती हैं, इसका तो दृश्य ही निराला है।

मैंने कहा—अब आपका प्रश्न साफ हो गया। आप नौकर को, नौकर बनाये रखना चाहते हैं। मज़दूरों को मनुष्यों की

श्रेणी से अलग समझते हैं, छोटों और बड़ों के बीच एक ऊंची दीवार पसंद करते हैं और स्त्रियों को घर के भीतर बंद रहने वाला कैदी समझते हैं। ऐसा नहीं हो सकता। आपके पूर्वजों में यदि ये बातें थीं तो भी आज न रहेंगी और न थीं तो भी उनका अस्तित्व दिखायी न पड़ेगा। जो चीज बदलने की है, वह बदल जायगी, चाहे वह पूर्वजों में रही हो अथवा न रही हो। पांच हजार वर्ष की पुरानी बातें आज समाज में चल न सकेंगी।

इस प्रकार की बातें लोगों से मुझे प्रायः सुनने को मिलती हैं। मुझे उनसे कुछ कष्ट नहीं होता। बहुत-सी बातें समझने को मिलती हैं। ऐसे अवसरों पर मैं जानती हूं कि लोगों के विरोध का कारण क्या है। इसमें संदेह नहीं कि बहुत दिनों से स्त्री-समाज अनेक प्रकार की रूढ़ियों के बंधन में चला आता है। उन रूढ़ियों और प्रथाओं का लाभ समाज के स्वार्थी लोगों को हुआ। लोगों ने देश और समाज का हित नहीं देखा। अपने स्वार्थों का ही समर्थन करते रहे। फल यह हुआ कि जो समर्थ थे, उन्होंने निर्बलों को अपना गुलाम बनाकर रखा इतना ही नहीं, उनके घृणपूर्ण व्यवहारों से निर्बलों और आश्रितों का अधिक-से अधिक पतन हुआ। ठीक यही अवस्था समाज के अनेक भागों में देखने को मिली।

जिन महाशय ने मुझ से पूछा था, स्त्रियां क्या चाहती हैं। उनके साथ मेरी बातें समाप्त हो गयीं। परन्तु उनका यह प्रश्न मेरी आंखों के सामने बना ही रहा। यद्यपि यह प्रश्न क्रोधावस्था में मुझसे पूछा गया था, परन्तु था यह बड़े काम का। मुझे अनेक बार इस प्रश्न की याद आयी और अनेक अवसरों पर मैंने उसे समझने की चेष्टा की।

स्त्रियां क्या चाहती हैं, समाज को यह पूछना ही चाहिए और पुरुषों को इसके संबंध में सभी-कुछ जानना चाहिए। इस तरह का प्रश्न स्त्री-जीवन से बहुत गहरा संबंध रखता है। इसलिए स्त्रियों को और भी अधिक इस के संबंध में जानने और समझने की जरूरत है। इस तरह की बात को उठाकर, जितना ही उस पर विचार करना पड़ता है, उतना ही वह प्रश्न महत्वपूर्ण मालूम होता है।

स्त्रियों का जीवन जिस प्रकार सीमित बनाया गया, उसने उन्हें आवश्यकता से भी अधिक संकुचित बना डाला। स्त्रियां दब कर और सीमित बनकर सुरक्षित रहने के स्थान पर दुर्बल और अयोग्य बन गयीं। मनुष्य अपने विकासके लिए विस्तार चाहता है। स्त्रियों के साथ में उलटा किया गया। इसका फल वही हुआ, जो होना चाहिए था!

उठते-बैठते, सोने-जागते प्रायः मेरे सामने यह प्रश्न आकर अकस्मात खड़ा हो जाता है, स्त्रियां क्या चाहती हैं? मैं सोचने लगती हूं, कितना अच्छा प्रश्न है! यदि स्त्रियों के कार्यों को देखकर विरोधी समाज यह समझना चाहे कि स्त्रिया क्या चाहती हैं, तब तो हमारा कल्याण ही हो जाय! अपनी कमजोरी को मुझे बार-बार स्वीकार करना पड़ता है। बार-बार यह मानना पड़ता है कि हमारे कार्य सामुहिक रूप से अभी तक ऐसे नहीं हो सके, जिनसे लोग समझने की कोशिश करते कि स्त्रियाँ क्या चाहती हैं?

जब मुझसे यह प्रश्न हुआ था, उस समय मैं दूसरी-दूसरी बातें करती रही और अपनी बात स्पष्ट रूप से समझाने में लगी रही, परन्तु उस प्रश्न को सुनकर जो कुछ मुझे कहना चाहिए था, मेरी समझ में नहीं आया था, लगातार उस प्रश्न

को सोचने के बाद मेरी समझ में आया कि उसे सुनकर, मुझे सब से पहले क्या कहना चाहिये था। प्रश्न को सुनते ही, यदि मैंने सहज ही पूछा होता, "स्त्रियां क्या नहीं चाहतीं" तो अधिक अच्छा होता।

स्त्रियों की अवश्यकताओं को एक स्त्री जितना समझ सकती है, उतना पुरुष नहीं समझ सकता। कानूनों का बंधन कुछ और है। प्रकृति कुछ और होती है। मनुष्य होने के नाते से, स्त्रियां जीवन की उन सभी बातों में अपना प्रवेश चाहती हैं, जो जीवन के विकास के लिये आवश्यक है। वे घरों के भीतर बन्द होकर नहीं रहना चाहतीं, इसका यह अर्थ नहीं है कि वे घरों मे रहना नहीं चाहतीं। वे घरों के साथ-साथ बाहरी वातावरण में अपना प्रवेश चाहती हैं। अनुभवहीनता और अयोग्यता के साथ वे जीवन नहीं विताना चाहतीं।

इसीलिये आज उनको आवश्यकता है कि वे घरों से बाहर भी निकलें। बाहरी वायु और शुद्ध वायु के सम्पर्क में वे आवें। घरों में रहने वाली स्त्रियाँ इस बात को अच्छी तरह समझती हैं कि वे अपने जीवन से कितनी ऊबी हैं, वे समझ चुकी हैं कि बन्द स्थानों की वायु जिस प्रकार स्वास्थ्य के लिये दूषित हो जाती है, ठीक उसी प्रकार जीवन का बंधन, जीवन के विकास के लिये विरोधी होता है।

बंधनों में रह कर और सीमित जीवन बिता कर न तो ससार को समझ सकती हैं और न संसार उन्हें समझ सकता है। स्त्रियां संसार को समझने मे भूल करती हैं और संसार भी उनको समझने में, अनेक अवसरों पर मूर्खता से काम लेता है। इसीलिये उनके जीवन की जो सीमा बना दी गई है, उसमें उनको आज सन्तोष नहीं है। जो शिक्षा

उनको मिल रही है, उसने उनकी प्राकृतिक आवश्यकताओं के समझने में सहायता की है।

स्त्रियाँ आज अपने घर को, अपना घर समझती हैं। उसे वे सुख पूर्ण बनाना चाहती हैं और इसके लिये वे बहुत आवश्यक समझती हैं कि उनको सांसारिक बातों का भली प्रकार ज्ञान हो, इसके बिना वे अनुभव-शून्य हैं। उनके जीवन की गति विकास के विरुद्ध जा रही है। जिस समाज ने उनके जीवन को एक सीमा के भीतर बाँधा है, उसने अपनी हठधर्मी पर कभी नजर नहीं डाली। उसने स्त्रियों को अयोग्य और निर्बल स्वीकार किया है। समाज का यह अत्याचार है।

शरीर के आरोग्य के लिये स्त्रियों को अच्छे भोजन की आवश्यकता है। शक्ति और सामर्थ्य उत्पन्न करने के लिये किस प्रकार का भोजन उपयोगी हो सकता है और किस रूप में उसका निर्माण किया जा सकता है, इसके जानने और समझने की उनको आवश्यकता है। वे अनुभव करती हैं कि उपयोगी भोजन पाकर हमारा शरीर निरोग बनेगा, हमारी सन्तान स्वास्थ्य प्राप्त करेगी और समाज शक्तिशाली बन सकेगा। स्त्रियाँ आज अपनी इस आवश्यकता को समझती हैं।

एक युग था जब स्त्रियां अधिकार-हीन बना कर रखी गई थीं। आज वह युग बदल गया है। समय के साथ-साथ स्त्रियों का जीवन भी बदल रहा है। अब वे दिन नहीं रहे जब स्त्रियां केवल मिट्टी की मूर्ति के रूप में होती थीं। उन्हें कोई भी बिगाड़ सकता था और बना सकता था। आज वे दिन नहीं रहे, जब वे उन्हीं बातों को जानती और समझती

थीं, जो उनसे कहा जाता था। वर्त्तमान समय ने उन्हें बदला है और वे अपने अधिकारों को समझने लगी हैं। फल यह हुआ है, कि वे दूसरों का आदर करना चाहती हैं, किन्तु अपने लिये भी आदर और सम्मान चाहती हैं।

परदे की व्यवस्था आज स्त्रियों के लिये अपमान के रूप में रह गयी है। इसी लिये एक बड़ी संख्या में वे उसके बंधन को तोड़ चुकी हैं और अपना उदाहरण अपनी उन बहनों के सामने उन्होंने रखा है जो परदे के बंधन मे बंधी हुई हैं। समय का प्रभाव पड़ता ही है। आवश्यकता अपने आप मनुष्य को ज्ञान देती है। जो स्त्रिया पुरानी रूढ़ियों मे कैद हैं, वे अपनी परवशता को अनुभव करती हैं। जीवन की परिस्थितियों को बदलना चाहती हैं और स्वतत्र वातावरण की ओर लालायित होकर देख रही हैं। आज स्त्रियों की यह साधारण अवस्था है।

पिछली अनेक शताब्दियाँ जिस प्रकार बीती हैं, उनमे स्त्रियोंके जीवन को अन्धकार में रखा गया है। यहां पर यह कहना असत्य न होगा कि उनके सम्मान के विरुद्ध प्रचार ही नहीं किया गया, समाज मे घृणा फैलाई गयी है। इस प्रकार की शताब्दियां हमारे समाजिक जीवन में वैराग्य-काल अथवा वैराग्य-युग के नाम से प्रसिद्ध हैं।

पुरुषों ने संसारिक जीवन से घृणा की थी। जीवन से उनको विराग उत्पन्न हुआ था। इस लिये उन्होंने संसार की समस्त वस्तुओं से अपना नाता तोड़ा था। अनेक शताब्दियों तक बैराग्य की वायु जो बही, उसमें समाज ने जीवन से विरक्त होने मे ही अपना कल्याण समझा। उन शताब्दियों का फल यह हुआ कि सम्पूर्ण समाज में साधुओं-संन्यासियों

और विरागियों को आदर प्राप्त हुआ। उन्हें देवता के रूप में पूजा गया और स्त्रियों के विरुद्ध जितना भी प्रचार किया जा सका, किया गया। इसका सबसे बड़ा दूषित प्रभाव स्त्रियों में यह पड़ा कि उनको अपने मान और अपमान का स्वयम् ज्ञान न रहा। अपमानित स्त्रियां घृणा के योग्य समझी गयीं और स्त्रियों से स्वयम् सबसे बड़ी मूर्खता यह हुई कि अपने विरुद्ध घृणा और अपमान का प्रचार करने वालों की ही पूजा करने में उन्होंने अपना कल्याण समझा।

वह युग बदला। वैराग्य का शासन समाज से हटा। स्त्रियों और पुरुषों ने नयी शिक्षा और सभ्यता का ज्ञान प्राप्त किया। धीरे-धीरे समाज की कालिमा धुलने लगी। पिछली अनेक शताब्दियों का अपराध और अपवाद मिटने लगा। समाज का आत्मा शुद्ध होने लगा। स्त्री और पुरुष जीवन का महत्व समझने लगे। दोनों ने एक, दूसरे का आदर करने में ही अपना कल्याण समझा।

यही आजका स्त्री-जीवन है और स्त्री-जीवन की यही आवश्यकतायें हैं। स्त्रियां क्या चाहती हैं, इसका उत्तर समय अपने आप दिन-पर-दिन देत चला जा रहा है।

स्त्रियां स्वयम् रुपया पैदा करना चाहती हैं।

स्त्री और पुरुष के कामों का बँटवारा बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है। पुरुष बाहरी काम करता है। नौकरी अथवा व्यापार से रुपये पैदा करता है। जो कुछ वह पैदा करता है, उसीसे अपना और अपने परिवारका निर्वाह करता है।

स्त्रियां घर का काम करती हैं। बच्चों का पालन-पोषण करतीं हैं। उनके कामों से पुरुषों का सम्बन्ध नहीं रहा करता

और न स्त्रियां ही पुरुषों के कामों में कभी सहयोग देती है। इस प्रकार की अवस्था युगों से चली आ रही है। इस प्रथा को पुरुषों ने स्वयम् जन्म दिया है। समाज में पुरुष शासक होकर रहे हैं। परिवार में भी पुरुषों ही का हाथ रहता है।

कामों का जिस प्रकार बटवारा हुआ है, उसमें घरके और बाहरी कामों के ही विभाजन की बात नहीं है। थोड़ा-सा भो ध्यान देने से समझ मे आता है कि जितने ज़िम्मेदारी के काम हैं, वे पुरुषो के हाथ में हैं। कहा तो यह जाता है कि पुरुष बाहरी काम करते है। धन कमाते हैं। विपदाओं का सामना करते हैं। परन्तु स्त्रियां घरों के भीतर सुरक्षित बैठ कर अपना काम करती हैं। न तो उन्हें धूप और लू में जाना पड़ता है, न किसी की खुशामद करनी पड़ती है और न उनके सामने कोई बाहरी कठिनाई ही आती है। घर की छाया में बैठकर, घरों की व्यवस्था करना और आवश्यकता के अनुसार अपने कार्यों को करना, उनका कर्त्तव्य होता है। स्त्रियो के संबंध में इस प्रकार की बातें कही जाती हैं।

लेकिन बात ऐसी नहीं है। स्त्री और पुरुषों को अलग-अलग करके इस बात को साफ कर दिया गया है कि जिम्मेदारी का बोझ पुरुषों पर है। स्त्रिया घर की मालकिन केवल कहे जाने के लिए है। घरों की कोई चीज किसी को देने के समय पुरुष स्वयम् मालिक होते हैं। घर में रखा हुआ अनाज केवल आदमी ही बेच सकते है अथवा किसी को ले-दे-सकते है। वस्तुओं और जेवरों के संबंध मे भी यही बात है। जो चीजें स्त्रियों की हो जाती हैं। उनको स्त्रियां केवल अपने काम मे ला सकती हैं। वे पहन सकती हैं और ओढ सकती हैं, परन्तु उसे खर्च करने का, बेच देने का अथवा किसी को दे देने का उनका

कोई अधिकार नहीं होता।

घरों और परिवारों की यह प्रथा बहुत पुरानी है। इस प्रथा के अनुसार पुरुष स्त्रियों के कामों के संबंध में सब कुछ करने का अधिकार रखते हैं। परन्तु स्त्रियां कुछ कह-सुन नहीं सकतीं। उन दोनों का संबंध ठीक उसी प्रकार चलता है, जैसे किसी आफ़िस में छोटे और बड़े दो कार्य करने वाले होते हैं। छोटे के कामों के संबंध में बड़े को कहने का और आलोचना करने का अधिकार होता है। परन्तु बड़े की भूलों और गलतियों को समझते हुए भी छोटा कुछ कहने का अधिकारी नहीं है। घर और परिवार के जीवन में पुरुषों के निकट स्त्रियों की कुछ मजबूरी होती है और वह मजबूरी यह है कि जीवन में सबसे बड़ा महत्व रुपये-पैसे और धन का है।

जो धन कमा सकता है, घर और परिवार में उसी को आदर प्राप्त होता है। पुरुषों के हाथों में इस प्रकार के कार्य हैं। जिनसे उनको रूपये की आमदनी होती है। वे नौकरी कर कसते हैं, व्यापार कर सकते हैं और रूपये पैदा कर सकते हैं। अधिक-से-अधिक परिश्रम करने के बाद भी, स्त्रियों के हाथों में रुपया-पैसा कमाने का कोई साधन नहीं है। समाज ने इस प्रकार की व्यवस्था नही की जिससे धन कमाने में स्त्री का हाथ हो।

यहां पर कोई भी आदमी शंका कर सकता है और कह सकता है कि स्त्रियां अपने अनेक घरेलू कार्यों से अपनी अधिक आय कर सकती हैं। यह बात केवल कहने भरके लिए है। घर के काम-काज कुछ इस ढंग के होते हैं। जिनसे रुपयों की आमदनी का कोई संबंध नहीं होता। साधारण घरों में स्त्रियां प्रातःकाल से लेकर, रात के दस और ग्यारह बजे तक

इतना भी अवकाश नहीं पातीं कि वे अपनी थकावटमें विश्राम कर सकें।

मिलों के मजदूरों का काम सब से कठिन समझा जाता है और कहा जाता है कि उनमें काम करने वालों का स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है। मिलों के मजदूरों को निरोग बनाये रखने के लिए सरकार को अपने प्रकार के कानून बनाने पड़े हैं, जिनमें काम लेने के घण्टों का निश्चय कर दिया गया है और प्रत्येक फैक्टरी एवम् मिल के भीतर छपे हुए फार्म में सरकारी कानून टंगे रहते है। जिनमें अनेक बातों के साथ-साथ यह लिखा होता है कि किसी मजदूर से आठ घन्टे से अधिक काम नहीं लिया जा सकता। इसका प्रबंध सरकार स्वयम् करती है। और इन कानूनोंको भंग करने वाले फैक्टरी अथवा मिल के मालिक कानून की दृष्टि में अपराधी समझे जाते हैं। उनके विरुद्ध अदालत में मुकद्दमे चलाते हैं।

बारह घन्टे तक लगातार काम करने के बाद भी स्त्रियों की ओर किसी का ध्यान नहीं जाता। सम्पन्न घरों की बात मैं नहीं कहती। और शहरों का जीवन भी इस के संबध में बदला हुआ है। परन्तु देहातों का जीवन स्त्रियों के लिए भयानक है। मैंने स्वयम् अपनी आंखों से देखा है। उनके स्वास्थ्य के नष्ट होने के बहुत-कुछ इसी प्रकारके काम होते है। स्त्रियों को इस प्रकार का जीवन केवल इसीलिए बिताना पड़ता से कि उनके जीवन का निर्माण पुरुषों की कमाई से होता है।

स्त्री-जीवन की इस समस्या ने स्त्रियों को यह अनुभव करने के लिए विवश किया है कि उनको भी ऐसे काम करने चाहिए, जिससे वे रुपया पैदा कर सकें। घर के काम धन्धों

में अभी तक ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है जिससे आर्थिक आय हो सके और यदि किसी प्रकार कुछ होभी सकती है तो उसपर भी पुरुषों का ही प्रभुत्व रहता है। घर के इन कामों में गायों और भैंसों के द्वारा दूध और घी का व्यवसाय होता है। परंतु उसके द्वारा जो आय होती है, उसे स्त्रियां अपनी कमाई नहीं समझ सकतीं।

यहां पर एक प्रश्न यह होता है कि पुरुषों के कमाने पर स्त्रियों को कष्ट क्या होता है? खाना-कपड़ा, जेवर और बीमारी के खर्च सभी तो किये॰ जाते हैं। इनके सिवा स्त्रियों के और भीं खर्च होते हैं, उन्हें भी पुरुप करते ही हैं। फिर कौन-सी बात पैदा होती है, जिसके लिये स्त्रियों को धन पैदा करने की जरूरत है। यह एक साधारण प्रश्न सामने आता है।

इस प्रश्न के सम्बन्ध में कुछ विचार करने की जरूरत है। बच्चों से लेकर वृद्धों तक और स्त्रियों से लेकर, पुरुषों तक सभी के सामने खर्च होते हैं। सभी के खर्च चलते ही हैं। स्त्रियों के भी चलते हैं, परन्तु चलते हैं घर के मालिकों पुरुषों की कृपा के द्वारा।

इस प्रकार की प्रथा का फल यह हुआ है कि स्त्रियों को रुपये-पैसे के नाम पर दूसरों का मोहताज रहना पड़ता है। भाई, पिता, माता, सम्बन्धी, पति, सास-ससुर आदि के द्वारा उन्हें समय-समय पर कुछ मिल जाया करता है। उनकी आमदनी के साधन इसी प्रकार के लोग बनते हैं। इस लिए स्त्रियाँ सदा उन लोगों से कुछ पाने की आशा करती हैं। वे चाहती हैं कि उन्हें कोई कुछ दे दे। उन की यह अभि-लाषा सदा उनके साथ रहती है। भाई के आने पर और

पिता के मिलने पर उनको कुछ पाने की लालसा रहती है। जो माता-पिता या भाई गरीब होते हैं उनसे उन्हें रुपये पैसे की आमदनी नहीं होती। इसका फल यह होता है कि स्त्रियां स्वयम् उनकी आलोचना करती हैं। और यदि उन्हें कुछ मिल जाता है तो वे प्रसन्न हो जाती हैं। यह साधारण समाज की दशा है।

हमें कोई कुछ दे, स्त्रियों के हृदय में इस अभिलाषा का होना कभी भी अच्छा नहीं कहा जा सकता। यह ठीक है कि जिनसे वह आशा करती हैं वे उन्हीं के हैं, परन्तु फिर भी इसे अच्छा कहा नहीं जा सकता। जीवन-भर दूसरों की मोहताज रहना पतन का एक चित्र है। इस प्रकार की भावना स्त्रियों के मस्तक को कभी ऊंचा नहीं कर सकती। रुपये-पैसे की दरिद्रता मनुष्य के विचारों को भी दरिद्र और दुर्बल बना देती है। इसीलिए यह प्रथा बुरी है।

स्त्रियों की ही बात नहीं है। कोई भी मनुष्य यदि दूसरे की कमाई का भरोसा करता है तो उसके जीवन का वह एक पतन होता है। इस प्रकार आदमी अपने चरित्र का निर्माण नहीं कर सकते। किसी का भी आश्रित होकर रहना अच्छा नहीं है। चाहे स्त्री हो, अथवा पुरुष। इसी लिए स्त्रियों की यह दशा दयनीय है और सर्वथा विचारनीय है।

स्त्रियों के जीवन का यह आर्थिक चित्र आज समाज के सामने है। जब आवश्यकता होती है, तो उस का मार्ग अपने आप खुलता है स्त्रियों की आर्थिक दुरअवस्था केवल हमारे ही देश की नहीं है। संसार के सभी देशों की स्त्रियों को इस के कारण दरिद्रता-पूर्ण जीवन का सामना करना पड़ा है। यद्यपि आज उन्नत देशों की अवस्था बदली है। स्त्रियों के

घरेलू बंधन टूटे हैं और वे अनेक प्रकार के व्यवसायों में प्रवेश कर सकी हैं।

यह अवस्था सभी देशों की नहीं है। अनेक देश आज भी स्त्रियों की गुलामी को बनाये हुए हैं। वहां भी स्त्रिया हमारी भांति अनेक बंधनों के साथ-साथ आर्थिक विवशता मे हैं। उनके जीवन में भी वही कठिनाइयां हैं, जो आज हमारे सामने हैं।

यद्यपि हमारे देश के स्त्री-समाज की अवस्था में भी परिवर्तन हुआ है। शिक्षित स्त्रियां नौकरी और व्यवसाय की ओर बढ़ी हैं। उनके इस नये प्रवेश ने उनको उन्नत बनाया है। उनके जीवन का विकास हुआ है। रुपये पैसे की सम्पन्न अवस्था ने उनके हृदय और आत्मा मे बल और साहस उत्पन्न किया है। इस प्रकार वे अपने चरित्र को उन्नत एव शक्तिशाली बना सकी हैं।

यहां पर कभी हमें यह न भूलना चाहिये कि अपने देश में इस प्रकार की स्त्रियों की संख्या अभी तक बहुत थोड़ी है, और एक छोटी-सी संख्या हमारे जवीन का उदाहरण नहीं बन सकती। साधारण स्त्रियों से ही स्त्री-समाज बना है। इसलिए स्त्रियों की नौकरिया और व्यवसाय जब तक हमारे समाज की प्रथा के रूप मे हमारे सामने नहीं है। स्त्री-समाज के लिये उससे अधिक सहायता नहीं मिल सकती।

इन सब बातों ने मिलकर स्त्रियों के हृदयों में एक भावना उत्पन्न की है और आज बड़ी संख्या में स्त्रियां बार-बार इस बात को समझने लगी हैं कि हम स्वयम् किस प्रकार रुपया पैदा कर सकती हैं।

यह प्रश्न उन्हीं के सामने नहीं है जो अधिक कष्टों

मे हैं बल्कि रुपये पैसे का कष्ट उठाने वाली स्त्रियां भी इस बात को बार-बार सोचती हैं और अपने प्रयत्नों द्वारा अपनी आर्थिक आय चाहती हैं।

स्त्रियों की इस आवश्यकता को मुझे समझने का बार-बार अवसर मिला है। निर्धन स्त्रियों के लिये तो ऐसा सोचना ही चाहिये, किन्तु आर्थिक सुविधा रखने वाली स्त्रियां भी इस प्रकार के प्रश्न प्रायः मुझसे कर बैठती हैं। उदाहरण के तौर पर एक छोटी-सी घटना यहां लिखना मैं आवश्यक समझती हूं।

ब्राह्मण परिवार की बात है, स्त्री की अवस्था तीस वर्ष से ऊपर की होगी। उसका पति किसी अच्छी नौकरी पर था। उस का सयाना लड़का पढ़ता था। मेरी समझ में यदि उसे बहुत बड़ा सुख प्राप्त न था तो किसी प्रकार का उसे दुख भी न था। उसने बातें करते हुए एक बार मुझसे कहा—

बहन जी, आप तो इतनी पढ़ी लिखी हैं, मैं आपसे अपनी एक बात पूछना चाहती हूं।

मैंने हंस कर कहा—पूछिये।

उसने कहा—क्या ऐसा कोई आप काम बता सकती हैं, जिससे स्त्रियाँ भी कुछ कमा सकें?

मैंने पूछा—आप किसके लिए पूछ रही हैं।

उसने उत्तर दिया—किसी के लिये भी।

'क्या मैं उसे जान नहीं सकती?'

'जान क्यों नहीं सकती।'

'तो बताइये फिर।'

'अच्छा यदि मैं स्वयम् चाहती होऊं तो?'

मैंने मुस्कराते हुए कहा—आप तो अपने जीवन में सुखी

हैं। आप को इसकी क्या जरूरत है ?

'जरूरत क्यों नहीं है।'

'मैं अभी समझी नहीं।'

उसने कुछ रुक कर कहा--किसी प्रकार की तकलीफ न होने पर भी क्या मनुष्य का कार्य यह नहीं है कि वह अपनी सुविधाओं के लिए कुछ स्वयम् पैदा करे ?

'है क्यों नहीं। बात तो आप ठीक ही कहती हैं। लेकिन हमारे समाज में इस प्रकार की प्रथा नहीं है, इसलिए मैंने ऐसा कहा।'

वह स्त्री समझदार थी। साधारण पढ़ी लिखी भी थी और लिखना-पढ़ना जानती थी। उसने कहा—समाज में इस प्रकार की प्रथा न होने से क्या इस में कोई पाप होता है।

मैने कहा—पाप तो नहीं होता।

उसने कहा—फिर आप ऐसा क्यों कहती हैं ?

उसकी बातों को सुनकर, मैं कुछ सोचने लगी। इस प्रकार की बातें मैंने और भी स्त्रियों से सुनी थी। फिर भी मेरे सामने उसका प्रश्न बार-बार आने लगा। मुझे चुप देखकर उसने फिर कहा—आप तो इतनी पढ़ी-लिखी हैं। यदि आप भी इसे अच्छा नही समझती तब तो मुझे आश्चर्य होगा।

मैंने उसे संतोष देते हुए कहा—मै अच्छा समझती हूं। इतना ही नहीं, मेरी समझ में प्रत्येक स्त्री के लिए इस प्रकार सोचना आवश्यक है। जब वे ऐसा सोचेंगी, तो उनको, उसका मार्ग भी मिलेगा।

उस स्त्री के प्रश्न को लेकर, मैंने कुछ देर तक उससे और भी बातें कीं। स्त्रियों की इन बातों को जानने के बाद में समझ सकी हूं कि अपनी आर्थिक आय के लिए स्त्रियों में किस

प्रकार की अभिलाषा है।

इस समस्या पर मैंने अनेक बार सोचा है और इस निर्णय पर पहुँच चुकी हूं कि आर्थिक स्वतंत्रता स्त्रियों की उन्नति का एक मार्ग है।

मनोरंजन में सुख और स्वास्थ्य

प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन में सुख चाहता है। परंतु वह सुखी बन नहीं पाता। इसका कारण क्या है? सुख के चाहने वालों मे कितने लोगों ने इस पर विचार किया है और उसमें छिपे हुए सत्य को पहचानने की कोशिश की है।

जब मनुष्य को सुख का अनुभव नहीं होता तो वह उसके लिए किसी कारण को समझ लेता है। अपने जीवनके किसी न किसी अभाव को लेकर सुख से वंचित रहता है। वह सुखी नहीं है, इसके कारण को वह जानता है। परन्तु जो कुछ वह जानता है उसका झूठा विश्वास होता है। सुखी रहने के लिये हमारे जीवन की परिस्थितियाँ हमारी सहायता नहीं करतीं। मनुष्य उनको समझने से भूल करता है।

जिनके जीवन में सुख नहीं है, यदि उनको समझने की कोशिश की जाय तो अनेक प्रकार की बातें मालूम होंगी। स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण कुछ लोग अपने सुख का अभाव समझते हैं। कुछ लोग इसलिए दुखी रहते हैं कि उनके पास रुपया नहीं है। कुछ लोग संतान के अभाव मे प्राय. अप्रसन्न रहा करते हैं और न जाने कितने लोग इसलिये खिन्न चित्त रहा करते हैं कि उनकी संतान की मृत्यु हो गई है। इस प्रकार एक दो नहीं न जाने

कितने कारण मिलेंगे जो हमें अप्रसन्न एवम् सुखहीन बनाते हैं। इस प्रकार अवस्था अधिकाश स्त्री-पुरुषों की मिलेगी।

हमारे जीवन का सत्य यह नहीं है। सुखी और प्रसन्न रहने के लिए अनुकूल परिस्थितियों की ही जरूरत नहीं होती किसी विद्वान ने लिखा है, "प्रसन्न रहना हमारे जीवन की एक कला है।" जो इस कला को नहीं जानते, वे सुखी और प्रसन्न नहीं रह सकते। परिस्थितियां तो विरुद्ध बनी ही रहती हैं। जीवन की सभी सुविधायें किसी को नहीं प्राप्त होतीं तो क्या इसका यह अभिप्राय होता है कि मनुष्य कभी सुखी नही रह सकता?

ऐसी बात नही है। जो प्रसन्न रहना जानते हैं, जिनको उसकी कला का ज्ञान है, वे प्रत्येक परिस्थिति में सुखी और पसन्न रहा करते हैं। पंरतु जिनको उसका ज्ञान नहीं है, वे प्रसन्न रहना नहीं जानते। सुविधाओं और परिस्थितियों को लेकर यदि मनुष्य सुखी रहने का प्रयत्न करे तो यह निश्चित है कि वह कभी पसन्न न रह सकेगा। इस पकार हमें यह समझ लेना चाहिए कि हमारी प्रसन्नता सुविधाओं के ऊपर निर्भर नही है। वह हमारे ऊपर निर्भर है।

सम्पूर्ण मानव-जीवन की यही अवस्था है। स्त्रियों का जीवन एक प्रकार की भूलभुलैयाँ के रूपमें हमारे सामने रहा करता है। खोजने के बाद पता चलता है कि बहुत कम स्त्रियाँ अपने जीवन में सुख और प्रसन्नता का अनुभव कर पाती हैं।

हम यदि प्रसन्न रहना चाहें तो रह सकती हैं। परन्तु उसी अवस्था में जब हमारे ऊपर असुविधाओं और विरुद्ध परिस्थियों का प्रभाव न पड़े। अन्यथा हमें जीवनभर

उससे वंचित होकर रहना पड़ेगा। स्त्रियों के जीवन में अनेक प्रकार की त्रुटियां तो है ही और सबसे बड़ी बाधा यह है कि उनका जीवन विरुद्ध वातावरण मे घिरा रहता है। परन्तु उनके अप्रसन्न बने रहने का यह कोई खास कारण नहीं है।

छोटी अवस्था में ही हमारे स्वभाव का निर्माण हो जाता है। सच्ची बात यह है, यदि हमारे स्वभाव के बनने में भूल हुई तो जीवन-भर उसका बुरा फल हमें भोगना पड़ता है। प्रकृति ने छोटे बच्चो को प्रसन्न रहना सिखाया है। जिस समय उनको मान और अपमान का ज्ञान नहीं होता—अपनी किसी अच्छाई और बुराई को ही वे समझ नहीं पाते, उनकी वह अवस्था बहुत अच्छी होती है। भूख लगने पर वे रोना जानते है। शरीर में कष्ट होने पर, वे बिलबिलाने का ज्ञान रखते हैं, किन्तु इस प्रकार का कोई कष्ट न होने पर वे जिस प्रकार हंसते है मुस्कराते हैं और खेलते हैं उसे देखकर किसको प्रसन्नता नहीं होती !

लड़कियां जब तक, लड़कियों के रूपमे रहती हैं, और अविवाहित जीवन अपने माँ-बाप के घर मे बिताती हैं, उस समय तक वे प्राय. प्रसन्न दिखाई देती हैं। परन्तु विवाह हो जाने के बाद जब वे स्त्रियां बनती है तो उनके जीवन की प्रसन्नता मिटने लगती है। वे एक-एक क्षण मे अपनी असुविधाओं को अनुभव करती हैं। छोटी-छोटी बातो को अपने विरुद्ध पाकर वे अपने आपको अप्रसन्न बनाती हैं। इस प्रकार का स्वभाव उन्हें कभी प्रसन्न नहीं रख सकता।

जिन लड़कियों के स्वभाव बिगड़ जाते है और जो किसी छोटी-मोटी बात को लेकर रूठना और कुढ़ना सीख लेती है,

उनकी वह अवस्था भी सुख और प्रसन्नता में नहीं बीतती। कहने का अभिप्राय यह है कि चाहे लड़कियां हों अथवा स्त्रियाँ, यदि वे प्रसन्न रहना नहीं जानतीं तो प्रसन्नता उनके जीवन के लिए बहुत दूर की वस्तु हो जाती है। सत्य यह है कि प्रसन्नता उनके लिए होती है जो उनकी रक्षा करना जानते हैं। हम सबको इस बात के समझने की जरूरत है कि प्रसन्नता ही हमारे जीवन का सुख है और वह प्रसन्नता हमको अपने स्वभाव से ही मिलती है।

जो स्त्रियां प्रसन्न नहीं राहा करतीं, प्रत्येक समय उनके हृदय में एक जलन और कुढ़न-सी रहा करती है। उनका न तो स्वास्थ्य ठीक रहता है और न उनके विचार अच्छे होते हैं। ऐसी भी लड़कियां और स्त्रिया होती हैं कि अनेक प्रकार की विरोधी बातों के होने पर भी सदा प्रसन्न रहती हैं। उन का फूल-सा मुख-मण्डल सदा हंसता हुआ दिखायी देता है। उनका यह स्वभाव उनके स्वास्थ्य की वृद्धि में सहायता करता है और जीवन भर उन्हें सुखी एवम् सौभाग्य-वती बनाता है।

सुखी और प्रसन्न रहने के लिए मनोरंजन की आवश्य-कता होती है। मनोरंजन का मतलब यह है, कि उस प्रकार की बातें करना और सुनना जिस से चित्त प्रसन्न होता है, मनोरंजन कहलाता है। मैंने कुछ लोगों को देखा है कि वे स्वभावतः मनोरंजन प्रिय होते हैं। मनोरंजन प्रियता पर किसी अवस्था का प्रभाव नहीं पडता। लडकों और लड़कियों को भी मैंने मनोरंजन प्रिय देखा है और वूढ़े स्त्री-पुरुषों में भी उसके दर्शन मैंने किये हैं। परन्तु जिनके स्वभाव में मनोरंजन और विनोद नहीं होता, वे किसी भी अवस्था

मे प्रसन्न नहीं रहा करते।

स्त्रियों को इन बातों के समझने की अधिक जरूरत है। यों तो उनको अप्रसन्न रखने वाली अनेक प्रकार की असुविधाओं में रहना ही पड़ता है, किन्तु उनके स्वभाव की त्रुटिया भी उनको सदा अप्रसन्न बनाये रखती है। किसी के कुछ कह देने पर उनके बिगड़ने में देर नहीं लगती। मामूली बातों में भी वे रूठ जाती हैं। और कई-कई दिनों के लिए अपना मुह लटका लेती हैं। उनके इस स्वभाव से उनको स्वयम् कष्ट मिलता है और घरके लोग भी उनसे दुखी रहा करते है। यह स्वभाव बहुत दूषित होता है।

मैं तो उन आदमियों को भी जानती हू जो बड़ी से बड़ी विपदाओं के समय भी बहुत धैर्य और साहस से काम लेते है। इसके सबंध में मैंने साठ वर्ष के एक आदमी को देखा है। उसका बीस वर्ष का एक युवक लड़का कुछ दिन की बीमारी पाकर मरा था। घरके भीतर न जाने कितनी स्त्रिया जोर-जोर से रो रही थीं। घर के बाहर आदमियों का समूह आसू बहा रहा था। परन्तु जिसका जवान लड़का मरा था, उस की आंखों मे एक भी आँसू न था। इतना ही नहीं, वह दूसरों को शॉति और धैर्य से काम लेने की शिक्षा दे रहा था। उस आदमी को मैंने आश्चर्य के साथ देखा और कुछ देर तक समझने का प्रयत्न किया। उसकी इस दशा को देख कर एक आदमी ने कुछ पूछा तो उस को उत्तर देते हुए उसने कहा—

जो होना था, हो गया। बीमारी में सभी प्रकार की औषधि की गयी। कोई भी उपाय बाकी नहीं रखा गया। इसके बाद भी यदि मृत्यु हो जाती है तो आदमी का

क्या वस है। रोने और सिर पीटने से मरने वाले को जीवन नहीं मिल सकता। यही सोच कर शांत रहना पड़ता है।

उसकी बात को सुनकर, मुझे बड़ा संतोष मालूम हुआ। उसकी प्रशंसा करते हुए मैंने कहा—आप बहुत समझदार हैं। विपत्ति के पड़ने पर मनुष्य को धैर्य से ही काम लेना चाहिये। अनेक स्त्री-पुरुषों के बीच मे खड़े होकर मेरी बात का उत्तर देते हुए उसने कहा—यदि शान्ति और धैर्य से काम न लिया जाय, रो-रोकर सिर पीटा जाय और चिल्लाया जाय तो उस से कुछ लाभ नहीं होता। बल्कि रोने और चिल्लाने वाले स्वयम् बीमार पड़ जाते हैं और अपने आप को एक रोगी बना देते हैं।

मैंने कहा—आप सही कहते हैं।

वास्तव में यही बात है। विपद का पहाड़ टूटने पर भी मनुष्य बुद्धि से काम ले सकता है और साहस के साथ अपनी रक्षा कर सकता है। यह तो हुई बड़ी-से-बड़ी विपदाओं की बात। अब उनके स्वभाव पर हमें विचार करना चाहिये जो मामूली बातों को लेकर घर की शांति को भंग करते हैं। स्वयम् अपनी रोने वाली सूरत बना लेते हैं और घर के सभी छोटे-बड़ों के सामने एक मुर्दनी पैदा कर देते हैं। इसके संबंध में मुझे स्त्रियों से अधिक शिकायत है। उन्हें अपना यह स्वभाव बदलने की जरूरत है।

सदा प्रसन्न रहने से हमारे शरीर और मन का विकास होता है। चित्त को उल्लास प्राप्त होता है। अपने आप को सुख मिलता है और दूसरों को भी सुखी बनाया जा सकता है। जिस घर के स्त्री और पुरुष प्रसन्न रहते हैं।

और विशेष कर जिस परिवार की स्त्रियाँ सदा प्रसन्न रहा करती हैं। अनेक प्रकार की कठिनाइयों में भी वह घर और परिवार सदा फूलता और फलता है। स्त्री के जीवन का यह एक बड़ा गुण है।

जिस प्रसन्नता के द्वारा हमारा इतना लाभ होता है, उसी को प्राप्त करने के लिए मनोरंजन हमारी सहायता करता है। स्त्रियों को इसे समझना चाहिये और अपने स्वभाव को उसके अनुकूल बनाना चाहिये। मन को प्रसन्न करने वाला मनोरंजन से अधिक कोई दूसरा अच्छा साधन नहीं है। उससे उसे स्वयम् सुख मिलता है और दूसरों को भी सुख प्राप्त होता है।

मनोरंजन मनुष्य जीवन का एक ऊंचा गुण है। इसका अर्थ समझने में प्रायः लोग भूल करते हैं। और उसका मतलब हँसी-मजाक के साथ लगा लेते हैं। मनोरंजन का यह अभिप्राय नहीं है। किसी की हँसी करने का अर्थ यह होता है कि उसका अपमान किया जाय। मनोरंजन कभी किसी का अपमान नहीं चाहता, हँसी और मजाक से कभी-कभी विरुद्ध वातावरण पैदा हो जाता है और सहज ही एक अनुचित उत्पात पैदा हो जाता है। इसके फल-स्वरूप बड़ी-बड़ी लड़ाइयां होती देखी गयी हैं।

मनोरंजन का यह अर्थ नहीं है। उसका स्पष्ट भाव यह है कि बात कहने वाला भी प्रसन्न होता है, और सुनने वालों को भी उससे सुख मिलता है। जहां तक उसका यह अर्थ निकलता है, वहीं तक मनोरंजन कहलाता है। उसके विरुद्ध जो कुछ होता है, न तो वह मनोरंजन कहलाता है और न उसे कोई अच्छा समझता है।

प्रत्येक स्त्री को सदा प्रसन्न रहने की आवश्यकता है।

इसीलिए स्त्रियों को मनोरंजन का महत्व जानने की जरूरत है। इसका संबंध स्वभाव से होता है और छोटी अवस्था से ही इस प्रकार का स्वभाव बनाया जाता है।

हंसना और मुस्कराना

हंसना और मुस्कराना हमारे जीवन का और स्वभाव का एक सुन्दर गुण है। यह सभी को नहीं प्राप्त होता। जिन्हें अपने जीवन में हसने का अवसर मिला है, मेरी समझ में वे स्त्रियां सौभाग्यशालिनी और पुरुष सौभाग्यवान हैं। सच-मुच हमारे जीवन में इसका ऊंचा स्थान है।

यदि सच्चाई के साथ हम मनुष्य के जीवन को देखें, तो उसके दो ही रूप दिखायी देंगे। हंसना और रोना। हंसना सुख और सौभाग्य का परिचय देता है और रोना किसी आपत्तिकाल में ही होता है। ये दोनों बातें हमारे जीवन की अलग-अलग हैं। अनेक अवसरों पर मनुष्य हसता है। प्रसन्न होता है और ऐसी भी घटनायें आती हैं, जिनमें उसे रोना पड़ता है। ये दोनों बातें मनुष्य के जीवन में बराबर चलती हैं।

कोई भी मनुष्य रोना नहीं चाहता। रोना पसंद भी नहीं करता, किंतु जीवन की कटुता और कठोरता रोने के लिए उसे मजबूर करती है। सुख और दुख हंसने और रोने के ही रूप हैं। सुख में हंसा जाता है और दुख में रोना पड़ता है। छोटे-से-छोटा दुख भी हमारे रोने का कारण बन जाता है। साधारण दुखों में मनुष्य यदि नहीं रोता तो वह रोने की सूरत बना लेता है।

सचमुच हंसना हमारे जीवन का एक सुख है। यह सभी को नहीं मिलता। ऐसा कोई न मिलेगा जो रोना चाहता

हो, परन्तु प्रत्येक स्त्री-पुरुष में हंसने और प्रसन्न रहने की अभिलाषा होती है। प्रसन्नता ही हमारे जीवन का सुख है। यह सभी जानते हैं। लेकिन हम में से कितने लोग इस सुख के अधिकारी हैं, यह एक विचारणीय प्रश्न है।

इन बातों को पढ़ कर लड़कियां और स्त्रियाँ कह उठेंगी अथवा मन-ही-मन सोचने लगेंगी, "हंसना और प्रसन्न रहना तो सब कोई चाहता है, लेकिन वह तो बड़े भाग्य से मिलता है। बिना कष्ट के कोई सेवा नहीं करता।" इस प्रकार की बातों का सोचना लड़कियों और स्त्रियों के लिये स्वाभाविक है। मैं भली प्रकार इस बात को जानती हूं। एक सयानी लड़की की बात मुझे याद आ रही है। उसकी अवस्था तेरह-चौदह वर्ष की थी, देखने में अच्छी थी, परन्तु वह प्रसन्न बहुत कम रहती थी। उसकी माँ, उसके इस स्वभाव से बहुत परेशान रहती थी और प्रायः उसकी शिकायत किया करती थी। मैंने एक बार हंसते-हंसते उस से पूछा—

तुम बहुत चुप चाप क्यों रहती हो ?

उसने सहज ही उत्तर दिया—चुप चाप कहाँ रहती हू। जब कोई बोलता है, तो मैं भी बोलती हूं।

मैंने कहा—मेरा यह अभिप्राय नहीं है।

वह चुप-चाप सुन रही थी। मैंने फिर कहा—तुम्हारी मा, तुम्हारी शिकायत किया करती हैं कि तुम दूसरी लड़लियों की तरह प्रसन्न नहीं रहती हो।

माँ की यह शिकायत उसे अच्छी न लगती थी। इसी लिये उसने उत्तर देते हुए कहा—वे ऐसा ही कहा करती है, और प्रसन्न कैसे रहा जाता है

मैंने कहा—तुम्हारे साथ की लड़कियों का भी तो यही कहना है। तुम्हारे प्रसन्न न रहने से, तुम्हारी मां दुखी रहती हैं। वे चाहती हैं कि तुम दूसरी लड़कियों की भांति हंसो और प्रसन्न रहो।

उसकी समझ में यह बात न आयी। उसका स्वभाव कुछ ऐसा बन गया था, जिसके लिये वह मजबूर थी। मैंने समझाने की कोशिश की, लेकिन जो कुछ भी मैंने कहा, वह उसका विरोध करती रही।

जब मेरी बातें उसके साथ हो रही थीं, उस समय वह अकेली मेरे पास थी। थोड़ी देर में उसकी मां आ गयी और उन्होंने हम दोनों की बातों को सुन कर कहा—

न जाने क्यों इसमें ऐसी आदत पड़ गयी है। अभी तो इसका ब्याह भी नहीं हुआ। किसी प्रकार की चिन्ता भी इसके सामने नहीं रहती।

मुझे उनकी बात को सुन कर हंसी आयी। मैंने पूछा—ब्याह के बाद क्या हंसना और प्रसन्न रहना भूल जाता है?

उन्होंने कहा—भूल नहीं जाता, लेकिन गृहस्थी का भार पड़ने पर अनेक चिन्तायें पैदा हो जाती हैं। ये चिन्तायें लड़कियों को नहीं रहा करतीं। उन को न बनने से मतलब है न बिगड़ने से। गृहस्थी का बोझ तो घर के स्त्री-पुरुषों पर होता है। इसीलिए लड़कियाँ अपनी इस उम्र में फूल की तरह हंसती और खेलती हुई दिखाई देती हैं।

मै उनकी बातों को सुन कर चुप हो गयी। और कुछ सोचने लगी। उन्होंने उसी समय फिर कहा—हमारे घर में किसी प्रकार का दुख नहीं है। यही एक लड़की हमारी आखों के सामने है। खाने-पीने का भी सुख है, लेकिन अपने इस

स्वभाव के कारण ही इसके शरीर मे खून नहीं है।

उनकी बात को सुन कर मैंने एक बार उस लड़की की ओर देखा। उसका रंग गोरा था। लेकिन शरीर बहुत दुबला-पतला था। उसकी मा उसे स्वस्थ्य और अच्छी दशा में देखना चाहती थी, किन्तु ऐसा न होने के कारण उसका जी दुखी रहता था।

मैंने उस लड़की से कहा— तुमने इन बातों को सुना ?

उसका चेहरा और भी उदास हो गया था। उसने कहा—सुना नहीं क्या। मैं क्या बहरी हूं।

मैंने देखा, इतनी देर की बातों के बाद भी उसके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। हम दोनों की बातों से कुछ लाभ उठाने की अपेक्षा वह उल्टा सोच रही थी। उसका चेहरा इस बात का प्रमाण दे रहा था। उसको मालूम हो रहा था कि हम दोनों से उसकी निन्दा हो रही है।

ऊपर लिखा जा चुका है कि हंसने और मुस्कराने का हमारे जीवन मे एक महत्व-पूर्ण गुण है। हृदय की प्रसन्नता में यह व्यवस्था उत्पन्न होती है। शरीर के स्वास्थ्य और सुख के साथ इसका बहुत-कुछ सम्बन्ध है। ऊपर जिस लड़की की घटना बतायी गई है, उसके सम्बन्ध मे यह समझ लेने की जरूरत है कि जो प्रसन्न चित्त नहीं रहा करते, वे स्वयम् अपने शरीर को हानि पहुँचाते हैं। किसी कारण से चिन्तित रहना और बात है, किन्तु उस प्रकार का स्वभाव बना लेना एक दूसरी बात है। इससे हानि के सिवा लाभ नहीं होता।

सदा प्रसन्न रहने से शरीर को विकास मिलता है। मन और आत्मा शुद्ध रहता है। बड़ी संख्या मे लोगों का विश्वास

है कि प्रसन्न और अप्रसन्न रहना अपने जीवन की परिस्थितियों पर है। उनका यह भी कहना है कि जब प्रसन्नता के सामान इकट्ठे होते हैं तो मनुष्य अपने आप प्रसन्न होता है। लोगों का यह विश्वास सही नहीं है। जीवन को परिस्थितियाँ न तो सुखी बनाती हैं और न दुखी। मैं उन स्त्री-पुरुषों को जानती हूं, जो अनेक प्रकार की चिंताओं में भी प्रसन्न चित्त रहा करते हैं और उन लोगों को भी जानती हूं कि जो बिना किसी कारण के भी मलीन मन रहा करते है। वास्तव में प्रसन्न रहना मनुष्य के स्वभाव पर है।

यह ठीक है कि हंसते और मुस्कराते रहने का स्वभाव कुछ लोगों मे पैदायशी होता है। और यह भी ठीक है कि इस प्रकार का स्वभाव बहुत कम स्त्री-पुरुषों मे पाया जाता है। लेकिन यह तो हमारे समझने की बात है और उससे लाभ उठाने की आवश्यकता है कि मनुष्य को अपना ऐसा स्वभाव बना लेना चाहिये।

अपने सामने किसी प्रकार का भी प्रश्न पैदा होने पर अथवा विरुद्ध परिस्थिति के उत्पन्न होने पर इस बात का हृदय में विश्वास होना चाहिये कि उसका कुछ-न-कुछ उपाय है और अपने आप उसका रास्ता निकलेगा। इसीलिये चिंता करना, अथवा मलीन चित्त होकर रहना अच्छा नहीं है। इससे किसी प्रकार का लाभ नहीं होता।

मनुष्य के जीवन मे ऐसी बातें बनी ही रहती हैं, जिनको यदि सोचा जाय और उन पर ध्यान दिया जाय तो मन में एक प्रकार का संकट उत्पन्न होता है। विरुद्ध बातों के प्रति हम जितनी उपेक्षा कर सकें—जितनी ही लापरवाही से काम ले सकें, उतना ही अच्छा है। जीवन में शत्रु और मित्र बने

ही रहते हैं। यदि हम अपने जीवन में प्रसन्न रहना चाहती हैं तो हमारे लिए आवश्यक है कि मित्रों की मित्रता पूर्ण बातों को हम बार-बार सोचें और शत्रुओं के विरुद्ध व्यवहारों को हम कभी स्मरण न करें।

ठीक इसी प्रकार जीवन की विरुद्ध बातें हैं। हम भूल न करें, किसी को निंदा करने का मौका न दें, यह हमारे लिये बहुत जरूरी है और इसी में हमारी बुद्धिमत्ता है, किंतु इस पर भी यदि कुछ विरुद्ध बातें हमें जानने और समझने को मिलें तो उनकी परवाह न करके, हमें सदा प्रसन्न रहने की चेष्टा करना चाहिये।

हंसना एक स्वाभाविक गुण है, किंतु इस प्रकार के गुण सीखे भी जाते हैं। हंसने और मुस्कराने वाला मनुष्य सभी को प्रिय मालूम होता है। वह अपनी दृष्टि में तो अच्छा है ही, दूसरों को भी अच्छा लगता है। हंसने और मुस्कराने की प्रशंसा बड़े-से बड़े विद्वानों ने की है और यह बताया है कि इस प्रकार का स्वभाव मनुष्य को सुखी और सफल बनाता है।

मैं नहीं जानती कि स्त्रियों का वर्त्तमान सीमित जीवन इसके सम्मान को कहां तक स्थान देगा। परन्तु यह सत्य है कि स्त्रियों के जीवन का यह एक प्रशसनीय गुण है। घर के आदमी और बाल-बच्चे घर की स्त्रियों के इस प्रकार के स्वभाव से सुख पाते हैं और इस प्रकार के घर सदा आनन्द पूर्ण बनते हैं। स्त्रियों को चाहिये कि अपने इस गुण को वे आदर दें और उसी के अनुसार अपना स्वभाव बनावें।

लड़कियों और लडकों मे हंसने और मुस्कराने का पैदायशी स्वभाव होता है। छोटे-छोटे बच्चे हंसते हुए अच्छे

लगते हैं। प्रकृति ने उनके स्वभाव में यह गुण पैदा करके, उनके सौन्दर्य को बढ़ाया है। प्रकृति स्वयम् इस प्रकार के गुण से सम्पन्न है। प्राकृतिक दृश्य के प्रेमी विद्वान, प्रकृत्ति के इस गुण को सदा अनुभव करते हैं। वे प्राकृतिक, दृश्यों में इस प्रकार के भावों को देखकर सदा प्रसन्न होते हैं। वे जानते हैं कि हमारे जीवन में उसका कितना बड़ा स्थान है।

प्रत्येक मनुष्य के जीवन का अलग-अलग उद्देश्य होता है। सभी के अलग- अलग कार्य होते हैं। हम को यह कभी न भूलना चाहिये कि किसी भी प्रकार के कार्यों की सफलता के लिये प्रसन्न रहना और हंसना एक आवश्यक गुण है।

बड़े-से-बड़े विद्वानों और महान पुरुषों के जीवन में भी हमें यह गुण दिखायी देता है। जो विद्वान मानव-जीवन की कठिनाइयों को हल करने में सदा लगे रहते हैं और बड़ी-से-बड़ी समस्याओं के सुलझाने का कार्य करते हैं, वे भी हंसते हैं और प्रसन्न रहने की चेष्टा करते हैं। यदि वे ऐसा न करें और सदा चिन्तित ही बने रहें, तो उनके शरीर को एक बड़ी क्षति उठानी पडती है। उससे बचने के लिये, उनको इस प्रकार के गुणों से सदा लाभ उठाना पडता है।

रोगियों को सेहत देने वाला एक डाक्टर यदि प्रसन्न रहना नहीं जानता तो वह स्वयम् एक रोगी है। मैंने देखा है कि जो डाक्टर रोगियों के साथ व्यवहार करते समय जितना ही प्रसन्न रहता है, और हस-हंस भर रोगियों से जितनी ही बातें करता है, रोगियों को उतना ही लाभ पहुँचता है। इसके स्थान पर यदि वह रोगियों की दशा देख कर चिन्तित रहने लगे तो रोगियों को लाभ पहुँचाना तो दूर, वह अपने आप को स्वयम् रोगी बना देता है। डाक्टर के जीवन

की सफलता इसी में है कि वह स्वयम् प्रसन्न रहे और अपने रोगियों को प्रसन्न रखे।

यही अवस्था दूसरे व्यवसायियों की भी है। किसी मुकदमें में फंसा हुआ आदमी जब एक वकील के पास पहुँचता है और अपनी विपदपूर्ण कथायें सुनाता है, तो एक चतुर वकील क्षण-भरमें उसको सान्त्वना देने की कोशिश करता है और उस आदमी से ऐसी बातें करता है जिससे वह अपनी विपद को बहुत हलका समझने लगता है। मुकदमें से छुटकारा पाना और न पाना पीछे की बात है। सबसे पहला प्रभाव तो यह पड़ता है कि वकीलके साथ बातें करके वे अपना विपद को कम-से-कम समझने लगता है।

जीवन के किसी भी व्यवसाय में हमारे प्रसन्न रहने का बहुत प्रभाव पड़ता है। स्त्रियों के जीवन में इस गुण को मैं स्थान-स्थान पर अनुभव करती हूं। मैं जानती हूं कि घर के सभी छोटों और बड़ों को सुखी और प्रसन्न बनाने का कार्य घर की स्त्रियों पर होता है। यह कार्य बहुत उत्तरदायित्व का है। जो स्त्रियां समझदार होती हैं, बड़ी बुद्धिमानी के साथ वे इसे निभाती हैं।

संसार का बड़ा-से-बड़ा सुख जिस कार्य को नहीं कर सकता, स्त्रियों का हंसता और मुस्कराता हुआ मुख-मण्डल साधारण ही उस में सफलता पाता है। हमारे जीवन में हंसने और मुस्कराने का इसीलिए महत्वपूर्ण स्थान है।

ससुराल की कहानी

ससुराल, लड़कियों का अपना घर है, समाज का ऐसा नियम है। जब तक व्याह नहीं होता, लड़कियां अपने माता-पिता के घर रहती हैं। जन्म से लेकर व्याह तक उन्हें जिस

घर में अपने दिन काटने पड़ते हैं और सुख-दुख में रह कर अपना जीवन निर्वाह करना पड़ता है, वह घर एक दिन छूट जाता है। विवाह के बाद ससुराल का घर, लड़कियों का घर बनता है। समाज की यह व्यवस्था सभी देशों और जातियों में समान रूप से पायी जाती है।

इस नियम के अनुसार हमें उसे स्वीकार कर लेना पड़ता है। विवाह के पूर्व माता-पिता के साथ रह कर जिस स्वतंत्रता और स्वाधीनता के साथ लड़कियों के जीवन के दिन कटते हैं, उसे प्रत्येक लड़की और स्त्री जानती है। अपने घर, ससुराल पहुँचने पर उनको और भी अधिक आदर मिलना चाहिये। उनकी स्वाधीनता की अधिक रक्षा होनी चाहिये और जीवन के अधिक अधिकारों के साथ, उनको सुविधायें मिलनी चाहिये। परन्तु ऐसा नहीं होता। क्यों नहीं होता? यह समझ में नहीं आता। उसका समझना आसान नहीं है, समाज के नियमों के साथ हमारा जीवन बंधा हुआ है। उन नियमों में जितना कड़वापन नहीं है, उतनी कटुता उनके व्यवहारों में है। विवाह के बाद ससुराल पहुंचने पर जिस नवीन संसार में एक युवती को प्रवेश करना पड़ता है, उसे वह पहले से नहीं जानती।

जहां तक समझ काम करती है, ससुराल स्त्रियों के लिये अधिक सुविधाजनक होनी चाहिये। परन्तु ऐसा नहीं है। यहां पर ससुराल की कहानी में जिस युवती की कथा लिखी जायगी, वह बहुत रोमांचकारी है। उस लड़की का नाम था, सावित्री।

अपने माता-पिता की वह दुलारी लड़की थी। पिता का घर, धनी न था परन्तु गरीबी भी न थी। माता और पिता—

दोनों ही शिक्षित थे। इसी लिये उन्होंने अपनी लड़की को शिक्षित बनाने की इच्छा की थी। सावित्री छोटी अवस्था से ही सुन्दर लड़की थी। ईश्वर ने उसे सुन्दरता दी थी। घर से लेकर, बाहर तक--सभी उसका आदर करते थे।

सावित्री मे एक गुण था। वह खूब बातें करती थी। बड़ी अच्छी बातें करती थी। माता और पिता ने उसे स्वतंत्रता दे रखी थी। बिना किसी भय के वह बोलती थी, परंतु उसकी बातचीत में किसी प्रकार की अशिष्टता न होती थी।

सावित्री के साथ की लड़कियाँ उसका आदर करती थीं। उसके स्कूल की अध्यापिकायें, उसको सम्मान देती थीं। इसलिये कि सावित्री की बातों में मनोरंजन बहुत होता था। वह हंसती थी और दूसरों को भी हंसाती थी। इसीलिये उसे स्कूल मे सम्मान पूर्ण स्थान मिला था। यदि वह किसी दिन स्कूल न जाती थी, तो उसका एक अभाव सबको मालूम होता था। सावित्री जब आठवीं क्लास में पढ़ती थी, उन्हीं दिनों में उसके पिता की मृत्यु हो गई। फल यह हुआ कि उस वर्ष के बाद सावित्री की पढाई बन्द हो गई। वह पढ़ने लिखने मे होशियार थी। किन्तु पिता के न रहने पर उसका पढ़ना टूट गया। वह घर पर रहने लगी।

सावित्री का पिता अपनी लड़की का ब्याह किसी योग्य लड़के के साथ करना चाहते थे। इसके संबंध मे वे प्रायः बातें करते और अपनी स्त्री से कहा करते—हम सावित्री का ब्याह ऐसे घर में करेंगे, जहां उसको किसी प्रकार का कष्ट न होगा।

उनकी बातों को सुनकर माँ कहती–माता–पिता तो यही

चाहते हैं, लेकिन जो भाग्य में होता है, वही होता है।'

यह सुनकर उसके पिता कहते–भाग्य तो अपने बनाने से बनता है और बिगाड़ने से बिगड़ता है। हम भाग्य को अलग से नहीं समझा करते। सावित्री को हम इतना पढ़ा-लिखा देंगे, जिससे ससुराल के लोग अपने आप उस का आदर करेंगे। दुख और दुर्भाग्य तो उनके जीवन में होता है, जिनके साथ किसी प्रकार की अयोग्यता होती है। हमारी सावित्री तो अंधेरे घर का प्रकाश बनेगी।

सावित्री के माता और पिता, प्रायः आपस में इस प्रकार की बातें करते। सावित्री उन बातों को सुना करती थी। वह छोटी न थी। सभी बातों को सुनकर वह अनेक प्रकार की बातें सोचा करती थी।

पिता के मर जाने के बाद सावित्री का सौभाग्य बिगड़ गया। उसकी शिक्षा का क्रम टूट गया। माता समझदार थी, उसने किसी प्रकार सावित्री के विवाह का प्रबंध किया। सगे सम्बन्धियों के द्वारा वर खोजा गया और सोलह वर्ष की अवस्था में सावित्री का विवाह कर दिया गया।

जहां व्याह किया गया, उस घर की अनेक प्रकार की प्रशंसायें सावित्री की माँ से की गयीं। इसलिए उसको संतोष मिला। सावित्री सुख में रहेगी, यह सोचकर, सावित्री की माँ का दुख हलका होने लगा। सावित्री के पिता व्याह के लिए एक अच्छी सम्पत्ति छोड़ कर मरे थे। इसीलिए बिना किसी विघ्न के व्याह का कार्य समाप्त हुआ और सावित्री अपनी माता तथा सगे-सम्बन्धियों से विदा होकर ससुराल चली गयी।

कुछ दिनों तक सावित्री को ससुराल में कोई नयी बात नहीं मालूम हुई। परन्तु उसके बाद ससुराल का अंकुश विरुद्ध

काम करने लगा। सावित्री ने जिस प्रकार स्वतंत्र जीवन पाया था उसके लिए ससुराल में स्थान न था। ससुराल के नियमों के अनुसार उसे बोलना न आता था। रहन-सहन का तरीका भी ससुराल में किसी को पसन्द न था।

सावित्री के जीवन में एक बड़ी असुविधा पैदा होने लगी। जन्म से लेकर सोलह वर्ष की अवस्था तक उसने जिस प्रकार बोलना और हंसना सीखा था, सोलह वर्ष के बाद वह सब अनुचित सुनायी पड़ने लगा। सावित्री की सास बहुत कठोर थीं। बात-बात में डाँटना और डपटना वह अपना एक कर्त्तव्य समझती थीं। सावित्री के सामने ससुराल में बड़ी कठिनाई उपस्थित हो गयी। एक बड़ी अवस्था तक उसने जिस प्रकार का अपना स्वभाव बनाया था, और जिसके कारण अपने माता-पिता के घर में उसे आदर मिला था, वही स्वभाव उसके लिए कटुता का रूप धारण करने लगा। अपनी जिस भोली सूरत, मधुर मुस्कान और मनोरंजन पूर्ण बातों के लिए वह अपने स्कूल में सम्मान पा सकी थी, ससुराल में वही उसके अनादर का कारण बन गया। सावित्री की समझ में न आता था कि उसे क्या करना चाहिए। घर के लोगों के अकुश से वह बहुत घबरा उठती थी, और अनेक प्रकार की बातें सोचने लगती थी।

एक बार स्वभाव जब बन जाता है तो उसका बिगड़ना कठिन होता है। बहुत अंशों में तो यह भी सही है कि बना हुआ स्वभाव बिगड़ कर फिर दूसरा नहीं बना करता। सावित्री के सामने यह एक बड़ी कठिनाई थी। विवाह के पूर्व सावित्री के जिन गुणों की लोगों ने प्रशंसा की थी, वही गुण उसके अनादर पाने के पूर्ण रूप से कारण बन गये।

सावित्री ससुराल के नियमों के अनुसार चलना चाहती थी और वहां के नियमों के साथ शत्रुता नहीं रखना चाहती थी। परन्तु रोज ही उससे भूल होती थी। यही कारण था कि सावित्री से सास का रोज उत्पात होता रहता था। सावित्री के व्यवहारों में उसकी सास को अशिष्टता और जङ्गलीपन दिखाई देता था। इस के लिए वह बड़ा-बड़ा उत्पात करती थी। और सहन न कर सकने पर भी सावित्री कुछ कहने की हिम्मत न करती थी। असह्य होने पर चुपके चुपके किसी कोठरी में जाकर रो लेती थी।

इतने पर भी सास को संतोष न था। वह दूसरी स्त्रियों से सावित्री की निन्दा किया करती थी। सावित्री ऐसा नहीं चाहती थी। इस से उसे बहुत कष्ट होता था। दूसरों से निन्दा करने का सावित्री की सास का स्वभाव था। एक दिन रोज की भाँति अपने आंगन मे बैठी हुई चार-पांच स्त्रियों के सामने उसने बकना आरम्भ किया—

अगर मैं जानती कि तुम इस प्रकार की चाल-चलन की हो तो तुम्हारे साथ ब्याह करके मैं अपने लड़के की जिन्दगी खराब न करती।

सावित्री ने कुछ उत्तर न दिया। उसने सोचा जवाब देने से बात बढ़ेगी और टोला-पड़ोस की स्त्रियों में मेरी हसी होगी। यह सोच कर वह चुप बनी रही, सावित्री की सास तो बर्बर स्वभाव की थी ही, बैठी हुई स्त्रियों को भी इस प्रकार का उत्पात अच्छा लगता था। इस लिए इनमें से एक स्त्री ने बातों को उठाते हुए सावित्री से कहा—तुम इतनी बड़ी हो गयी हो, विवाह के दो साल हो चुके हैं, तुम्हें बोलना और बताना भी नहीं आता है। इस के लिये तुम्हारी सास को रोज

ही रोना पड़ता है।

सावित्री ने कुछ उत्तर न दिया। वह नहीं जानती थी, मैं अपराध क्या करती हूं और न उस की समझ में यही आता था कि मेरे कारण मेरी सास को क्यों रोज रोना पड़ता है। इसी समय उसकी सासने अकड़ते हुए कहा—

मौत आवे ऐसे मां-बाप को, जिन्होंने इनको पैदा किया और एक भी बात अच्छी नहीं सिखायी।

सावित्री अपनी सास को अम्मा कहा करती थी और उसकी बातों का विरोध करने की कभी हिम्मत न करती थी। अपने माता-पिता के संबंध में इस प्रकार की बात को सुन कर उसे बहुत दु:ख हुआ। उसने आखों के आसू पोंछ कर कहा—मेरे बाप तो मर ही चुके हैं। अब उनकी मौत क्या होगी। अगर वे बने होते तो मुझे यह सब क्यों देखने को मिलता।

सावित्री की सास इस बात को सुनते ही आग की तरह जल उठी। उसने अनेक प्रकार की ऐसी बातें कहना आरम्भ किया, जिनका सहन करना कठिन था। परन्तु सावित्री के मुह से फिर कोई बात नहीं निकली। बैठी हुई स्त्रियां, उसकी हां-में-हां मिलाती रहीं।

सावित्री के साथ उस की कलह दिन-पर-दिन बढ़ती गयी। इस कलह का कारण केवल इतना ही था कि सावित्री को उस प्रकार बोलना और बात करना नहीं आता जिस प्रकार ससुराल में नव वधुओं को करना पड़ता है। व्यवहार और बर्त्ताव भी सावित्री का कुछ भिन्न था। इसका फल यह हुआ कि सावित्री का जीवन दुखी रहने लगा। विवाह के पहले उसने जिस प्रकार का जीवन बिताया था, ससुराल आने पर वह उलट गया। उसने धीरे-धीरे अपने आप को

बदलने की कोशिश की और बहुत कुछ वह बदल भी सकी।

जीवन के इस परिवर्त्तन का सावित्री पर बुरा प्रभाव पड़ा। जो कभी खिन्न चित्त रहना जानती ही न थी, उसे मन मार कर वर्ष-के-वर्ष बिताने पड़े। प्रसन्नता और मनोरंजन जिसके स्वभाव का गुण था, उसे ससुराल में एक चोर और अपराधी की भांति जीवन बिताने के लिए, मजबूर होना पड़ा। सावित्री के जीवन में और भी अनेक परिवर्त्तन हुए।

ससुराल के अंकुश-पूर्ण जीवन मे सवित्री के लगभग तीन वर्ष बीते। उस की मा ने बार-बार सावित्री को बुलाने की कोशिश की, परन्तु ससुराल वालों ने सावित्री को भेजने से इन्कार कर दिया था। इधर बहुत दिनों से सावित्री का शरीर क्षीण हो रहा था। दुर्बलता बहुत बढ़ गयी थी और कई महीनों से उसके शरीर में ज्वर रहा करता था। इस बीमारी ने सावित्री की अवस्था बहुत नाजुक बना दी। इसका पता उसकी माँ को मिला। उस ने किसी प्रकार आग्रह कर के, सावित्री को अपने पास बुला लिया। मां के पास जाकर, सावित्री ने अपनी ससुराल की कहानी सुनायी। जब वह अपनी बातें कहती थी तो उस की आंखों से आँसू गिरते थे। मां के सामने भी अश्रुपात करने के सिवा और कुछ उपाय न था।

सावित्री की ससुराल की कहानी प्रायः सभी हमारे देश की लड़कियों की जीवन कहानी है। इस कहानी को सुन कर हृदय थर्रा उठता है। शरीर रोमाच हो उठता है! समाज की अवस्था अत्यन्त नाजुक है। नियम और व्यवस्था सत्य से बिल्कुल दूर है। जिन गुणों से लड़कियों और स्त्रियों का जीवन सुखी बन सकता है और, उनका इस प्रकार अप-

मान और अनादर ! कितने बड़े दुख की बात है।

पिछले पन्नों में मैंने मनोरंजन की प्रशंसा की है। हास्य और विनोद को जीवन में आवश्यक बताया है। मैंने यह भी बताया है कि इन गुणों के न होने पर हमारा जीवन एक बड़े अभाव को अनुभव करता है। उस अभाव का फल यह होता है कि हमारा जीवन सुखी नहीं हो पाता।

एक ओर इस प्रकार की आवश्यक बातें हैं और दूसरी ओर समाज के दूषित नियमों का यह अत्याचार है। पता नहीं, यह अन्याय समाज में कब तक चलेगा। देश की लड़कियों और युवतियों को कब तक इस अनाचार को सहन करना पड़ेगा ! इन सम्पूर्ण खराबियों की जड़ में एक मात्र अशिक्षा है।

बड़े दुख के साथ यह कहना पड़ता है कि हमारे जीवन का बहुत बड़ा दुर्भाग्य समाज के घृणित नियमों के कारण है। घरों के भीतर जिस प्रकार स्त्रियों के साथ पतित व्यवहार किये जाते हैं, वे कहीं नियमों के रूप मे दिखायी नहीं देते। परन्तु घरों और परिवारों की अवस्था जिस प्रकार दूषित है, वह ससुराल की कहानी के रूप में ऊपर लिखी जा चुकी है।

इस कहानी का अन्त करते हुए मैं इतना ही कहना चाहती हूं कि समाज से इस अन्याय और अत्याचार का शीघ्र ही नाश होगा और इस को मिटाने वाली देश की लड़कियां और स्त्रियां ही होंगी।

स्त्रियों में क्या बातें होती हैं

आपस में बातें करना और एक दूसरे के विचारों से लाभ उठाना मनुष्य के जीवन की विशेषता है। दूसरे जीव

भी बोलते हैं, लेकिन वे एक, दूसरे की बातों को कहां तक समझते हैं, मैं नहीं जानती। संसार के कितने ही लोगों के सम्बध में मैंने पढ़ा है कि वे अनेक पशुओं और पक्षियों की बातों के समझने का ज्ञान रखते थे। लेकिन वह अपने समझने की चीज नहीं है। मैं तो इतना ही जानती हूं कि मनुष्य एक, दूसरे से बातें करके बहुत-कुछ लाभ उठाते हैं।

आपस में मिलना, बातें करना और आवश्यक विषयों पर परामर्श करना हमारे जीवनका एक बड़ा गुण है। जो मनुष्य जितने ही अधिक समझदार हैं और विद्वान हैं, वे उतना ही अधिक इससे लाभ उठाते हैं। स्त्रियां भी आपस में मिलती हैं, बैठती-उठती हैं और बातें करती हैं। यहां तक उनमें और पुरुषों में कोई विशेष अन्तर नहीं है किन्तु यहाँ पर विचारणीय प्रश्न यह है कि वे आपस की बातों से कितना लाभ उठाती हैं ?

मैंने अनेक स्थानोंपर स्त्रियों के जीवन की त्रुटियों पर दृष्टि डाली है और उन के अभावों की आलोचना की है। साथ ही यह भी बताया है कि उन के अभावों का कारण क्या है। समाज के नियमों और सिद्धान्तों के कारण स्त्री-जाति को अनेक बातों से वञ्चित रहना पड़ा है, इस पर मैंने अनेक बार प्रकाश डाला है। जहाँ तक बातें करने और आपस में मिलने का प्रश्न है, मैं भली भांति जानती हूं, इस विषय में भी स्त्रियों का जीवन अनेक त्रुटियों से संबंध रखता है।

पुरुषों का कहना है कि स्त्रियां मे आपस में मिलने का एक अद्भुत गुण है, किसी नये स्थान पर पहुँचने पर वहां की स्त्रियों से मिलना और उनके साथ व्यवहार कर लेना, उनके स्वभाव में पाया जाता है। पुरुषों का यह अनुमान

सही है। मेरा भी यही अनुभव है। यात्रा में, रेलगाड़ी में अथवा परदेश में स्त्रियाँ, एक दूसरे के साथ जल्दी मिलने-जुलने लगती हैं। और सहज ही उनमें आपस में बातें आरम्भ हो जाती हैं। मैंने तो यह भी देखा है कि थोड़ी-सी-बातों के बाद ही वे एक दूसरे को अधिक समझ लेती हैं।

पुरुषों में यह बात नहीं है। किसी स्थान पर अधिक समय तक रहने पर भी वे एक दूसरे के साथ जल्दी मिल नहीं पाते। बातें होने का अवसर भी सहज ही नहीं आता। यदि एक परिवार अपना मुहाल छोड़ कर, किसी दूसरे में जाता है और एक नये घर में रहने लगता है तो उस परिवार की स्त्रियां अपने पड़ोसियों के साथ बहुत जल्दी परिचय प्राप्त कर लेती हैं। मैंने तो यहां तक देखा है कि वे जिस दिन अपने नये स्थान पर जाती हैं, उसी दिन उनकी बहुत-सी बातें निकटवर्त्ती स्त्रियों के साथ हो जाती हैं। पुरुषों में यह बात नहीं होती। वे आवश्यकता पड़ने पर ही, एक, दूसरे के सम्पर्क में आते हैं और यदि कोई संयोग उपस्थित न हो तो एक दूसरे के निकट रहते हुए भी वे लोग एक, दूसरे को न समझते हैं और न परिचय प्राप्त करते हैं।

इसी सिलसिले में स्त्रियों के जीवन की एक विशेषता और भी है। वे एक दूसरे के साथ थोड़े-से-थोड़े समय में इतनी अधिक घुल मिल जाती हैं कि वे अपनी सभी बातों को उनसे प्रकट करने में अथवा अनेक प्रकार के रहस्यों को दूसरी स्त्रियों से जान लेने में उन्हें देर नहीं लगती। स्त्रियों का यह स्वभाव किसी सीमा तक गुण के रूप में भी माना जा सकता है और अवगुण के रूप में भी।

स्त्री-स्वभाव की निर्बलता को लेकर लोगों का यह भी

कहना है कि स्त्रियां अपनी किसी बात को गुप्त नहीं रख सकतीं। इस प्रकार की धारणा रखने वाले स्त्रियों की इस कमजोरी पर अनेक उदाहरण देते हैं। इतना ही नहीं, पुराने समय में न जाने कितनी पुस्तकों में स्त्रियों की आलोचना की गयी है और उन आलोचनाओं में अनेक प्रकार की घटनायें बता कर यह सिद्ध किया गया है कि स्त्रियां इतनी बुद्धिहीन होती हैं कि वे अपने और अपने परिवार की बातों के रहस्य दूसरों को देकर स्वयम् विपद में पड़ जाती हैं और अपने परिवार को भी आपत्ति में डाल देती हैं।

लोगों का यह विश्वास और पुरानी पुस्तकों के लेख, केवल मिथ्या ही नहीं है, स्त्रियों के साथ द्वेष पूर्ण है। मैंने अन्यत्र, कहीं पर बताया है, कि पराधीनता के दिनों में हमारे देश का एक लम्बा समय ऐसा बीता है, जिसमें केवल वैराग्य को प्रोत्साहन दिया गया है। उस वैराग्य-काल में स्त्री-जीवन से इतनी अधिक घृणा प्रकट की गई है' जितनी सम्भव हो सकी है। उन दिनों की यह मूर्खता और नीचता, अनेक युगों के लिये देश की घातक बन गई है।

आज की परिस्थिति कुछ और है। शिक्षा और सभ्यता बदली हुई है। साधुओं और वैरागियों को केवल मूर्खों में ही स्थान मिल रहा है। आज का शिक्षित समाज उनसे घृणा करता है। देश के पतन का बहुत बड़ा कारण वैराग्यवाद हुआ है।

कुछ सीमा तक स्त्रियों की निर्बलता को मैं स्वीकार करूंगी कि वे किसी रहस्य को अपने पेट मे छिपा रखने की शक्ति कम रखती हैं। परन्तु यह दोषारोपण समूची स्त्री-जाति के सम्बन्ध में नहीं किया जा सकता। यदि पुरुष ईमानदारीसे

काम लें तो उन्हें स्वीकार करना पड़ेगा कि स्त्रियों में भी एक ऐसी संख्या मिलेगी, जो अत्यन्त गम्भीर और विश्वास पूर्ण होगी।

मैं स्वयम् न जाने कितने पुरुषों को जानती हूं जो किसी भी बात को अपने पेट मे रख नहीं सकते। कितने ही पुरुष ऐसे मिलते हैं जो अपने घरेलू मामलों की बातों को भी जब तक दूसरे से न कह दें तब तक उनका पेट फूलता रहता है। इस प्रकार के पुरुष अपनी इस दुर्बलता के कारण ही दूसरों के निकट उपहास के कारण बनते हैं।

इस प्रकार की दुर्बलता केवल स्त्रियों मे होती है, और पुरुषों मे नहीं है, यह नहीं कहा जा सकता। और न यही कहा जा सकता है कि अविश्वसनीय स्त्रियों की संख्या, अविश्वासी पुरुषों की अपेक्षा अधिक है। यदि कोई ऐसा कहता है तो उसकी मूर्खता है। इसलिये कि विश्वासी और अविश्वासी स्त्री-पुरुषों की गणना आज तक संसार में कहीं भी की नहीं गई। फिर भी यदि पुरुष स्त्रियों के सम्बन्ध में इस प्रकार के झूठे दोषारोपण करके ही प्रसन्न होना चाहते हैं तो यह उनका केवल दुराचार है।

स्त्री हो या पुरुष-इस प्रकार की निर्बलता का कुछ कारण होता है। शिक्षा और जीवन का अनुभव मनुष्य को योग्य और विश्वास-पूर्ण बनाता है। अनुभव का अभाव अविश्वास का कारण होता है। स्त्री और पुरुष—दोनों पर इसका एकसा प्रभाव पड़ता है। जीवन के अनुभव से यदि स्त्रियां दूर रखी गई हैं तो इसका अनुचित प्रभाव उन पर पड़ना ही चाहिए। इसके लिए स्त्री-समाज अथवा स्त्री-जीवन दोषी नहीं हो सकता।

इसके संबंध मे एक बात और है। निंदा करने का

स्वभाव अच्छा नहीं है। जहाँ तक त्रुटियों को दूर करने और उन के बदलने का प्रश्न है, समय-समय पर निंदा कुछ अच्छा काम भी करती है, परन्तु सदा-सर्वदा किसी की निन्दा ही करना और किसी को निन्दनीय समझ लेना अच्छा नहीं है इस का प्रभाव अच्छा नहीं पड़ता। पिछली अनेक शताब्दियों से पुरुषों का और उन की लिखी हुई पुस्तकों का व्यवहार स्त्रियों के साथ बहुत द्वेष पूर्ण रहा है। स्त्रियों को इससे लगातार हानि पहुँची है। इस प्रकार की हानि पहुँचाकर पुरुषों ने न केवल स्त्री-जीवन के महत्व को मिटाया है, वरन् समाज को रसातल में पहुंचा दिया है।

इस प्रकार की आलोचना में मैंने सयत भाषा का प्रयोग नहीं किया। मनुष्य के सामने एक ऐसा समय आता है, जब उसकी शिष्टता साथ नहीं देती। मैंने कभी भी आवेश से काम नहीं लिया। लेकिन कभी-कभी द्वेष-पूर्ण अन्याय को देख कर अशिष्ट शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है। अन्याय के प्रति यदि कठोर व्यवहार न किया जाय तो अनाचार और अत्याचार बराबर बढ़ते रहेंगे।

समाज को उन्नत बनाने के लिये यह बहुत आवश्यक है कि स्त्री और पुरुष—दोनों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाय। दोनों ही समान रूप से समाज के स्तम्भ हैं। इन दो में से एक स्तम्भ के टूटने पर दूसरा स्तम्भ समाज के पतन को रोक नहीं सकता। वह गिरेगा और नष्ट-भ्रष्ट होगा। इस लिये समाज के शुभचिन्तकों को बुद्धिमानी से काम लेने की जरूरत है। प्रसन्नता की बात है कि आज की शिक्षा और सभ्यता इस के संबंध में बड़ी सावधानी के साथ काम ले रही है।

यहां पर स्त्रियों की आपस की बातों पर मैं कुछ प्रकाश डालना चाहती थी, संयोगवश दूसरी अनेक बातें भी यहां आकर सम्मिलित हो गयीं। मेरा अपना अनुभव बताता है कि समाज ने जिस छोटी-सी सीमा के भीतर स्त्रियों को रखा है, उस में उन का जीवन उन्नत नहीं बन सकता। आपस में मिलकर, वे आवश्यक और महत्वपूर्ण बातें नहीं करतीं। उन के हृदय बहुत छोटे हो गये हैं, इसीलिए जीवन की छोटी और पतित बातों में ही उन को रह जाना पडता है।

मैं अपनी प्रत्येक बहन से कहना चाहती हूं कि जीवन में अश्लीलता और पतन की अवस्था सर्वत्र मिलेगी। त्रुटियाँ सभी के साथ होती हैं। उन को देखना और उन्हीं पर दृष्टि रखना नीच मनुष्यों का काम होता है। त्रुटियां, धूल डालने के लिये होती हैं। जो स्त्रियाँ, दूसरे की गड़ी हुई भूलों को खोदने का काम करती हैं और दुर्गन्ध फैलाने का प्रयत्न करती हैं, वे स्वयम् नीच होती हैं। वे दूसरों को नीचता में देखना चाहती हैं। परन्तु वे स्वयम् उतनी नीच होती हैं, जितना कोई भी पापी मनुष्य नीच हो सकता है।

इस लिए इस प्रकार की प्रवृत्ति प्रत्येक स्त्री को छोड़ देनी चाहिए। यह स्वभाव अच्छा नहीं। प्रकृति ने स्त्रियों को पवित्र बनाया है। इस का प्रमाण यह है कि अश्लीलता से स्त्रियों को स्वभावत: अरुचि होती है। स्त्रियों के स्वभाव में प्रकृति ने इस लिये लज्जा उत्पन्न की है कि वे किसी दूसरे की अश्लीलता को कभी देखने की इच्छा न करें।

ईमानदारी की बात यह है कि इस के सम्बंध में स्त्रियों का जीवन बहुत अंशों में पतित मिलता है। वे एक, दूसरे की बुराइयों को सुनने में सुख अनुभव करती हैं। यह बहुत बुरी

बात है। स्त्रियों की यह प्रवृत्ति, स्त्री-समाज को कभी ऊंचा नहीं बना सकती। हम स्वयम् अपने समाज के पतन की कारण हों, इस से अधिक हमारे लिए लज्जा की और क्या बात हो सकती है।

एक बात और। अपने काम-काज से छुट्टी पाने पर स्त्रियां जब एक, दूसरे से मिलती हैं तो वे रोटी, चौका, और चूल्हा के सिवा और कुछ बातें आपस में नहीं करतीं। मैंने बराबर इस प्रकार के अवसर देखे हैं। मैं प्रायः सोचा करती हूं कि स्त्रिया अपने जीवन में ऊंचे विचार क्यों नहीं रखतीं ? उन्हें चाहिए कि देश और समाज की अवस्था का अध्ययन करें और उन्हीं को लेकर, वे आपस में बातें करें। अपने जीवन को उन्नत बनाने के लिए और समाज तथा संसार के निकट सम्मान पाने के लिये उन्हें सीमित जीवन छोड़ना पड़ेगा। यदि हमारी बहने ऐसा नहीं करतीं तो वे स्वयम् अपने अधःपतन का करण बनती हैं।

जिन त्रुटियों और कमजोरियों के कारण आज स्त्री-समाज बदनाम है, उन पर स्त्रियों को दृष्टि डालनी चाहिए और जैसे भी हो सके, उनको दूर करने की उन्हें चेष्टा करनी चाहिये। जीवन को उन्नत बनाने के लिये कुछ साधन होते हैं, उनसे लाभ उठाना प्रत्येक स्त्री का धर्म है।

परदे की प्रथा के कारण पुरुषों से स्त्रियों का दूर रहना अच्छा नहीं हुआ। बिना किसी द्वेष के हमे यह स्वीकार करना चाहिये कि जीवन की कितनी ही बातें पुरुषों में अच्छी मिलती हैं। अध्ययन के द्वारा पुरुष अनुभवशील बनते हैं। स्त्रियाँ उनके सम्पर्क मे आकर अपने जीवन को बहुत-कुछ पूर्ण बना सकती है। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से

घृणा करे, मैं इसे अच्छा नहीं समझती। परदे की प्रथा ने स्त्री और पुरुषों के बीच में एक ऊंची दीवार खड़ी कर रखी है। इस का फल यह हुआ है, कि दोनों ही एक दूसरे से अपरिचित हो रहे हैं। और यह भी उसका परिणाम है कि एक दूसरे के संसर्ग से जो लाभ मिलना चाहिये, उस से दोनों को वंचित रहना पड़ता है।

संसार के जीवन में बिना प्रवेश किये न किसी को अनुभव प्राप्त होता है और न कोई अनुभवी बनता है। स्त्रियों को दूर रखने की व्यवस्था जो समाज में बहुत दिनों से चली आ रही है, उस ने हम स्त्रियों को अयोग्य और अनुभवहीन बना दिया है। समाज की इन प्रथाओं और व्यवस्थाओं के प्रति स्त्रियों को स्वयम् विद्रोह करना पड़ेगा। इसकी आवश्यकता न केवल स्त्रियों की उन्नति के लिये है, बल्कि समाज को एक स्थायी शक्ति देने के लिए भी इस की बड़ी जरूरत मालूम होती है।

—:o:—

अश्लीलता मनोरंजन नहीं है

मनोरंजन के सम्बन्ध में पिछले पन्नों में बहुत-सी बातें लिखी जा चुकी हैं। विनोद और मनोरंजन से मनुष्य के जीवन में जो लाभ पहुंचाता है, उसका मैंने समर्थन किया है और इस बात पर जोर दिया है कि उदासीनता और गम्भीरता के स्थान पर मनोरंजन अधिक उपयोगी है।

हंसना, प्रसन्न रहना स्वास्थ्य के लिये एक औषधि के स्वरूप में है। जो लोग मनोरंजन प्रिय होते हैं, वे अधिक संख्या में स्वस्थ और नीरोग पाये जाते हैं। जो लोग प्रायः उदास रहा करते हैं- अथवा अप्रसन्न रहते हैं उनका स्वास्थ्य

क्षीण रहता है। इस प्रकार की बातें मैंने विस्तार के साथ पिछले पृष्ठों में लीखी हैं। उनके संबंध में अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है किन्तु मनोरंजन के नाम पर हमारी समाज में एक भ्रम पूर्ण वातावरण चल रहा है। उस के संबंध में मैं यहां पर कुछ स्पष्ट रूप से लिखना चाहती हूं।

समाज ने मनोरंजन को आवश्यक माना है। इसके अनेक प्रमाण आंखों के सामने हैं। स्त्रियों और पुरुषों में मनोरंजन का एक स्वभाविक गुण है, उस से वे जो कुछ लाभ उठाते हैं, उतना ही संतोष-जनक नहीं है। समाज ने स्त्रियों और पुरुषों में मनोरंजन के लिए कुछ विशेष नियम बना रखे हैं। जिनके कारण स्त्रियों और पुरुषों को उसे स्वीकार करना ही पड़ता है।

स्त्रियों और पुरुषों के संबंध अनेक प्रकार के होते हैं। सभी के अर्थ अलग अलग होते हैं और उन के उपयोग भी विभिन्न रूप में पाये जाते हैं। उन सम्बन्धों में कुछ ऐसे भी है जिनमें स्त्रियों और पुरुषों को एक दूसरे के साथ हंसी मजाक करने का नियमित अधिकार मिलता है। जिन सम्बन्धों में हंसी-मजाक होता है, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

१—साले का बहनोई के साथ, बहनोई की बहनों के साथ।

२—बहनोई का साले के साथ, साले की बहनों के साथ और साले की पत्नी के साथ।

३—साली और बहनोई में।

४—देवर और बड़ी भावज में।

५—समधी और समधिन में।

६—मामी और भांजे में।

इस प्रकार के सम्बन्धों में विनोद के नाम पर जिस प्रकार का व्यवहार होता है वह मनोरंजन के रूप में ही नहीं रहता। स्पष्ट रूप से वह अश्लीलता का रूप धारण करता है। मैंने इस प्रकार के सम्बन्धियों के मजाक अधिक नहीं सुने। फिर भी इनके साथ मेरा थोड़ा बहुत परिचय तो है ही। इन सम्बन्धियों में जिस प्रकार अश्लीलता का व्यवहार होता है वह केवल हिन्दू समाज में ही नहीं है, अन्य जातियों में भी कहीं पर कुछ कम और कहीं अधिक पाया जाता है। मुससलमानों में तो है ही अंगरेजों में भी कुछ इस प्रकार की आदत पायी जाती है।

इन बातों पर विचार करने से मालूम होता है कि मनो-रंजन की आवश्यकता को अनुभव करते हुए समाज को इस प्रकार के नियम बनाने पड़े हैं। ये नियम कब बने और किस आधार पर बने अथवा किस ने बनाये, इस का कुछ पता नहीं चलता। समाज में जिस विशेषता के साथ ये बातें पायी जाती हैं, उन से मालूम होता है कि उन के भीतर कुछ रहस्य अवश्य है ।

किसी भी अभिप्राय से समाज को इस प्रकार के नियम बनाने पड़े हों, लेकिन इन सम्बन्धों में अश्लील बातें करने का जो नियमित अधिकार दिया गया है, नैतिक रूप से उस का अर्थ समझ में नहीं आता। जिस प्रकार की बातें इन सम्बन्धियों में होती हैं अथवा हो सकती हैं, उन्हें मनोरंजन नहीं अश्लीलता कहना पड़ेगा।

सामाजिक नियम होने की बात है। इस लिए न तो स्त्रियाँ बुरा मानती हैं और न पुरुष। यदि इसप्रकार का नियम न होता तो जिस प्रकार की गन्दी बातें होती हैं वे कभी भी

सम्भव न होतीं। अश्लीलता के इन व्यवहारों को देखकर और सुनकर कभी-कभी बड़ी घृणा पैदा होती है। बहुत कुछ सोचने पर भी मै नहीं समझ सकी कि इस अश्लीलता का अभिप्राय क्या है। समाज ने नियम बना कर उन के सम्बन्ध में स्त्रियों और पुरुषों को जो अधिकार दे रखें हैं, उस का क्या मतलब है ?

समाज एक ओर अश्लीलता और गन्दगी का विरोध करता है और दूसरी ओर इस प्रकार का नियम बनाकर लोगों को अश्लील बनने के लिये एक मार्ग खोलता है। ये दोनों वरोधी बातें है। अश्लीलता जीवन का आदर्श नहीं है। मनोरंजन मानव जीवन के लिए बहुत जरूरी है। लेकिन अश्लीलता को मनोरंजन नहीं कहा जा सकता। जिन बातों से सहज ही लोगों को घृणा होती है और जिस घृणा को समाज ने स्वयम् उत्पन्न किया है, वही घृणा नियम बनकर प्रथाओं के रूप मे व्यवहार मे लायी जाय, यह एक असश्चर्य की बात है। समाज मे जहाँ पर इस प्रकार को अश्लील बातों का प्रचार है वहा का दृश्य कभी-कभी अप्रिय बन जाता है। भाइयों और बहनों और गुरुजनों के सामने भी स्त्रियाँ स्वयम् अश्लीलता को स्थान देती हैं और इस लिए देती हैं कि जिन के साथ वे गन्दी बातें करती हैं, वे, उन बातों का अधिकार रखते हैं। समाज की यह अवस्था बहुत विचित्र मालूम होती है।

जिन लोगों के सामने जीवन की गन्दगी छिपायी जाती है, उन्हीं के सामने कुछ सम्बन्ध स्त्री और पुरुषों को गन्दी बातें करने का अधिकार देते हैं। देवर और भावज एवम् साली और बहनोई के सम्बन्ध तो कभी-कभी बहुत ही

अश्लील हो जाते हैं। समाज की यह अवस्था बुद्धि से परे है। सत्य के साथ एक प्रकार, हत्या करना है। बुद्धिमान स्त्री-पुरुषों को इस अश्लीलता का सदा विरोध करना चाहिये व्यावहारिक बातों में इस अश्लीलता का नियम जिस प्रकार। काम में आता है, वह समाज में नियम के रूप में नहीं है। फिर भी व्यापक रूप में उस का प्रचार है। इसे अच्छा नहीं कहा जा सकता।

सामाजिक नियमों मे अश्लीलत का यह अधिकार कहीं लिखा हुआ देखने में नहीं आता। समाज ने उसे कहीं पर आदर्श के रूप में उपस्थित नहीं किया। और न विद्वानों ने अपने लेखों में कहीं उस का समर्थन ही किया है। फिर भी उस का प्रचार है। यह एक आश्चर्य की बात है।

एक विचित्र बात यह है कि जो बातें समाज के विरुद्ध और सर्वथा निन्दनीय समझी जाती हैं वही अनेक स्थानों पर नियम और प्रथा के रूप में व्यवहार मे आती है। उस समय उनकी अश्लीलता लोगों को अश्लीलता के रूप में दिखायी नहीं देती। एक भद्र परिवार की बात है, एक महाशय अपनी ससुराल आये थे, वे अपनी साली और सरहजों के साथ बैठे हुये बातें कर रहे थे, संयोग से मुझे वहाँ जाना पड़ा था और महाशय जी की बातें सुनने का मुझे संयोग मिला था। दो सयानी लड़कियाँ उनकी चारपाई के निकट बैठी हुई बातें कर रही थीं। एक का विवाह हाल ही में हुआ था और दूसरी अविवाहित थी। महाशय जी जो बातें उन के साथ कर रहे थे, उनमे पूर्ण रूप से केवल भ्रष्टता थी। आश्चर्य की बात तो यह कि घर की बूढ़ी स्त्रियाँ और सयाने आदमी सुनने पर भी उनको बुरा इसलिये न समझते थे कि

उनके सम्बन्ध में प्रथायें अनुकूल हैं। इन अश्लील बातों के सम्बन्ध में प्रचलित प्रथाओं के कारण अश्लील बातें करने का वे अपना अधिकार समझते हैं।

एक बात इसके सम्बन्ध में और भी स्पष्ट है। यों तो समाज में अधिकांश रूप में इसका प्रचार है ही और सभी प्रकार के स्त्री-पुरुष उन्हें व्यवहारिक रूप देते हैं, किन्तु यह सत्य है कि मूर्ख स्त्री-पुरुषों और निम्न श्रेणी के लोगों में यह अश्लीलता अधिक है। इसका अर्थ यह होता है कि मूर्खता से ही इसका संबंध है।

मनुष्य-समाज में बहुत प्राचीनकाल से अश्लीलता क जीवन जो चला आरहा था, ऐसा मालूम होता है कि यही उसका बिगड़ा हुआ रूप है। सामाजिक व्यवस्था ने अश्लीलता और गंदगी को मिटानेका कार्य किया है और बहुत कुछ उसे सफलता भी मिली है। उसकी चेष्टा के बाद भी जो अंश अश्लीलता का बाकी रह गया है। वह समाज के सामने इस रूप में है।

हिन्दुओं में रामायण का बहुत महत्व है। बड़ी संख्या में लोग उसे भक्ति पूर्वक पढते हैं और रामायण के सम्बन्ध-में स्त्री और पुरुष अनेक प्रकार की कहानियां कहते हैं रामायण के विरुद्ध वे कोई भी बात सुनना नहीं चाहते किन्तु सीता और राम का आदर्श लोगों के साथ कितना है, सीता लक्ष्मण की सगी भावज थी, लक्ष्मण उनका बहुत सम्मान करते थे, और उनके सामने सिर उठाकर खड़े होने एवम् सामने देखने का साहस न करते थे। सीता और लक्ष्मण की बातों में कहीं पर भी वह अश्लीलता नहीं दिखाई देती जो आज देवर और बड़ी भावज के बीच में पाया जाता है। हिन्दुओं

के आदर्श तो रामचन्द्र हैं, सीता और लक्ष्मण हैं। फिर वे अश्लीलता का आदर्श कहां से ले आते हैं। जो गंदगी इन सम्बन्धों में आज पायी जाती है, वह कहीं पर भी हमारे सामने आदर्श के रूप में नहीं है।

संतोष की बात यह है कि वर्त्तमान शिक्षा और सभ्यता ने इस अश्लीलता को महत्व नहीं दिया। जो स्त्री-पुरुष नवीन शिक्षा और सभ्यता के अनुयायी हैं, वे सर्वथा इस गंदगी से दूर रहने की कोशिश करते हैं। इसके संबंध में इतना ही नहीं है। शिक्षित स्त्री-पुरुष इस अश्लीलता से घृणा करते हैं। और उनसे भी घृणा करते हैं, जो इस अश्लीलता को व्यवहार में लाते हैं। इससे यह तो स्पष्ट ही मालूम होता है कि समाज की यह गंदगी दिन पर दिन घट रही है और वह दिन निकट है जब इसका अस्तित्व मिटता हुआ दिखायी देगा।

शिक्षित और बुद्धिमती स्त्रियों से अत्यन्त नम्रता के साथ मैं कहना चाहती हूं कि वे इस अश्लीलता को मिटाने में समाज की सहायता करें। प्रत्येक स्त्री इस बात को जानती है कि यह अश्लीलता गंदी है, अच्छी चीज नहीं है। फिर भी इसे वह मानती इसलिए है कि उसे वह एक नियम और प्रथा समझती है। इसलिए स्त्रियों को इसके संबंध में बुद्धि से काम लेने की जरूरत है।

एक सीधी सी बात यह है कि कोई भी अश्लीलता अश्लीलता है। समाज का नियम कभी भी उसकी आज्ञा नहीं देता। समाज में किसी अनुचित प्रथा का जारी होना और बात है। किंतु वह प्रथा समाज की प्रथा नहीं बन सकती। स्त्रियों को सर्वथा इन बातों से दूर रहना चाहिए और उनका विरोध करना चाहिए।

फैशन का रोग

कई वर्ष की पुरानी बात है बालिका विद्यालय की एक प्रधान अध्यापिका से मुझे मिलने का संयोग प्राप्त हुआ। मिलने पर अनेक प्रकार की बातें हुईं। उन दिनों में मेरे संपादन में कमलिनी मासिक पत्रिका प्रकाशित होती थी। उस पत्रिका में स्त्री उपयोगी साहित्य ही अधिक रहता था। अनेक प्रकार की बातें करने के बाद प्रधान अध्यापिका ने कमलिनी की बात उठाई और वे मुझसे कहने लगीं—

क्या मैं आपसे कमलिनी के सम्बन्ध में कुछ बातें कर सकती हूं?

मैंने कहा—अवश्य।

कमलिनी मैंने देखी है। लेकिन ....।

मैं उनके मुंह की ओर देख रही थी। कमलिनी की बात मेरी बात थी। बड़ी सावधानी के साथ मैं सुनना चाहती थी। इसी समय उन्होंने फिर कहा—लेकिन उसके सम्बन्ध में कुछ मेरा विरोध है।

"आपका विरोध?"

"जी हाँ मैं कुछ विरोध रखती हूं और उसके सम्बन्ध में मैं आपसे कहना चाहती हूं।"

"कहिए, उस में जो त्रुटि होगी, उसके सुधार की मै चेष्टा करूंगी।"

"त्रुटि की बात नहीं है, सिद्धान्त की बात है।"

"यह क्या?"

प्रधान अध्यापिका ने कहा—इस बीसवीं शताब्दी में भी स्त्रियों की पत्र-पत्रिकायें अलग होंगी और पुरुषों की अलग?

मैंने चुपचाप सुना और सुनी हुई बात पर मैं कुछ सोचने लगी। मेरा सम्पूर्ण शरीर अवसन्न होगया था। मेरे कानों में बार-बार गूंजने लगा, स्त्रियों की पत्र-पत्रिकायें अलग होंगी और पुरुषों की अलग ?

बात सच्ची थी। कुछ देर तक मैंने कुछ उत्तर न दिया। मैं बार-बार सोच रही थी। इसी समय प्रधान अध्यापिका ने फिर कहा—इसका अर्थ यह है कि स्त्रियों का भोजन भी कुछ और होना चाहिये। जिंदगी की सभी चीजें अलग से बनानी चाहिये। इससे स्त्रियों का कितना हित होगा ?

कुछ देर तक सोचने के बाद मैंने स्वीकार किया कि स्त्रियों का जीवन समाज से दूर नहीं रह सकता। जिन्दगी की जरूरी चीजें सभी की एक होती है। शिक्षा और सभ्यता को बाँटकर स्त्रियों के लिए अलग और पुरुषों के लिए पृथक नहीं किया जा सकता। यद्यपि मेरा यह उद्देश्य कभी नहीं रहा। फिर भी उन्हों ने मुझसे जो कुछ कहा मैंने उसे समझा और कुछ सत्य भी पाया। इसी बात को लेकर उनमें कुछ देर तक बातें हुईं।

उस समय से लेकर आज तक मैंने स्त्री-जीवन को ठीक-ठीक समझने की चेष्टा की है। बात वास्तव में यह है कि आज का संसार जहा पहुँच चुका है, वहाँ पर स्त्रियों का काम संकुचित सीमा के भीतर न चलेगा। उन्हें अपने जीवन को विस्तार देना पड़ेगा। अनेक प्रकार की शक्तियों को लेकर जीवन का निर्माण करना पड़ेगा। कोमलता ही हमारे जीवन की सम्पत्ति नहीं है। संसार का स्वरूप जीवन की कोमलता को स्थान नहीं देना चाहता। समाज में आज स्थान उनका है, जिनमें बल है। आज का साहित्य जोर से चिल्ला कर कह रहा

है, संसार निर्बलों के लिए नहीं है।

इस अवस्था को देखकर यदि स्त्रियाँ फैशन के पीछे ही पड़ी रहेंगी तो काम न चलेगा। जीवन-का संघर्ष उनका स्वागत करता है। स्त्रियां यदि उससे डरती रहेंगी, तो भविष्य में भी उनका स्थान वही रहेगा, जो अतीत काल में रह चुका है।

मैं खूब जानती हूं, स्त्रियां सौन्दर्य को अधिक महत्त्व देती हैं। मै यह भी जानती हूँ, प्रकृति ने स्त्री के लिये सौन्दर्य उत्पन्न किया है। इसमें सन्देह नहीं कि स्त्री स्वयम् सौन्दर्यमयी होती है। परन्तु आँखें बन्द करके जीवन में चलने से काम न चलेगा हमें समझना पड़ेगा कि हमारे जीवन की आवश्यकतायें क्या हैं और वे किस प्रकार की हैं। समय और आवश्यकता के अनुसार अपने आपको बदलना मनुष्य का कर्त्तव्य है। यदि वह ऐसा नहीं करता तो विरुद्ध परिस्थितियों का सामना उसे करना पड़ेगा। स्त्री-जाति का इतिहास हमारे सामने जीवन की एक कटुता उत्पन्न करता है।

हमारे सामने एक ओर जीवन का संघर्ष है और दूसरी ओर हमारी अबोध अवस्था है। स्त्रियों में सौन्दर्य के प्रति एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है। इस प्रवृत्ति ने ही उनको फैशन का रोगी बना रखा है। स्त्री-समाज फैशन के पीछे पड़ा है और पड़ा है, आँखें बन्द करके। सौन्दर्य की बढ़ती हुई लालसा ने फैशन की वृद्धि कर दी है। इसका फल यह हुआ है कि स्त्रियों का फैशन सौन्दर्य का परिचय न देकर अधिकांश रूप में उन के एक रोग का परिचय देता है। स्त्रियों की यह एक बढ़ती हुई निर्बलता है जिस पर विचार करना प्रत्येक स्त्री का धर्म है।

यदि गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाय तो यह अवस्था

हमारे जीवन की एक समस्या बन जाती है। मनुष्य का जीवन एक भयंकर कठिनाई को आज पार कर रहा है। खाने और कपड़े की समस्या एक भयंकर समस्या बन गई है। हालत यह हो गई है कि यदि एक मनुष्य ईमानदारी से काम लेना चाहे तो उसको न तो कपड़े का ठिकाना है और न भोजन का, खाने के जो पदार्थ साधारण रूप में भी मनुष्य के लिये आवश्यक थे उनका लोप हो रहा है। आज अवस्था यह है कि जो कुछ मिलता है, उसी को पाकर जीवित रहने की चेष्टा करनी पड़ती है।

दूसरा प्रश्न हमारे सामने कपड़े का है। समाज में गरीब और अमीर सभी प्रकार के लोग होते हैं। दोनों के बीच में आज किसी प्रकार का अन्तर नहीं रह गया। सरकारी नियमों और कानूनों ने दोनों को एक ही स्थान दिया है। यदि किसी के पास रुपये अधिक हैं और चोरी अथवा बेईमानी से वह धन-सम्पन्न बन गया है तो भी वह अपने रुपये-पैसे से अधिक लाभ नहीं उठा सकता। इस प्रकार के आज सरकारी कानून हैं। यह दूसरी बात है कि मनुष्य वर्तमान कानूनों की परवाह न करे और बेईमानी से संचित धन का उपयोग करके अपने आप को सुखी बनाने की कोशिश करे।

यह अवस्था आज मनुष्य जीवन के सामने बड़ी भयानक हो गई है। परन्तु स्त्रियों के जीवन में इसका कोई विशेष प्रभाव नहीं है। वे आज भी फैशन के पीछे पड़ी हैं। जिस प्रकार के वस्त्रों को पाकर, वे सुखी हो सकती हैं, उनका जुटाना और प्राप्त करना एक मुश्किल काम हो गया है।

स्त्रियाँ दो प्रकार की हैं। कुछ अमीर हैं और कुछ गरीब।

निर्धन और गरीब स्त्रियों के सामने साधारण कपड़े का प्रश्न है, जिससे वे केवल अपने शरीर को ढंक सकें और पैसे वाली स्त्रियों के सामने फैशन का प्रश्न है। मैं न जाने कितनी स्त्रियों को जानती हूं जिनके घरों पर रुपये की कमी नहीं है और रुपये के कारण ही उनके पास कपड़े की कमी नहीं है। बल्कि यह कहना अनुचित न होगा कि जरूरत से अधिक उनके पास कपड़े हैं फिर भी वे कपड़ों का रोना रोया करती हैं। इसी प्रकार की स्त्रियों में से एक ने बात चीत करते हुए कहा—

बहन जी, अब तो कपड़े का सवाल बड़ा कठिन हो गया है।

उसकी बात को सुन कर मुझे हंसी आई। मै जानती थी कि उसके पास अच्छे-से-अच्छे कपड़ों के कितने बक्स हैं। इसलिये मैंने कहा—आप को भी कपड़ों की जरूरत है ?

उसने कहा—हां, बहन जी, कपड़े मिलते ही कहाॅ हैं ?

मैंने पूछा—मिलते नहीं हैं तो फिर आप के पास इतने कपड़े कहा से आ गये ?

उसने हंस कर कहा—इतने कपड़ों से क्या होता है, किसी तरीके से काम चलाना पड़ रहा है।

मैंने कहा—आप उन स्त्रियों को जानती हैं जिनके पास नहा कर बदलने के लिये भी दूसरी धोती नहीं है ?

उसने कहा—वे गरीब स्त्रियां तो हमेशा से ऐसी ही रही हैं। आज उनके लिये कोई नई बात नहीं है। रही हम लोगों की बात, सो आप जानती हैं, कितने कपड़े आते रहे हैं और फिर भी हम लोगों को शिकायत थी कि कपड़े कम हैं। उन दिनों को याद कीजिये। अब बताइये, हम लोगों का

काम कैसे चलेगा!

"आप लोगों का काम ?"

"जी हां।"

"आप लोगों का काम चलने के लिए एक उपाय है। मैं बताऊं उसे ?"

मेरी बात को सुन कर वह बहुत प्रसन्न हुई। उसने समझा मैं उसे कोई ऐसा स्थान बताऊंगी, जहां से उसे मन-माने कपड़े खरीदने का मौका मिलेगा। मैंने कहा—

काम चलने के लिए एक उपाय यह है कि जितने कपड़े आप लोगों के पास हैं, वे सब छीन कर गरीब स्त्रियों को बांट दिये जायं और आप लोगों के पास दो धोतियों से अधिक किसी के पास न रहने पावें, फिर आपका काम बहुत अच्छी तरह से चलने लगेगा।

उसने हंस कर कहा—तब तो आपने बहुत अच्छा उपाय बताया।

पैसेवाली स्त्रियों में आज भी कपड़े की यह अवस्था है। घरों से बाहर निकलने पर स्त्रियों का जो मेला दिखायी देता है, उसे देख कर किसी को इस बातका विश्वास नहीं होता कि आज संसार मे कपड़ों का भयानक अकाल है। मुझे आश्चर्य यह होता है कि जिनके पास इतने अधिक वस्त्र हैं। जिनका इस्तेमाल करना कठिन है, वे एक क्षण के लिए भी आंखे खोल कर नहीं देखना चाहतीं कि कपड़ों के अभाव ने गरीब घरों और निर्धन परिवारों की क्या अवस्था बना रखी है। यह एक बड़े दुख की बात है।

स्त्रियों की यह अवस्था उनकी अनुदारता का परिचय देती है। ऐसा न होना चाहिए। यह प्रवृत्ति कभी भी प्रशंसा

नहीं पा सकती। जिनके पास खाने को हो, उन्हें उन घरों पर भी दृष्टि डालनी चाहिए, जहां खाने का अभाव है। इसी प्रकार, जहां वस्त्रों की अधिकता है, वहां यह सोचना एक आवश्यक कर्त्तव्य हो जाता है कि कपड़ों के अभाव से गरीब स्त्री-बच्चों की क्या दशा है। ऐसा- सोचना आवश्यक है और मनुष्य-जीवन का महत्वपूर्ण धर्म है! स्त्रियों को उदार बन कर अपने सम्मान की रक्षा करनी चाहिए।

स्त्री-जीवन का भविष्य

प्रचीन काल की अपेक्षा, स्त्रियों का वर्त्तमान अच्छा है। और जो कुछ वर्त्तमान है, भविष्य उससे भी सुन्दर बनेगा। यह निश्चित है। दिन-पर-दिन बदलता हुआ स्त्रियों का जीवन स्पष्ट रूप से इस बात की सूचना देता है।

मैंने स्थान-स्थान पर स्त्री-जीवन की विवशाता और निर्बलता पर प्रकाश डाला है। जीवन के इस सत्य को कभी न भूलना चाहिये कि निर्बलता और सबलता किसी के साथ जन्म से नहीं आती। जीवन की परिस्थितियाँ। उसकी कारण बन जाती हैं। सुविधाओं से बल मिलता है और असुविधायें, निर्बलता की कारण होती हैं।

दुर्भाग्य से हमारा प्राचीन युग उन्नत न था। उस युग में स्त्रियों को जिस प्रकार का जीवन बिताना पड़ा है, उसमें निराशा के सिवा और कुछ न था। कुछ लोग इस पर विश्वास नहीं करते। वे उन्नत भविष्य का हमेशा गाना गाते हैं। यह उनकी जानकारी की कमी है। स्त्री-जीवन का भविष्य केवल हमारे देश का ही भविष्य नहीं है। उसका सम्बन्ध है, सम्पूर्ण-स्त्री-जाति से। किसी एक देश की बात नहीं है, संसार

की समग्र जातियों और देशों का इतिहास स्त्री-जीवन की निर्बलता का परिचय देता है। यहां पर इतिहास से मेरा अभिप्राय है, प्राचीन इतिहास से।

ऊपर यह लिखा जा चुका है कि निर्बलता का कारण जीवन की असुविधायें और विरुद्ध परिस्थितियां होती हैं। किसी भी युग मे और किसी भी देश में यदि स्त्रिया दीन और दुर्बल होकर रही हैं तो उसका एक मात्र कारण उनके जीवन का विरुद्ध वातावरण था। इसके सिवा कुछ नहीं। मेरे सामने किसी एक देश की स्त्रियों की बात नहीं है। दूसरे देशों की स्त्रियों का पुराना इतिहास पढ़ने और जानने के बाद बार-बार कहने के लिये विवश होना पडता है कि प्राचीन समाज का ढंग और व्यवहार स्त्रियों के साथ अन्याय-पूर्ण रहा है।

आज उस मे परिवर्त्तन हुआ है। यह परिवर्त्तन किसी एक देश मे नहीं है, बल्कि प्रत्येक देश और प्रत्येक जाति मे है। जीवन के साधारण अधिकारों से भी स्त्रिया जिस प्रकार वंचित की गयी थीं आज उसका पूर्ण रूप से विरोध हो रहा है। स्त्रियों की अवस्था में एक क्रान्तिकारी परिवर्त्तन हो रहा है। वे शिक्षित और सुयोग्य बन कर विस्तृत जीवन में प्रवेश कर रही हैं और प्रत्येक व्यवसाय में अपना स्थान बना रही हैं।

पुरानी सभ्यता और प्रथाओं के पक्षपाती स्त्रियों की इस उन्नति को देख नहीं सकते। उनके विरोध सुनते-सुनते मेरे कान थक गये हैं और जी ऊब गया है। परन्तु किसी के विरोध करने से क्या होता है। समय के परिवर्त्तन को कोई रोक नहीं सकता। उसका रोकना किसी के बस में नहीं है। स्त्रियो की आज की स्वतन्त्रता स्त्री-जाति को शक्तिशाली

बना रही है, इस बात पर मेरा पूर्ण विश्वास है। इतना ही नहीं, आज का शिक्षित पुरुष-समाज स्त्रियों की शिक्षा और सभ्यता का पूर्ण रूप से समर्थक और सहायक बन रहा है, यह प्रसन्नता की बात है।

मैं स्त्रियों से बार-बार कहना चाहती हूं कि वे जीवन के सत्य का अध्ययन करें और मानव-जीवन को सुखी और सार्थक बनावें। परदे में बैठ कर दुर्भाग्य को रोने से काम न चलेगा। उन्हें खुल कर साहस के साथ क्षेत्र में आना चाहिये और देश तथा समाज को शक्तिशाली बनाना चाहिये स्वार्थ परायणता और अनुदारता जीवन की छोटी चीजें हैं, इसलिये बल पूर्वक इनको दूर करने की जरूरत है।

हमारे जीवन का भविष्य उज्वल है। हमें केवल अपने ही दुख और सुख के लिये जीवित नहीं रहना है। हमें बार-बार दूसरों की ओर देखना है और उदारता से काम लेना है।

यदि देश और समाज के सामने किसी प्रकार की आवश्यकता पड़ी है तो स्त्रियों को उसमें भाग लेना चाहिये। हमारे देश की स्त्रियों ने इसके सम्बंध मे अपनी जिन शक्तियों का परिचय दिया है, वह किसी से छिपा नहीं है। स्वतन्त्रता की लड़ाई में देश की स्त्रिया आगे बढी हैं और अनेक शताब्दियों की पराधीनता को मिटाने में उन्होंने बड़े-से बड़ा काम किया है। पुरुषों और स्त्रियों मे उन्होंने किसी प्रकार का अन्तर नहीं रखा।

इसी प्रकार यदि दुर्भाग्य से देश के किसी स्थान में जल की बाढ़ अथवा भूकम्प की विपद आई है तो स्त्रियों ने घरों से निकल कर पीड़ित समाज की सेवा और सहायता

करने का कार्य किया है। देश के सामने यदि युद्ध का प्रश्न पैदा हुआ है तो समर-भूमि में जा कर स्त्रियों ने योग्यता और साहस के साथ उन सभी कार्यों में हाथ बटाया है, जिनसे देश की स्वतंत्रता सुरक्षित हो सकती है।

पश्चिमी देशों की स्त्रिया युद्ध-क्षेत्र मे जाकर जिस प्रकार के कार्यों को कर सकी हैं, उनसे ससार आज अपरिचित नहीं है। इतना ही नहीं समाज को यह स्वीकार करना पड़ा है कि यदि किसी देशका स्त्री-समाज दुर्बल और अयोग्य है, तो वह देश किसी भी अवस्था मे अपनी स्वतंत्रता की रक्षा नहीं कर सकता।

स्त्री-जीवन का यह परिवर्तन हमारी उन्नति का एक बहुत बड़ा प्रमाण है। हमारी इस अवस्था में दिन पर दिन परिवर्त्तन होते जा रहे हैं। और जो परिवर्त्तन हो रहे हैं, उनके आधार पर इस बात को भली भाँति समझा जा सकता है कि स्त्री-जाति का भविष्य किस प्रकार उज्ज्वल है।

❀ समाप्त ❀